دي سگھڑبيوي حصه دوم

सुशिक्षिता स्त्री।

द्वितीय भाग।

जिसको

पञ्जाब टैक्सटबुक-कमेटी की आज्ञानुसार

पण्डित भानुदत्त विशारद ने उर्दू से हिंदी भाषा में उल्था किया।

और

मुन्शी गुलाबसिंह ने निज यन्त्रालय सुफ़ीद-आम लाहौर में छपाया।

150675

सन् १८९२ ई०

पहली बार २५० पुस्तक मूल्य प्रति पुस्तक ॥/)॥
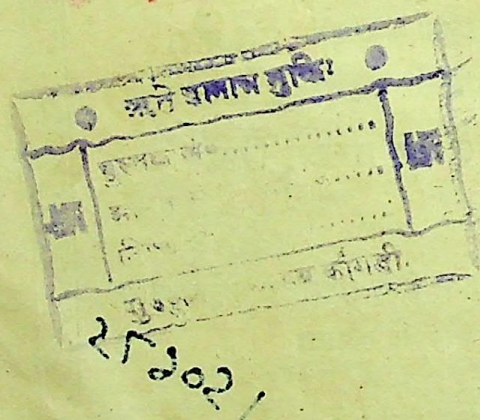
१म, अध्याय ।

हमारे रहने के घर ॥

हम १म, भाग में तुमें बताचुके हैं, कि ईश्वर ने मनुष्य को कौनसी पांच बड़ी २ निधियें प्रदान की हैं, और हमने उन के वर्ताओ का ढब भी ऐसा बता दिया है, कि जिस से हमारे घर के प्रत्येक निवासी को शुद्ध-पवन, निर्मल-जल, उत्तम-भोजन, उष्णता; और प्रकाश जितना चाहिये, मिल जाय, अब हम उन घरों का प्रसंग करते हैं, जो लोग अपने लिये बनाते हैं, और उस घर का जो ईश्वर हमारे लिये बनाता है, अर्थात् अपनी देह का जिस में हम जन्म लेने के दिन से मरण पर्यन्त रहते हैं, और इस संसारिक यात्रा के दिन काटते हैं।

यह साधारण नियम है, कि लोग सुगम बात का प्रसंग पहिले किया करते हैं, इस लिये हम भी पहिले उन घरों का प्रसंग करते हैं, जो लोग अपने लिये बनाते हैं, और जिन में सुख भोगते हैं। और १म, भाग की भूमिका में हम तुमें बता चुके हैं, कि सभ्यता के आरम्भ और उस की उन्नति के समय में इन का क्या कुछ फल हुआ है।

तुम जानती हो, कि मनुष्य ने पृथिवी के सम्पूर्ण भागों में इतने असंख्यात मन्दिरादि बनाये हैं, कि यदि हम उन की मोटी २ बातों का प्रसंग करें, तो दफ़्तरों के दफ़्तर बन जायें; सारी धरती को जाने दो, यदि हम केवल यूरुप और ऐशिया के ही हर्म्यों में से आधों का ही वर्णन करें, और उन के बनाने में जो बुद्धिमत्ता और परिश्रम मनुष्य ने प्रकट किया है, तुम्हें बतायें तौ भी कई बड़ी २ पुस्तकें बन जायें। भला इन को भी जाने दो, अपने हिन्दुस्थान के प्रसिद्ध २ प्रासा-

दों का विचार करें, तो यह भी इतने हैं, कि उन के वर्णन के लिये भी एक पुस्तक चाहिये। इस लिये अब हम प्रासादों का प्रसंग तो नहीं करते, वरञ्च हम सामान्य घरों का वर्णन करते हैं।

सारे घर चाहे वे हिन्दुस्थान में हों, वा इंगलिस्तान में, पञ्जाब के सूखे पड़पड़ों में हों, वा बरमा की दल २ में, एक बात में सब मिलते जुलते हैं, वह यह है, कि मनुष्य ने इन्हें अपने पसन्द और आवश्यकताओं के अनुसार बनाया है। जैसा कि मसजदें, मन्दिर और गिरजा, परमेश्वर की पूजा के लिये, मढ़ियें मृत देहों के दाबने के लिये, प्रासाद, अट्टालिका और छप्पर झोंपड़ियां और निर्धनों के विश्राम के लिये, और हर एक घर में चाहे ऊंचा राजप्रासाद हो, वा झोंपड़ी हो, सब से पहिले इस बात का विचार रक्खा गया था, कि इस में मनुष्य रह सके। हम इस छोटे से अध्याय में इस विषय का पूर्ण वर्णन करना चाहते हैं। इस

कारण हम घर की मोटी २ बातों का वर्णन करेंगे और घर से हमारा तात्पर्य्य ऐसे स्थान से है, जिस में मनुष्य आनन्द के साथ रह सके।

पहिले भाग में तुम पढ़ चुकी हो, कि प्राण रक्षा के लिये, पवन की सब से बढ़ कर आवश्यकता है, परन्तु आवश्यकता से बढ़ कर पवन भी हानिकारक है। इस लिये पवन का आधिक्य अर्थात् आंधी, मेंह, शीत और पलभर में ऋतु के कुछ का कुछ हो जाने के कष्ट से बचने के लिये मनुष्य को घर बनाने का विचार आया था, सो प्रतीत हुआ, कि घर कैसा होना चाहिये। घर में यह दो बातें अवश्य होनी चाहियें, एक तो इस में पूरा२ आश्रय मिले, दूसरे रहने वालों के लिये पूरा २ पवन आसके।

तुम यह भी जानती हो, कि प्रकाश भी जीवन के लिये आवश्यक वस्तु है, इस कारण घर भी वही उत्तम होगा, जिस में मन के प्रसन्न करने

वाली धूप के आने में किसी प्रकार की रुकावट न हो।

बड़े अचरज की बात है, कि प्रायः मनुष्य यह तो मानते हैं, कि घर में प्रकाश की बड़ी आवश्यकता है, परन्तु जो घर तुम ने रहने को बनाये हैं; उन में बहुत से ऐसे हैं, जिन में न तो पूरा २ पवन आसक्ता है, न प्रकाश।

नगरों में जहां खुला स्थान सदा नहीं मिल सकता, तंग गलियों के कारण अन्धेरी कोठरियां अवश्य बनानी ही पड़ती हैं, ऐसे घर बनाने में, कि जिन में स्वास्थ्य स्थिर रह सके, बहुधा काठिन्य आन पड़ते हैं, परन्तु गाओं में तो यह बातें नहीं। प्रायः देखा जाता है, कि हिन्दुस्थान में गाओं के घर नगर के घरों से कुछ भी अच्छे नहीं होते।

सच बात तो यह है, कि बहुत थोड़ों को इस बात का ज्ञान है, कि स्वास्थ्य स्थिर रखने के

लिये, वास्तव में कैसा घर होना चाहिये। यही कारण है, कि बहुतेरे मनुष्य देखते हैं, कि इन के चारों ओर सहस्रों डर की बातें हैं, जिन में कईयों का उपाय यदि वह जानते हों, तो कर सकते हैं, परन्तु वह वर्षों से निश्चिन्त बैठे हैं, इसलिये सुशिक्षिता स्त्री को सब से पहिले, इन बातों का ज्ञान करलेना आवश्यक है, जिन से वह अपने सामर्थ्य के अनुसार घर में हर प्रकार के सुख की सामग्री हस्तगत कर सके, अर्थात् घर ऐसा बनाये, जिस में इस का कुटुम्ब सुख से भोजन आदि कर सके, और सो सके, और उन्हें यह आशा हो, कि हमारी रक्षा और पोषण इस में भली भांत होगा। अब हम तुमें इन बातों के भली भांत समझाने के लिये मान लेते हैं, कि सुशिक्षिता स्त्री अपने तथा निज पति के तथा छोटे २ बच्चों तथा भृत्यों के लिये एक घर बनाना चाहती है। सब से पहिले इसे धरती देखनी चाहिये, और इस बात

का विचार रखना चाहिये, कि घर में सील न न रहे, क्योंकि सीली हुई पवन में सब प्रकार के छोटे २ कीड़े जो रोग उत्पन्न करते हैं, बहुत होते हैं। इस बात को कभी भूलना नहीं चाहिये, कि सब प्राण-धारी वस्तु जल से उत्पन्न होती हैं, और बहुत से छोटे २ जन्तु ऐसे हैं, कि जब वह अपने से बड़े जन्तु वा मनुष्य की देह में चले जाते हैं, तो उस की मृत्यु का कारण होते हैं।

इस लिये यदि सुशिक्षिता स्त्री को घर बनाने के लिये धरती की आवश्यकता हो, और उसे पृथिवी पसंद करने में किसी की रोक टोक न हो, तो वह ऐसा स्थान चुने, जहां किसी प्रकार का दोष न हो, कि धरती सूखी है, क्योंकि पक्की ईंटों की चुनाई भी सीलेपन को रोक नहीं सकती, इस कारण उसे ताल वा पोखरे के आस पास कोई स्थान मनोतीत न हो, यदि इसे डर है, कि धरातल के ढुलवान होने के कारण सील घर की

नीम में, अथवा उस के चारों ओर इकट्ठी हो जायगी, तो इसे सब से पहिले पानी निकालने के लिये मोरियां खोदनी चाहियें। परन्तु पंजाब के सूखे पड़पड़ों में जहां पानी बहुधा धरती के तल से बीस फुट नीचे होता है, धरती की नमी का बहुत डर नहीं है। परन्तु इस बात का प्रबन्ध आवश्यक है, कि घर के आस पास पानी इकट्ठा न रहे। दूसरे सुशिक्षिता स्त्री अपना घर किसी कूड़े के ढेर पर, अथवा उस के समीप कभी न बनाये, क्योंकि वह जानती है, कि पशुओं की मैल कुचैल, और विष्टा से ऐसे छोटे २ जन्तु उत्पन्न होते हैं, जिन से घरों में रोग फैलता है, और लोग मर जाते हैं। घर का मुंह इस भांत रहना चाहिये, कि सूर्य्य का प्रकाश उस में भली भांत आसके, और पवन सब में फिर जाया करे। परंतु हिंदुस्थान के उष्ण पड़पड़ों में चाहिये, कि एक वा दो छाया वाले वृक्ष अवश्य अंगनाई में लगे हों,

यह दुपहिर में आंखों को जला देने वाली धूप में बचाते हैं।

जब घर के लिये स्थान और दिशा मनोलीत हो चुकें, तो उसको यह विचार रखना चाहिये, कि कोठड़ियों के फरश किसी ऐसी वस्तु से बनाये जांय, जिसको वह साफ कर सके। क्योंकि वह जानती है, कि नित्य के कामों में सब प्रकार की मैली वस्तु फरश पर गिरती रहती हैं, यदि उठाई न जांय, तो वहीं की वहीं पड़ी रहेंगी, जैसे कि किसी बच्चे ने दूद का कटोरा मुन्धा दिया, यदि फरश मट्टी का है, तो दूध उस में गुम हो जायगा और चाहे ऊपर से सूक जाय, पर दूध नहीं रहेगा, और कुछ चिर के पीछे सड़ जायगा, और उस में से दुर्गंध आने लगेगी, इसी प्रकार सहस्रों वस्तुओं से मट्टी का फरश गन्दा हो सकता है, जिस का खोदने के सिवा और कोई उपाय नहीं। इस लिये सुशिक्षिता स्त्री को उचित है, कि फरश

अच्छा चूने का बनवाये, जिस को वह सदैव थोड़े दिनों के पीछे धुलवा सके, विशेष करके रसोई घर में इस बात का अवश्य विचार रखना चाहिये, क्योंकि वहां तो फरश अवश्य गंदा होता रहेगा। और वह भली भान्त जानती है, कि मारक कीड़े जो वस्तुओं के गलने सड़ने से उत्पन्न हो जाते हैं, यदि भोजन में मिल जांय, तो सहिज ही देह में प्रविष्ट हो सकते हैं।

अपने घर की भीतें बनाने में भी इस को यह सावधानी चाहिए, कि भीतरी भाग स्वच्छ हो, इस में कोई छिद्र ऐसा न हो, जहां मैल कुचैल वा कीड़े मकौड़े इकट्ठे हो सकें। इन भीतों पर कलई फिरवा देनी चाहिये, यदि कुछ मैल कुचैल इकट्ठी हो भी जाय, तो सहज प्रतीत हो सके। और स्वच्छ करदी जाय, भीतों का तल खड़ा होता है, इस पर ऐसी शीघ्र मलिनता इकट्ठी नहीं होती, जैसे धरतीपर हो जाती है।

इस कारण जितनी वेर फरश को साफ करते हैं, उतनी वार भीतों को साफ करना आवश्यक नहीं, परन्तु हां, नीचे २ की भीतें बैठने वालों की देह के संपर्क से मैली हो जाती हैं, उनका विचार आ-वश्यक है। जब खिड़कियों के बनाने की वारी आय तो वह केवल छोटे से शीशे, अथवा एक घन फुट छिद्र को ही यथेष्ट न समझें, वरञ्च खिड़कियां बनाने से पहिले वह उस कोठड़ी की लम्बाई चौड़ाई को मापे, और इस बात का भी विचार रक्खे, कि इस में कितने मनुष्य रहेंगे, क्योंकि प्रत्येक युवा मनुष्य को, पूरीर शुद्ध पवन मिलने के लिये दस फुट लम्बी दस फुट चौड़ी और दस फुट ऊञ्ची कोठड़ी चाहिये। और उसका ऐसा प्रबन्ध करना चाहिये, कि उस कोठड़ी का पवन घंटा भर में तीन वार बदल जाये, इस का प्रबन्ध सुघड़ स्त्री को इस भान्त करना चाहिये, कि ऐसा छिद्र जो लंबाई में ६ इञ्च और चौड़ाई

में ४ इञ्च से कम न हो, सदैव खुला रहे, जिसके द्वारा बाहिर से शुद्ध पवन भीतर आ सके, इसको छोड़ कुछ झरोखे भी बनाने चाहियें, जिन में से उष्ण पवन जो छत के पास होता है, निकल जाय, यदि स्थान छोटा होने के कारण प्रति मनुष्य दस वर्ग फुट स्थान न मिल सक्ता हो, तो खिड़की बड़ी कर देनी चाहिए, कि शुद्ध पवन और भी शीघ्र २ भीतर आ सके। इस प्रकार कोठरी का पवन घंटा भर में आठ अथवा दस बार बदल जायगा, इसके साथ ही उसे इस बात पर भी ध्यान देना उचित है, कि जाड़े के दिनों में शीत पवन के झोके भीतर न आसकें, क्योंकि जब वह देह से लगते हैं, तो देह का पसीना बहुत शीघ्र भाफ बन कर उड़ जाता है, और इस भांत ठंडक लग जाने से जुकाम और ज्वर का डर है, इस लिये उचित है, कि पवन के भीतर प्रवेश के लिये केवल एक ही बड़ी खिड़की न रहे, वरञ्च कई छोटीर

खिड़कियां बनाये, हो सके तो झिलमिलियां बनाए, जैसी सेज गाड़ियों और पालकियों में होती हैं, बड़ी खिड़कियों से यह भी लाभ होता है, कि मन प्रसन्न करने वाली धूप कोठड़ियों में आती रहती है, इस हेतु सुशिक्षिता स्त्री छोटी२ खिड़िकियां बनानी पसंद न करे।

थोड़ा ही काल हुआ है, कि इंगलिस्तान में सर्कार ने खिड़कियों पर महसूल लगाया था, कि यह एक आनन्द भोग की रीति, और धन का चिन्ह है, लोगों ने महसूल से बचने के लिये, जहां तक हो सका, खिड़कियें बंद करदीं; परन्तु अभी थोड़ा काल नहीं हुआ था, कि लोगों को प्रतीत हो गया, कि प्रकाश और पवन के न होने से क्या २ हानियें होती हैं, और सर्कार को भी स्वास्थ्य रक्षा के कारण महसूल हटाना पड़ा, परन्तु हिंदुस्तान में जहां कहीं ऐसा महसूल नहीं, बहुधा घर ऐसे बने हुए दीखते हैं, मानो महसूल के डर से बनाये

गये हैं। इन में केवल छोटे २ छिद्र होते हैं, जिन्हें खिड़कियां नहीं कहा जा सकता, और उन में से बहुत ही थोड़ा सा पवन और प्रकाश आ सकता है।

यदि सुशिक्षिता स्त्री निर्द्धन है, बड़ा घर नहीं बना सकती, तो उसे इतना तो अवश्य उचित है, कि सारे कुटुम्ब के मनुष्य एक ही कोठड़ी में न रहें; और न ऐसे स्थान रसोई पाएं जहां सोयें, वरंच इन कामों के लिये भिन्न २ कोठड़ियां हों, यदि भीतें उठाकर भिन्न २ कोठड़ियां नहीं बना सकती, तो एक ही कोठड़ी के बीच परदे डाल कर दो बना लेने चाहियें, क्योंकि यदि बालकों को बालकपन में बन जन्तुओं की भांत इकट्ठा रहना सिखाया जाय, और उन्हें नित्य २ नयी सभ्य रीति न बताई जाय, तो यह आशा नहीं, कि वह युवा होकर लज्जालु और शुद्ध पवित्र होंगे।

जब यह स्त्री स्वास्थ्य, स्वच्छता के संचार और प्रकाश का काम कर चुके, तो उसे यह न समझना चाहिये, कि बस अब घर की पूर्णता के लिये कोई बात शेष नहीं रही। नहीं, अभी एक बात और शेष है। यह तो वह जानती है, कि घर अच्छे स्थान पर है, उस को आज कल के एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार की उक्ति स्मरण कर रखनी उचित है, कि जहां कहीं हम निर्वाह कर सकें, वहीं सौंदर्य्यता कर लेनी उचित है"। कुछ यह आवश्यक नहीं, कि केवल काम की वस्तु ही घर में रक्खी जांय, कोई अधिक वस्तु न रहे, वरंच जहां तक हो सके अपनी निर्द्धनता के अनुसार घर को ऐसी वस्तुओं से जो सुन्दर हों जिन्हें देख कर मन प्रसन्न रहे शोभायमान् बनाए।

तुम कहोगी, कि सुन्दर वस्तु कौनसी होती हैं? और क्या कारण है, कि सुन्दर वस्तु देखकर जी प्रसन्न होजाता है, फुलवाड़ी देख कर उन में

क्यों सुख होता है, कीच कांदे से क्यों घिन आती है, जिस बालक के वस्त्र उजले और हाथ मुंह धुला हुआ होता है, उस पर क्यों प्यार होता है, और मैले कुचैले से क्यों हर एक घिन खाता है ? और मैले कुचैले से क्यों हर एक घिन खाता है, निस्सन्देह यह बात जानने के योग्य है, यदि हम तुमारे इस प्रश्न का पूरा २ उत्तर दें, तो प्रस्ताव बहुत बढ़ जायगा, और संभव है, कि अभी वह बातें तुमारे विचार में भी न आयें, इस लिये हम तुमारे सामने एक सर्वसाधारण नियम वर्णन करते हैं, जिसमें हम सबों के लिये, बड़ी भारी शिक्षा है। हमारे सृष्टिकर्ता दयालु परमेश्वर ने हमारे लिये यह नियम बांध दिया है, कि जो वस्तु हमारे देह की वृद्धि और बल बढ़ाने वाली और देह को पूर्ण करने वाली हैं, उन्हें देख मन प्रसन्न होता है, जो वस्तु हानिकारक हैं, उन से घिन करता है, अथवा यूं कहो, कि हमें लाभकारी वस्तु ही

बहुधा सुन्दर प्रतीत होती हैं, और हानिकारक वस्तु असुन्दर।

हां कई वस्तु ऐसी भी हैं, जो १म, तो हमें प्रसन्नता-जनक होती हैं, परन्तु पीछे उस आनन्द से बढ़कर चिन्तावान् करती हैं, और यह सिद्ध होता है, कि इन से हमारे सुख में कोई वास्तव उन्नति नहीं हुई, जैसे बालक मिठाई सामर्थ्य से बढ़ कर आनन्द से खाजाता है, परन्तु उस थोड़े से आनन्द के पलटे उसे इतना दुःख भोगना पड़ता है, कि सारी बातें भूल जाती हैं। परन्तु यह बातें बहुधा हमारी भूल से उत्पन्न होती हैं। स्वास्थ्य से सच पूछो तो यह तात्पर्य्य है, कि हमारे सारे प्रयोजन भली प्राकर सिद्ध होजायें,और हमें अपने आप को देख कर, और अपनी दशा को देख कर प्रसन्नता हो। एक बिल्ली का बच्चा दूध की कटोरी पीकर, और कुछ खेलकूद कर अपनी माता की गोद में धूप में लेटता है, और वह प्यार से उसे

चाटती है, तो म्यूं २ करता है, और अंगड़ाईयां लेता है। यह इस बात का उत्तम उदाहरण है, कि आनन्द के साधन होने से उन्हें कैसा पूरा २ सुख प्राप्त होता है। सच पूछो तो इस का जीवन स्थिर रहने के लिये, तो भोजन और खेलकूद ही बहुत है, परन्तु इस की मां के पेट का कोमल बिछौना उस की उष्णता, उस का प्रेम से चाटना, बड़ी सांत्वना और सुख देता है; जिस से उस छोटे से जन्तु को भोजन पचाने और जितने इस के अंग घिसते रहते हैं, उन्हें फिर पुरा कर देने में बड़ी सहायता मिलती है। इसी प्रकार जब हमारा कोई बालक प्रसन्न होता है, तो क्या वाहर करने लगता है। इस के मुख पर कैसी लाली आजाती है, और इस की आंखें कैसी प्रकाशमान होने लगती हैं, इस का कारण यही है, कि हर्ष का विचार इस की देह पर फल करता है, और इस से उस का रक्त तीव्ररूप से चलने लगता है,

और यही कारण है, कि इस की देह के प्रत्येक भाग में अधिक स्फुर्ति आजाती है, क्योंकि देह रुधिर से पलती है।

ऊपर के वर्णन से यदि भली भान्त तुमारी समझ में न आया होगा, फिर भी कुछ २ तो तुम अवश्य समझ गयी होगी, कि सुन्दर वस्तु स्वास्थ्य के लिये, क्यों लाभकारी होती हैं। भला ऐसा मनुष्य कौन है, जो यह बात नहीं जानता, कि चिन्ता और दुःख से भूख जाती रहती है, और नीन्द नहीं आती। परन्तु ऐसे बहुत कम मनुष्य हैं, और विशेष करके हिन्दुस्थान में, तो बहुत ही कम हैं, जो यह बात न जानते हों, कि सफ़ाई सुथरापन, शोभा, और सुशिक्षा से कैसा आनन्द उत्पन्न होता है, जिन के बिना यह नहीं कहा जा सकता, कि हमें पूरी २ नीरोगता प्राप्त है।

सुशिक्षिता स्त्री को उचित है, चाहे वह कैसी ही निर्धन क्यों न हो, परन्तु अपने सामर्थ्य

के अनुसार अपने घर को शोभायमान करे। यदि सफाई रीति के सिवा और कुछ नहीं बन पड़ता, तो यही ठीक है। इसी से सुन्दरता की बड़ी आवश्यकता घर में पूरी होजायगी, अर्थात् जिस काम के लिये घर बनाया गया है, वह काम भली भांत होजायगा, प्राय लोग यह आपत्ति दिखाते हैं, कि घर की मलीनता और अप्रबन्ध का कारण निर्धनता है, परन्तु सच पूछो, तो यह आलसी मलीन स्वभाव वाले मनुष्यों का बहाना है। निर्धनता से यह अवश्य नहीं, कि मलीनता उत्पन्न हो। बहुधा कुटुम्बी स्त्रियों को इतना समय मिल सकता है, कि अपने घर की वस्तुओं को नियमानुसार रक्खें, और बातों को जाने दो, इतना तो वह अवश्य कर सकती हैं, कि घर में कूड़ा इकट्ठा न होने दें।

अब तुम यह कहोगी, कि नया घर बनाने वाले के लिये अपना घर स्वस्थ रखने वाला और

सुख देने वाला बनाना बहुत सुगम है, परन्तु हम तो ऐसे ही घरों में रहते हैं, जो बेसमझ मनुष्यों के बनाये हुए हैं, बताओ हम क्या प्रबन्ध करें ? इन घरों में फरश मट्टी का होता है, जो तर और गन्दा रहता है। कुछ बड़ी२ खिड़कियां भी नहीं होतीं, कोठड़ियां केवल छोटी२ होती हैं, सीढ़ियां तंग, और अंधेरी। सुनो ! ऐसे घरों को भी स्वास्थ्य योग्य बनाने के लिये बहुत कुछ किया जा सकता है, और तुम को इस का ढब बताने के लिये हम मान लेते हैं, कि तुम किसी दो छत के घर में रहती हो, जिस के नीचे एक छोटा सा आंगन है अर्थात् जिस भांत के घर बहुधा नगरों में हुआ करते हैं। और घर तो घर वह गली भी बहुत तंग है,जिस में तुमारा घर बना हुआ है। चाहे इस गली की तुम मालक नहीं, परंतु इस को साफ़ सुथरा रखने में तुम यत्न कर सकती हो, जहां तक बन सके, तुमें इस

बात का यत्न करना चाहिये, कि किसी प्रकार की दुर्गंध इस में न रहे, क्योंकि तुमें स्मरण रहे, कि तुमारा घर कैसा ही चंदन सा क्यों न हो, यदि गली में से दुष्ट पवन इस में आती है, तो तुमारा सारा परिश्रम व्यर्थ है। विचार तो करो, कि एक शत्रु अर्थात् कारबानिक ऐसिड गैस (Carbonic acid gas) को अपने घर से निकाल देने का क्या लाभ, जब शुद्ध पवन के स्थान एक ओर इस से भी अधिक भयानक विष पवन के संग भीतर आजावे ? यदि चूहड़े जो नगर की कमेटी की ओर से नौकर हैं; तुमारी गली को साफ़ न रक्खें, तो तुम को चाहिये, कि सफ़ाई के दरोग़ह से इस की रिपोर्ट करो, परन्तु इसके साथ ही यह बात भी आवश्यक है, कि जहां तक तुम से हो सके, इस की सहायता करो, क्योंकि जब दुर्गंध पवन में एक वार प्रविष्ट होजाती है, तो बड़े से बड़ा चतुर चूहड़ा भी इस को साफ़ नहीं

कर सकता। यह तुमारा कर्तव्य है, कि पवन को कभी अशुद्ध न होने दो, यदि तुम सावधान रहो, तो इस विषय में बहुत कुछ कर सकती हो। निश्चय है, कि नगर की चाल अनुसार तुमारी गली के बीचों बीच में भी एक नाली बनी हुई होगी। यह नाली बहुत गहरी नहीं होती, पेच खाती हुई बड़ी गली वा बाज़ार की नाली से जा मिलती है। सब प्रकार का कूड़ा काटकर मैला कुचैला पानी धोन धान और बहुतेरे प्रकार की मलिनता इस में डाली जाती हैं। सुख के लिये प्रायः ऊपर की छत में एक छिद्र जिसे परनाला कहते हैं, बना हुआ होता है। इस में से भी इस प्रकार की मलिन वस्तु फेंकी जाती हैं। मलिन जल बून्द२ भीत पर गिरता रहता है, और बहुत काल के पीछे गली की मोरी में पहुंचता है, जहां यह नित्य भीत पर बहता रहता है, वहां काला दुर्गंधमय कीचड़ जम जाता है,

यदि घर बाहर से पक्का और कच्चा बना हुआ हो, तो उस गंधे पानी का बहुत सा भाग घर की नीम में धस जाता है, अथवा भीतों में रिसता रहता है, मोरियां गहरी नहीं होतीं, इन में कूड़ा करकट इकट्ठा होने से पानी रुक जाता है, और छोटे२ चौबच्चे से बन जाते हैं, जिन के किनारों पर सागपात के टुकड़े तरकारियों के छिलके अन्न के दाने, बचा खुचा भोजन देह की मैल कुचैल और इसी प्रकार का कूड़ा करकट इकट्ठा होता है। यह तुम जानती हो, सब जन्तु पानी से उत्पन्न होते हैं, इस लिये यदि यह कूड़ा सूखा रहे, तो अधिक डर नहीं, तर होते ही सड़ने लग जाता है, और रोग उत्पन्न करता है, जब भंगी रुके हुए पानी को अपने झाड़ू से साफ करने के लिये आवे, यह कूड़ा उस से पहिले ही सड़कर दुर्गंधमय कीचड़ बन जाता है। और इस में से सहस्रों विसीले कीड़े उत्पन्न होकर पवन में

प्रविष्ट होते हैं। तनक विचार और ध्यान रखने से इस भय का बहुत सा भाग दूर हो सकता है। तुमें यह बात प्रतीत हो चुकी है, कि धूप अच्छी सफाई कर देती है, और पंजाब के रहने वालों को उष्ण और रुच पवन से स्वास्थ्य में बड़ी सहायता मिलती है, धूप चाहे प्रकट में हमारे देहों को जलाती है, परन्तु इस से हमें बहुत लाभ होते हैं। यह बात प्रतीत होजाने के पीछे निश्चय है, कि सुघड़ स्त्री असावधानी से इस लाभ को यूहीं हाथ से न जाने देगी। वरञ्च विचार रक्खेगी, कि घर का सूखा कूड़ा करकट पानी में सड़कर विषाक्त न होने पाए।

इसे अपने घर के बाहिर एक स्थान नियत करना चाहिये, और हो सके तो मट्टी का छोटा सा चौतड़ा बनादे, जिस पर सारा कूड़ा करकट, और चूल्हे की भस्म सूखी पड़ी रहे, और जब तक उठाई न जाय, उसे पवन लगता रहे। और

एक इस को यह सावधानता चाहिये, कि सारा गन्दा पानी मोरी में जा पहुंचे, द्वार के बाहिर न फेंका जाय, कि बून्द २ टपकता रहे, और धरती में धस जाय। यदि ऊपर की छत का कूड़ा कर-कड़ और गन्दा पानी गली की मोरी तक पहुं-चाना कठिन हो, तो उस का प्रबन्ध यूं हो सकता है, कि घर की भीत में एक ऐसा परनाला बनाया जावे, जिस में से होकर पानी मोरी में जा पहुंचे, और इसे नित्य २ साफ करने की ऐसी ही आवश्यकता है, जैसे घर के और भागों की।

इस के सिवा सुघड़ स्त्री को यह भी विचार रखना चाहिये, कि और स्थान में मोरी चाहे कैसी ही टेढ़ी तिरछी क्यों न हो, परन्तु इस के घर के सामने सीधी हो, और ऊंची नीची भी न हो, कि उस में पानी न इकट्ठा होने पावे। जहां तक हो सके अपने पड़ोसियों को भी प्रेरणा करने में यत्न करे, कि वह भी इन्हीं नियमों

पर चलें, और उन्हें समझाये, कि विष उत्पन्न करना महा पाप है, क्योंकि इस से निरपराध मनुष्यों के प्राणों को हानि पहुंचती है।

सुघड़ स्त्री इस बात का और भी विशेष ध्यान रक्खे, कि द्वार जिस के सुधार रखने की आज कल चाल ही नहीं, साफ और सुथरा रहे। क्योंकि यहां पर मिलने वालों को मिलने से पहिले थोड़ा काल ठहिरना पड़ता है, और जिन के यहां पर्दे की रीत है, उन के हां जो लोग मिलने आते हैं, प्राय द्वार से आगे नहीं बढ़ सके। इसलिये इस स्थान को नियमानुसार सुधार रखना बहुत आवश्यक है, कि मिलने वालों को वहां ठहरना बुरा न प्रतीत हो, वरञ्च उन के जी में घर के विषय में उत्तम विचार उत्पन्न हो। यदि और कुछ न हो सके, तो फरश और भीतों को मट्टी ही से लीप कर साफ और समतल बनाये रखना तो अवश्य ही चाहिये।

अब तनक घरों के आंगन की ओर देखो, ऐसा कौन है; जिस को आंगन की वह दशा स्म-रण न होगी, जो नित्य वर्षा के पीछे हो जाया करती है। घुटनों तक मनुष्य दलदल में धस जाते हैं, और घर के भीतर जाने आने के लिये, लकड़ी के टुकड़े ईंटें, चौखट में से निकाला हुआ किवाड़ वा घास का पूला दलदल पर बिछाते हैं। प्रति-वर्ष यह कठिन दुःख सहते हैं; परन्तु शोक है कि इस का कुछ उपाय नहीं करते; इस कारण कि वह तनक ध्यान नहीं करते, कि पानी इधर उधर की छतों से गिर कर बिछने न पावे। ऐसे बेध्यान हैं, कि इस के वह जाने के लिये एक मोरी नहीं खुदवाते।

बहुधा ऐसा होता है, कि इसी आंगन में वर्षा बरसने से पहिले गाय अथवा भैंस बंधा क-रती थीं; इस के चारे का कूड़ा और गोबर वहां फैला हुआ होता है। इस कूड़े और गोबर पर

पानी पड़ने से, विसीले कीड़े इस में बहुत ही उत्पन्न होते हैं, और यह पानी वहीं आंगन में धस जाता है।

ऐसे आंगन से घरवालों को बहुत हानि पहुंचती है; क्योंकि यह ऊंचा नीचा और कूड़े कटकड़ से भरा हुआ होता है, जिसे घरवाले आलस से मोरी में नहीं डालते। यदि थोड़ी सी भी सावधानता की जाय, तो यही आंगन स्वास्थ्य और आनन्द का कारण हो सकता है। पहिले तो गाय वहां बांधनी ही उचित नहीं; यदि किसी काल में बांधने की आवश्यकता पड़ जाय, तो यह आवश्यक नहीं, कि सारा आंगन बिगाड़ दिया जाय। जो मनुष्य गाय रखते हैं, वह बहुधा बड़े निर्धन नहीं होते। कच्ची ईंटों के थोड़े बोरों से पशु बांधने के स्थान आध गज़ ऊंची प्राकार बन सकती है, शेष आंगन समतल किया जा सकता है। जिस से यह सुख होगा, कि मेंह के पीछे आंगन में कीचड़ न होने

पायेगी। यदि हो सके तो आंगन में एक अथवा दो छाया वाले वृक्ष लगाने चाहियें; और फूलों के पोदे इन से भी उत्तम हैं। चाहे तुम हंस कर यह कहोगी, कि हम धनी नहीं, इन फूलों को पानी देने के लिये भी कहार कहां से नौकर रक्खें? सुनो! कहार की कुछ आवश्यकता नहीं, घर का जितना मैला कुचैला जल हो, सब फुलवाड़ी में डाल देना चाहिये, क्यों, क्या यह मैला जल फुलवाड़ी में सूख कर घर वालों को हानि न पहुंचायेगा? नहीं, वरंच मैले पानी की मैल कुचैल के दूर करने की इस से अच्छी और कोई रीति नहीं।

पोदे इस को विषाक्त न होने देंगे, वरंच वह इस से पुष्ट होकर सुन्दर २ पुष्प उत्पन्न करेंगे, जिन से आंखों को तरावट पहुंचती है, और मस्तिष्क प्रसन्न होता है। हां फूलों की क्यारी को गोड़ते रहना, और इस में से घास काटते रहना आवश्यक है। इस काम को घर के बच्चे बड़े आनन्द से करेंगे,

क्योंकि ऐसा कौनसा बालक है, जो मट्टी और कुम-लाये हुए फूलों का बनावटी बाग़ बनाकर प्रसन्न नहीं होता ? जब घर के बालकों को अपना सचमुच का बाग़ चाहे वह थोड़े वर्ग फुट धरती में क्यों न हो मिल जायेगा, तो वह बड़े ही प्रसन्न होंगे, और बड़ी प्रसन्नता से इस की सेवा करेंगे।

यदि घर सारा कुटुम्ब के रहने सहने के काम में आता है, तो रसोई घर बहुधा नीचे ही में होता है, अच्छा चाहे कहीं हो, इस बात की विशेष सावधानता रखनी उचित है, कि स्थान शुद्ध रहे, चाहे पक्का फ़रश नहीं बनवाया जा स-कता, तो मट्टी के फ़रश को ही भली भान्त सम-तल करना, और लीप लेना चाहिये, और अन्यून वर्ष में एक वार इस के ऊपर २ की मट्टी खुर्च कर नई मट्टी डालनी चाहिये। यदि यह खुर्ची हुई मट्टी फूलों के पौदों की जड़ों में दबा देोगी,

तो उन में बहुत ही फूल फूलेंगे। थोड़े से पैसों की ईंटों और कुछ मट्टी के पाचों से बड़े काम की अलमारी बन सकती है, जिस के बन जाने से लून मिरच आदि मसाले की वस्तु मैली कुचैली चादर के लत्तों में बांधने की आवश्यकता न रहेगी, इसी भांत थोड़ी सी सुफेदी में और सारे घर सुफेद हो सकते हैं, और ईंटों के बने हुए कच्चे घर में खिड़की निकाल लेनी भी बहुत कठिन नहीं।

यह कुछ आवश्यक नहीं कि तुमारे नौकर ऐसी ही कोठड़ी में सोयें जहां बरसों से झाड़ू नहीं दी गई, जहां टूटी फूटी लकड़ियां और सड़े हुए चीथड़ों के ढेर हैं, जिन के पड़ा रहने देने की अपेक्षा फूंकदेना अच्छा है। ऐसा कौन मनुष्य है, जिसने ऐसी कोठड़ियें नहीं देखीं, जहां कोनों में हर प्रकार के कूड़े करकट के ढेर छत तक लगे होते हैं।

जिस भांत के घरों का हम वर्णन करते हैं, उनमें बहुधा ऊपर की छत पवन वाली होती है, और फरश चूने का होता है, परन्तु इसे भी लोग अपनी मूर्खता से अवश्य गंदा रखते हैं, अच्छी प्रारव्ध से धूप की उष्णा और स्वच्छ करने वाली कि-रणें यहां पड़ती हैं। और जहां बहुत पानी भी फैला हुआ नहीं होता, क्योंकि ऊपर पानी लाने में कष्ट पड़ता है। फिर भी जहां तक गंदगी से बुराई की जो जड़ है, यह स्थान भली प्रकार शुद्ध न रहेगा, तो स्वास्थ्य स्थिर रहनेकी आशा नहीं हो सकी, इस ओर से तनक चूक जाने से बुरे परिणाम निकलते हैं।

जहां पर्दा होने के कारण छत पर ही टट्टी बनानी आवश्यक है, वहां इस बात की बड़ी सा-वधानी चाहिये, कि प्रत्येक वस्तु साफ और स्वच्छ रहे। थोड़ी सी सूखी मट्टी चाहिये और कुछ समझ होनी चाहिये, फिर यह बात भली भान्त प्राप्त हो

सकती है, सच बात तो यह है, कि समझ और नियमानुसार काम करने से प्राय घर अच्छे स्वस्थ रखने के योग्य हो जाते हैं, और ऐसे सुन्दर निकल आते हैं, कि पहिले आशा न थी, परन्तु फिर उन्हें देख कर जी प्रसन्न होता है, परन्तु हिंदुस्तान में धनियों के घरों में भी उचित सफाई और सुख का प्रबन्ध बहुत ही कम देखने में आता है। प्रत्येक वस्तु टूटी फूटी और भूल से अस्थान में पड़ी हुई दृष्टि आती है। दीपकों का धूंआं भीतों को काला कर देता है, तेल की लकीरें मट्टी से पिसी हुई भीत में हर एक ताक के [illegible]खाई देती हैं, छत में जाले लटकते हैं, और यदि घर की खिड़की में कोई शीशा लगा हुआ है, तो वह ऐसा मैला है, कि उसमें से कुछ दृष्ट नहीं पड़ता। चिकें केवल एक ही कील में लटकी हुई होती हैं, पलंग के पाओं के छिद्रों में मोटी २ मट्टी भली भांत जमी हुई होती है। कोई वस्तु भी सुन्दर

शोभायमान नहीं दिखाई देती, जिस से विचार किया जाय, कि कभी इस घर को कोई सुधारत.. है। हां बहुधा एक पीतल के पात्र ऐसे नहीं होते, इन में सफाई चमक ऐसी होती है,कि आंख नहीं ठहर सकती। इस मलीनता और कूड़े कटकर से रोग फैलने और मृत्यु होने का संदेह होता है, स्वस्थ रखने वाला स्थान वही हो सकता है, जो सदैव शुद्ध और स्वच्छ रहे। वास्तव में स्वच्छ और शुद्ध घर वही कहलावेगा,जिसकी धरती साफ हो, तल, भीतें, छत और लकड़ी का काम सब साफ सुथरा हो, पवन का स्वच्छ होना भी कुछ कम आवश्यक नहीं, इस प्रबन्ध के पूरा करने के लिये हमें सावधानता रखनी उचित है, कि यह सड़ी हुई वस्तुओं में से होकर न आय॥

हमें इस बात के कहने से बड़ी चिन्ता होती है और यह बात सच्ची है, कि हिंदुस्तान के बहुधा नगरों के घर इन नियमों की प्रत्येक बात के वि-

रुद्ध होते हैं। और इस से भी बढ़ कर चिन्ता की यह बात है, कि इन घरों की यह दशा कुच्छ निर्धनता के कारण ही नहीं, क्योंकि शान्ति, परिश्रम और कुच्छ व्यय करने से हर एक मनुष्य जिसे इतना ज्ञात हो, कि जितना इस अध्याय के पढ़ने से हो सकता है, अपने तंग से तंग घरों को भी रौनकदार स्वच्छ शुद्ध और स्वास्थ्यकर बना सक्ता है॥

दूसरा अध्याय।

मनुष्य की देह

उन घरों का तो हम प्रसंग कर चुके, जो मनुष्य अपने लिये बनाते हैं और बना चुके, कि इनके बनाने में लोग कौन सी बड़ी २ भूलें करते हैं। अब हम उस घर की अवस्था वर्णन करते हैं, जो ईश्वर ने हमें दिया है, अर्थात् मनुष्य के देह का। पहिले अध्याय में हम ने उन घरों की भूलें बताई हैं, जो लोग अपने रहने को बनाते हैं, परंतु इस अध्याय में ऐसे घर का वर्णन है, जिस के साथ ही हम जन्मते हैं, और जिस में हम मरणांत रहते हैं, यह ऐसे आश्चर्य्य कारीगरी से बनाया गया है, कि हम देख कर अचम्भे में रह जाते हैं, और आरंभ से अन्त तक हमारे मुंह से स्तुति के सिवा और कुछ नहीं निकलता। इसमें हमें कोई वस्तु बुरी अथवा निकम्मी, वा दुःखदायी प्रतीत नहीं

होती। देह की सारी इन्द्रियें मिल जुल कर काम करती हैं, और अत्यन्त साधारण रीति से इसका उद्देश्य पूरा करती हैं।

किसी चलती कल की कारीगरी और लाभ जानने से पहिले हमें यह जानना आवश्यक है, कि यह किस काम के लिये बनाई गई है। इस बात के जाने बिना चाहे हम इसके बहुत से पुरज़े देख कर कैसे ही आश्चर्य्य हों, इसके काम की सफाई की कितनी ही बड़ाई करें, परन्तु इस के बनाने में जो कारीगरी हुई, उसको हम समझ नहीं सके, यदि यह कहें तो कुछ अयुक्त नहीं, कि संसार में मनुष्य की देह के तुल्य कोई उत्तम कल नहीं; इसलिये पहिले हमें यह जान लेना चाहिये, कि इस को क्या २ काम कर्तव्य हैं, फिर हम इस के सौंदर्य्य को समझने के योग्य हो जांयगे॥

इसका पहिला ही काम यह है, कि हमें चेष्टा करने की शक्ति दे, विशेष करके एक स्थान से दूसरे स्थान जाने की॥

इसका दूसरा काम अपने तईं पालना है, और चेष्टा से जो अंश क्षीण हो जाते हैं, उन के स्थान नये बनाना ॥

तीसरा काम यह है, कि हमें बाहर की वस्तुओं के जानने की शक्ति दे, अर्थात् देह इस योग्य हो, कि जिस संसार में यह चलता फिरता है, उसकी वस्तुओं को जान सके।

चौथा काम यह है, कि यह सन्तान उत्पन्न करने के योग्य हो, जिस से माता पिता के मरने पीछे वंश स्थिर रहे। इन चारों प्रकार के कामों को प्रत्येक प्रकारके जन्तु किसी विशेष सीमा तक कर सकते हैं,वह नन्हें २ से जन्तु भी जो एक जलके बिन्दु के समान होते हैं, अथवा अंडे की श्वेतता के एक बिंदु के तुल्य होते हैं,और जिन्हें हम बड़ी कठिनता से जान सकते हैं, कि यह जन्तु हैं, वह भी चेष्टा कर सकते हैं,भोजन पचाते हैं,कई वस्तुओं को प्रतीत कर सकते हैं, और सन्तान भी उत्पन्न

करते हैं। आश्चर्य्य की बात है, कि न उनमें हड्डी होती है, न पट्ठे, न आमाशय, न मस्तिष्क न किसी प्रकार के अङ्ग ॥

मनुष्य में और इन जन्तुओं में भेद केवल दरजे का है, न जाति का। परंतु तनक विचारो, कि जल के तनक बिंदु में जिस का जीवन कुछ गिनती में नहीं, और मनुष्य में जो एक बड़े कवि के कहने के अनुसार संपूर्ण सृष्टि का शिरोमणि है, अत्यन्त ही अन्तर है, और जहां तक हमें प्रतीत है, इस से बढ़कर और कोई प्राणधारी वस्तु नहीं।

१म, हम अपने शरीर के पहिले काम की ओर ध्यान देते हैं, और देखते हैं, कि परमेश्वर ने इसके पूर्ण करने के लिए क्या प्रबन्ध किया है।

पहिले भाग में प्रसङ्ग हो चुका है, हम अङ्गों के द्वारा चेष्टा करते हैं, और उन में सकुचने और लंबे होजाने की शक्ति होती है, यह पट्ठे अङ्गों को खेंच कर टेढ़ा कर देते हैं, और लंबे होकर सीधा।
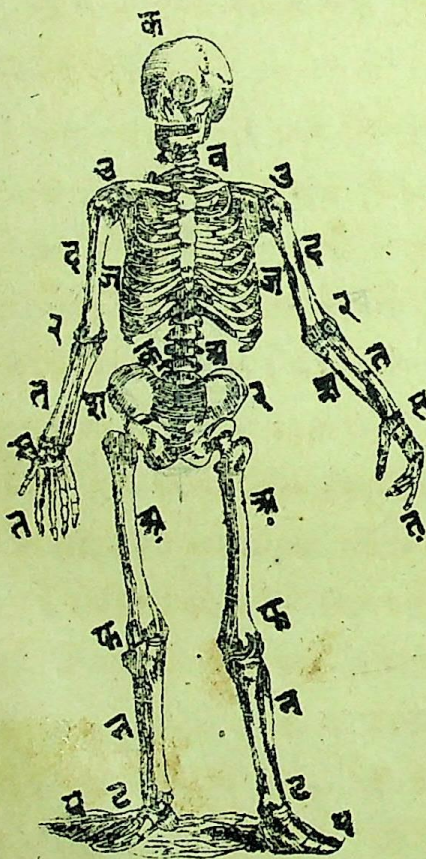
चित्र नम्बर १ पृष्ठ ४१

यह बात प्रकट है, कि जब तक पट्ठे हड्डियों से बन्धे हुए न हों, कुछ काम नहीं कर सकते। जैसा कि यदि तुम किसी वस्तु को रस्सी से खेंचना वा हिलाना चाहो, तो तुम को अवश्य वह रस्सी किसी वस्तु से बान्धनी होगी, नहीं तो चाहो तुम इस रस्सी को सदैव खेंचती रहो, कुछ भी न हो सकेगा। बस इसी प्रकार हड्डियों के विना पट्ठे सर्वदा निकम्मे हैं। इस लिये हम सब से पहिले हड्डियों के ढांच का जिस को मनुष्य पिञ्जर भी कहते हैं प्रसङ्ग करते हैं, मनुष्य की देह में २१० से कम हड्डियें नहीं और प्रत्येक का पृथक् २ नाम है। यदि सब के नाम और इन के काम बतायें, तो तुम सुनती २ थक जाओगी, इस लिये केवल मोटी २ बातें बता देनी आवश्यक हैं।

* चित्र नम्बर १

---

* इसी चित्र के अंक की भांत प्रत्येक चित्र में अंक लगे हुए हैं, सो इन्हीं के अनुसार पुस्तक के अन्तमें सभी चित्र यथाक्रम लिखे हैं।

(अ,ब) रीढ़,जिस के ऊपर कपाल। (क) है, (उ) हंसली। (ज) पसलियां, जो बहुधा हृदय के आमने सामने की हड्डी। (ल) में मिलती हैं। (ट) डौले की हड्डी। (सं) कोहनी। (स,श) बाहू के निचले भाग की हड्डियां। (स) कलाई के जोड़। (त) उङ्गलियां। (क) कोला। (अ) रान की हड्डी। (फ) घुटना। (न) पिंडली की हड्डियां (ट) टखने के जोड़ (प) पैर की हड्डियां।

सब से पहिले वर्णन करने के योग्य रीढ़ की हड्डी है। यह बड़े काम की है, क्योंकि इसमें कई स्थानों पर टेढ़ है, और इन्हीं के कारण मनुष्य खड़ा होकर चल सकता है। तुम को बता चुके हैं, कि पंछी,मछलियां रींगने वाले जन्तु और चौपायों में भी रीढ़ होती है, और उन में से बहुतों की रीढ़ ऐसी ही होती है, जैसे मनुष्य की। परन्तु उन में से कोई भी खड़ा होकर चल नहीं सकता। इस का कारण यह है, कि उनकी पीठ

की हड्डी मनुष्य की रीढ़ की भान्त मढ़ी हुई नहीं होती। तुम आप देख सक्ते हो,कि सिर को सहारा देने के लिये ग्रीवा बाहर को निकली हुई होती है,पीठ कटि तक भीतर की ओर झुकी हुई होती है, और फिर बाहर की ओर।

पीठ की हड्डी को एक स्तम्भ समझना चाहिये, जिस के सहारे हमारी देह थंमी हुई है। इसलिये यदि इसे तनक भी कष्ट पहुंचे, तो बड़ा भय होता है। यदि यह एक ही लम्बी हड्डी बनी होती अथवा इस में कई लम्बी अस्थियां जुड़ी होतीं,तो तनक आघात वा गिरने से इस को बड़ी हानि पहुंचती। यही कारण है,कि यह छब्बीस भिन्न २ टुकड़ों से बनी है, जो अत्यन्त कारीगरी से परस्पर जुड़े हुए हैं,और कोमल लचकीली गद्दियों से मढ़े हुए हैं, जो अचानक झटका लग जाने से भी हानि नहीं पहुंचने देते। इन सब के बीच में एक प्रकार का मार्ग है,इसके बीचों बीच

में रीढ़का भेजा जिसको हराम मगज़ कहते हैं, होता है और यह ऐसा सुरक्षित होता है, कि अत्यन्त कड़ी चोट के बिना इसको हानि नहीं पहुंच सकती। हराम मगज़ सिर के भेजे तक पहुंचा हुआ होता है, यदि इस को थोड़ी सी चोट भी लग जाय, तो मनुष्य में चेष्टा की शक्ति नहीं रहती। इस लिये परमेश्वर ने इस की उत्तम रक्षा कर दी है।

रीढ़ में और एक बड़ी बात है, जो सुघड़ स्त्री को विशेष करके स्मरण रखनी चाहिये। वह यह है, चाहे युवा पुरुष और युवा स्त्री की रीढ़ वक्र होती है, और उस के छब्बीस टुकड़े होते हैं, परन्तु बच्चे की रीढ़ जब वह उत्पन्न होता है, तो वक्र नहीं होती, इस के तेतीस टुकड़े होते हैं; उन बन्दरों की भान्त होती है, जिन का स्वरूप मनुष्यों से मिलता जुलता है।

जूं २ बच्चा बड़ा होता जाता है, इन में से नौ टुकड़े परस्पर जुड़ते जाते हैं, अन्त में जुड़ कर

उन के दो लम्बे टुकड़े बन जाते हैं । अब हमें स्पष्ट प्रतीत हो गया, कि किस प्रकार से बच्चा न सीधा बैठ सकता है, और न खड़ा होकर चल सकता है, तो और जब पहिले पहिल चलने का यत्न करता है, बन्दर की भान्त हाथों और पांओं के बल क्यों चलता है । इस से हमें यह भी प्रतीत हो गया, कि छोटे दूध पीने वाले बच्चे को बैठाना बड़ी भूल और उस को कष्ट देना है । बहुधा हिन्दुस्थान की स्त्रियों में यह बुरा स्वभाव होता है, कि बच्चे को अपनी भुजा पर बैठा कर लिये फिरती हैं । जहां तक हो सके, बच्चों को लेटे ही रहने देना चाहिये ।

पीठ की हड्डी से दूसरे स्थान पर पसलियां हैं, क्योंकि वह श्वास लेने वाले, और रक्त के संचार करने वाले अंगों के चारों ओर भीत की भांत खिची हुई हैं, और उन की रक्षा करती हैं । यह तो तुम जानती हो, कि पसलियां दोनों पहिलुओं

में कांख के नीचे होती हैं, और श्वास लेते समय वह किसी प्रकार ऊंची नीची होती रहती हैं। ईश्वर ने इस लचक का अत्यन्त निपुणता से प्रबन्ध किया है। इसी के द्वारा पवन फिफड़ों में प्रविष्ट होती है और बाहर निकलती है।

पसलियां केवल हड्डी की बनी हुई नहीं, वरञ्च इन का अग्रिम भाग जो छाती की हड्डी से जुड़ा हुआ होता है, करकरी हड्डी का बना हुआ है, यदि तुम करकरी हड्डी को नहीं जानती, तो नाक की हड्डी को छूकर देख लो; कड़ी हड्डी और मांस की नोक के बीच में एक दृढ़तर वस्तु है, जो दबाने से झुक जाती है, करकरी हड्डी यही है। तुम्हारे कानों का बहुतसा भाग भी करकरी हड्डी से बना हुआ है। केवल पसलियों को फैलाती ही नहीं, वरञ्च यदि कड़ी चोट भी लग जाय, तो इस के द्वारा आघात कम हो जाता है, यदि कड़ी हड्डी हुई, तो अवश्य टूट जाया करती।

तुम जानती हो, कि सिर की खोपरी में भेजा होता है, और देह के बाहर की सब वस्तुओं का ज्ञान मनुष्य को इसी के द्वारा प्राप्त होता है, और जिस आज्ञा से हमारे बहुत से अङ्गप्रत्यङ्ग चेष्टा करते हैं, वह इसी राजा की सभा से भेजी हुई होती है, तुम जानती हो, कि भेजे को तनक आघात लगने से भी बड़ी बुरी दशा हो जाती है, और अचानक गिर पड़ने से मस्तिष्क को ऐसा झटका लगता है, कि चाहे हड्डियोंको आघात न पहुंचे, फिर भी बहुत चिर तक अचेतनता रहती है, इसीलिये हम को अपने दयालु परमेश्वर की ओर से पूर्ण आशा है, कि इस ने हमारे कपाल अर्थात् मस्तिष्क की डिबिया बहुत अच्छी दृढ़ बनाई होगी, और वास्तव में ऐसा ही है। चाहे यह डिबिया जिन आठ हड्डियों से मिल कर बनी है, वह इसके पिण्ड की तुलना में पतली हैं, परन्तु परस्पर ऐसी दृढ़ जड़ी हुई हैं, कि फोड़ने के सिवा इन को बाहिर की ओर

से भिन्न कर देना असम्भव है। इन के भिन्न करने की केवल यह रीति है, कि शून्य कपाल को चनों से भर कर पानी से तर करते हैं, ज्यूं २ यह फूलते हैं, भीतर की ओर से कपाल के जोड़ टूटते जाते हैं। इस से प्रकट होता है, कि बाहर के आघातों से बचाने का प्रबन्ध परमेश्वर ने किस उत्तमता से कर दिया है।

भुजा और टांगों की अस्थियों का वर्णन तो बहुत कुछ है; इस समय हम मनुष्य के देह की अस्थियों पर केवल साधारण दृष्टि देते हैं, जिस से तुम को यह प्रतीत होजाय, कि यह अपने काम के लिये किस उत्तमता से बनाई गई हैं। और इन का काम यह है, कि देह के कोमल भागों को सुरक्षित रक्खें, इन को आश्रय दें, और अंगों के काम करने के लिये एक दृढ़ बन्द बनायें।

धड़ की अपेक्षा मनुष्य की भुजा और टांगें अधिक चेष्टा करती हैं, इस लिये इन की अस्थियां

लंबी और ठोस बनाई हैं, इन में कई स्थान जोड़ रक्खे हैं, कि चेष्टा करने में किसी प्रकार की रुकावट न रहे। जोड़ों की बनावट इस प्रकार है, कि एक अस्थि का सिरा गोल है, और दूसरी अस्थि के सिरे में कटोरे के रूप का एक गढ़ा है, पहिली अस्थि के कटोरे के भीतर ठीक आकर जुड़ गया है। अपने कन्धे के जोड़ में तुम स्वयं यह बात प्रतीत कर सकती हो, और देख सकती हो, कि इस प्रबन्ध से भुजा कैसे चुफेरे चक्कर खा सकती हैं। जिस भान्त गाड़ी के पहियों की धुरी में तेल देने से पहिये सहज ही चक्र खाते हैं, और घिसते टूटते नहीं, इसी भान्त देह के जोड़ों में भी एक प्रकार का तेल पहुंचता रहता है, जिस से वह चिकने रहते हैं, और जैसे चक्र की धुरी पर एक ढकना जिसे ढिबरी कहते हैं, चढ़ा हुआ होता है, वैसे ही इन जोड़ोंपर भी लचकीली करकरी अस्थि की पतली सी चपनी चढ़ी हुई है, कि यदि कोई झटका अथवा अचानक आघात पहुंचे तो हानि न हो।

अब तुमें प्रतीत होगा, कि परमेश्वर ने हमारे देह की बनावट में कोई बात शेष नहीं रक्खी, फिर इन जोड़ों के सिरों को नाड़ियों से ऐसा बांधा है, कि किसी प्रकार का आघात पहुंचने अथवा नाड़ियों पर बल पड़नेसे अंग टूट न जांय। कोहनी का जोड़ देखने से तुम्हें यह नाड़ियें प्रतीत हो सकती हैं।

हाथ और पाओं की अस्थियां ऐसी निपुणता से बनाई गई हैं, कि कोई वस्तु इसे बढ़कर स्तुति के योग्य नहीं,यदि हम इसका सारा वृत्तान्त वर्णन करें, तो बड़ा समय चाहिये। इस बात के सिद्ध करने में हम बहुत कुछ लिख चुके हैं, कि अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं।

नाड़ियों का वर्णन करने से पहिले यह भी संक्षेप रीति से बता देना योग्य है, कि देह में हड्डी क्यों कर बनती है। यह तो तुमें बता चुके हैं, कि हड्डियों का बहुत सा भाग चूना होता

है, और यह रुधिर में से निकलता है, परन्तु आश्चर्य्य की बात यह है, कि जब एक देह बनना आरम्भ होता है, तो पहिले पहिल हड्डी नहीं दिखाई देती। जब यह बात है, कि देह हड्डियों के ही आश्रय स्थिर है, तो अवश्य हमें यह विचार उत्पन्न होता है, कि ढांच अथवा इसका कोई भाग पहिले बनता होगा, परन्तु यह बात नहीं। हां इस में तो संदेह नहीं, कि जन्तुओं में ही हड्डी का बनना सम्भव है, और जब ध्यान से इस बात को विचारते हैं, तो प्रतीत होता है, कि यह हड्डियां देह के केवल व्यर्थ अंशों के इकट्ठा होने से बन जाती हैं। बुढ़ापे में जब देह निर्बल होजाता है, तो हड्डी बहुत बढ़ जाती है, इसलिये कह सकते हैं, कि हड्डी का बढ़ना केवल निर्बलता का चिन्ह है। इस बात से हमारे स्रष्टा की कैसी रचना, और चातुर्य्य प्रकट होते हैं। उसने ऐसा नियम बांधा है, कि यदि देह में दुर्बलता भी हो, तो इस

से यह लाभ निकल आता है, कि हड्डी बढ़ जाती है। इस प्रकार बुढ़ापा जिस देह को निर्बल करता है, उसे एक निधि भी देता है, यह बात तथा और कई बातें जो मनुष्य की देह के विषय में विचार करने से प्रतीत होती हैं, हम को यह सिखाती हैं, कि जीवन मृत्यु के आश्रय क्योंकर है, और क्षति से उन्नति होती है, अर्थात् देह की एक वस्तु के घिसने से दूसरी वस्तु को बल पहुंचता है। एक बड़े ग्रन्थ कर्ता का कथन है, कि मृत्यु एक उत्पत्ति है, जो प्रकट रीति से हम देखते हैं, इस का अर्थ यही है, कि देह के एक अवयव का विनाश होना, दूसरे अवयव की उत्पत्ति का कारण है।

अब हम मनुष्य की देह के पट्ठों का वर्णन करते हैं, जिन के द्वारा इस के भिन्न २ भाग एक एक दूसरे पर चेष्टा करते हैं।

देह में चारसौ के लगभग पट्ठे जिनको साधारण बोलचाल में मांस कहते हैं। तुम जानती

हो कि मांस किञ्चित् कालापन लेकर लाल होता है। तुम में से प्राय स्त्रियों ने चाहे मांस खाया न हो, परन्तु देखा तौ अवश्य होगा, कि काली सी लाल बोटी में श्वेत वर्ण के पर्दे होते हैं। यदि अधिक ध्यान से देखो, तौ प्रतीत होगा, कि वह वास्तव में मांस का एक ही बोटा नहीं, वरंच कई बोटियां मिली हुई हैं, जिन पर चांदी सी श्वेत झिल्ली लिपटी है, यह मांस की प्रत्येक बोटी एक पृथक् पट्ठा यदि तुम इसको एक सिरे से दूसरे सिरे तक देखो, तौ प्रतीत होगा, कि यह गो-पुच्छाकार होती जाती है, और इसके अन्त में एक ऐसी नाड़ी होती है, जैसे श्वेत २ चांदी की डोरी अथवा फीता। इन नसों से पट्ठे हड्डियों के साथ जुड़े होते हैं, बहुधा पट्ठों में ऊपर की और नीचे की नसें अर्थात् वह रस्सियां जो पट्ठों के दोनों ओर होती हैं, एक ही अस्थि से बंधी नहीं होतीं, और विशेष करके बड़े २ पट्ठों से तो सदैव ऐसा ही

होता है। यथा वह बड़ा पट्ठा जो भुजा के दूसरी ओर है, और कोहिनी के टेढ़ा करने से तुम्हारी भुजा के बीच में उभर आता है, और उस को तुम हाथ लगाकर भी देख सकती हो, वह ऊपर की ओर से कंधे की हड्डी के साथ दो पृथक् २ नाड़ियों से जुड़ा हुआ है और कोहनी के नीचे बाहर की अस्थि के साथ केवल एक नस से बन्धा हुआ है॥

अब हम यह समझाते हैं, कि इस पट्ठे से तुम कोहनी के जोड़ को किस भांत मोड़ सकती हो, फिर तुमारी समझ में आजायगा, कि सारी देह के पट्ठे किस प्रकार काम देते हैं; दूसरे और तीसरे चित्रों की ओर ध्यान से देखो। दूसरा चित्र इस दशा का है, कि भुजा निश्चेष्ट होकर नीचे को लटक रही है, और तीसरे चित्र में कोहनी को मोड़ने से क्या स्वरूप होता है, वह दिखाया गया है। दूसरे चित्र में देखलो, कि कन्धे की अस्थि के

चित्र ३, ४ पृष्ठ ५५

आकार पहिला

हड्डी
मछली
आ

आकार दूसरा
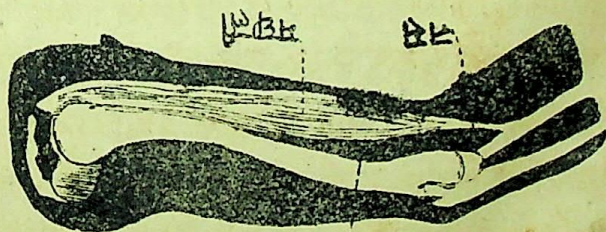
साथ मछली दो नसों से जुड़ी हुई है, और कोहिनी के नीचे की अस्थि के साथ केवल एक नस से बंधी हुई है। यह मछली इस चित्र में इस समय लंबी और पतली सी है। इस मछली को दूसरे चित्र में देखो, अब इस का स्वरूप सर्व पलट गया है, अब तो वह मोटा और छोटा सा होकर उभर आया है, और भुजा को ऊपर की ओर खेंच लाया है, और देखो, कोहनी के जोड़ के कारण भुजा सहज ही से मुड़ सकती है, जैसे किवाड़ कबज़े के कारण खुलता और बन्द होता है।

कोहिनी का मुड़ना केवल मछली के सुकड़ने की शक्ति पर निर्भर करता है। पट्ठा सुकड़ भी सकता है, और लंबा भी होसकता है, परन्तु अपने परिमाण को घटा नहीं सकता, इसलिये जितना लम्बाई में कम होता है, इतना ही चौड़ाई में अधिक होजाता है। यही कारण है, कि जब कोई पुरुष बड़ा भारी बोझ उठाता है, अथवा कोई

बड़े बल का काम करता है, तौ इस की देह के पट्ठे साफ़ उभरे हुए दिखाई देते हैं, जिन्हें तुम कहती हो मछलियां उभर आई हैं, चित्र को बड़े ध्यान के साथ देखो तौ प्रतीत होगा, कि यद्यपि मछली छोटी होगई है, परन्तु नाड़ियें इतनी ही लम्बी हैं। वास्तव में नाड़ियें केवल जोत का काम देती हैं, जिन से घोड़ा गाड़ी में जुता रहिता है। गाड़ी हिलाने जुलाने से इनको कुछ प्रयोजन नहीं, इनका काम तो केवल घोडे की शक्ति को गाड़ी तक पहुंचा देना है॥

सीने के सामने और पीछे की ओर की मछलियां बड़ी दृढ़ होती हैं, और पीठ की अस्थि के किनारों पर ऊपर से नीचे तक बहुत ही मछलियां इस अभिप्राय से लगी हुई हैं, कि जब सामनी ओर के पट्ठों से देह झुकाया जावे, तौ इसको उठा सकें। इसी प्रकार सिर, आंखें, जिव्हा और दांतों की चेष्टा के लिये मछलियां हैं।

इस बात के प्रकट करने के लिये, कि परमेश्वर ने नन्हीं २ बातों में भी हमारे सुख का विचार रक्खा है, देखो हमारे हाथ की हथेली में एक आश्चर्य पट्ठा है, जिस से हम तली को समेट कर, त्वचा पर झुररियां डाल सकते हैं, और पानी पीने के लिए एक कटोरा सा बना लेते हैं। इस पट्ठे में बड़ी आश्चर्य बात यह है, कि यह किसी अस्थि से बन्धा हुआ नहीं। देह के सम्पूर्ण बड़े २ पट्ठों के गिणने के लिये तो बहुत समय चाहिये। यदि हम केवल हाथ पर ही ध्यान करें, और सोचें, कि प्रत्येक प्रकार के नये काम करने की इस में अनन्त शक्ति है, तो हम को प्रतीत होगा, कि यह यन्त्र कैसी आश्चर्य निपुणता से बनाया गया है। कोई ऐसा काम नहीं जो यह न कर सके और इसी से हम पट्ठों की संख्या का वर्णन कर सकते हैं। और विचार कर सकते हैं, कि इसमें ऐसी पूर्णता उत्पन्न करनेके लिये कैसी बुद्धिमत्ता से मछलियों का क्रम बांधा होगा।

तुम जानती हो, कि किसी किसी समय पट्ठों के बहुत तन जाने से मोच आजाती है, जैसे जब तुम्हारा टखना मुड़ जाता है, तो मछलियों को स्वाभाविक लम्बाई की अपेक्षा से कुछ खेंच कर अधिक लम्बे होना पड़ता है, और इस लिये इन को हानि पहुंचती है। किसी २ समय मोच में एक पट्ठा दूसरे से उलझ जाता है और मिलने से सुख हो जाता है; परन्तु मोच का सब से उत्तम प्रतीकार विश्राम करना है, कि मुड़े हुए पट्ठे को स्वस्थ होने के लिये अवकाश मिल जाय, पट्ठे ऐसे बलसे सकुचते हैं,कि हड्डियों को हानि पहुंच जाती है, और इस हानि से बचने के लिये हड्डियों में बड़ा बल होना चाहिये। कई वार ऐसा हुआ है, कि केवल बल करने से अपनी हड्डी आप ही टूट गई है। हम ने अपनी आंख से देखा है, कि एक बालक व्यायाम करने में बल से ऊपर को उछला, और अभी धरती पर आकर नहीं टिका था,

कि ऊपर ही ऊपर उस की टांग के दो टुकड़े हो गये ॥

हम तुम्हें बता चुके हैं, कि मछलियों को नाड़ियों के द्वारा रुधिर का भच्यमिलता है, और यह नाड़ियें इनमें जालकी भांत विस्तृत हुई २ हैं, परन्तु मछलियों को हृष्ट पुष्ट और स्वस्थ रखने के लिये केवल रक्त ही की आवश्यकता नहीं, वरञ्च इन से कुछ काम भी लेना चाहिये, यदि किसी मछली वा अङ्ग से कुछ काल तक काम न लिया जाय, तो वह सुकड़ कर सूख जायगा। तुम ने देखा होगा, कि जिन मनुष्यों के अङ्ग चोट अथवा रोग से काम के नहीं रहते, उन की ऐसी हि दशा होजाती है। पहिले तो इस का परिमाण इतना ही रहिता है, परन्तु जिस अङ्ग को हानि पहुंची है, वह शीघ्र दुबला और सूख कर अस्थि रह जाता है, कई वार ऐसा होता है, कि मछली सब गुप्त ही हो जाती है। बहुधा देखा गया है, कि चिर रोग के पीछे जिस

में मनुष्य हर समय बिछौने पर हि लेटा रहता है, न चलने फिरने के कारण टांगें सूख कर तिन का हो जाती हैं।

इस से हम को यह सीखना चाहिये, कि यदि हम वैसा हि रहना चाहते हैं, जैसा परमेश्वर ने हम को बनाया है, तो हमें देह के प्रत्येक पठे से काम लेना उचित है। निश्शङ्क सुडौल रूप, सुन्दर स्वरूप लाभ करने की रीति यही है, कि देह के प्रत्येक भाग को नियमानुसार उचित सीमा तक व्यायाम कराना उचित है।

पठों का एक और गुण भी हम तुमें बताते हैं। याद रक्खो कि सारे पठे हमारे वश में नहीं; यदि कोई वस्तु अचानक हमारी आंख के बहुत निकट आजाय, तो हम अपनी आंख को कभी झपकने से रोक नहीं सकते। और देखो हम जब चाहें खांस सकते हैं, परंतु खांसी को रोकना सदैव हमारे वश में नहीं। बहुधा हम छींक को न रोक

सकते हैं, न बंद कर सकते हैं। इसी प्रकार आमाशय हृदय और नाड़ियों के पट्ठों पर भी निस्सन्देह हमारा कुछ वश नहीं। बहुत सी मछलियें ऐसी भी हैं, जो कुछ न कुछ हमारे वश में हैं, जैसे वह मछलियें जिन से हमारी छाती फूलती है, देखो कुछ चिर तक हम श्वास रोक सकते हैं, परन्तु फिर हमें पट्ठों के अधीन होना पड़ता है, इसलिये हम यह कह सकते हैं, कि एक प्रकार तो पट्ठे हमारे अत्यन्त उत्तम नौकर हैं, जो बिना कहे हमारे लिये सारे आवश्यक काम करते हैं, परन्तु कुछ न कुछ यह हमारे मालिक भी हैं, और सहस्र प्रकार हमें दुःखों से बचाते हैं। जैसे पपोटा जो बड़ा चंचल छोटा सा नौकर है, यदि हमारी आज्ञा की प्रतीक्षा करता रहे, तो अचानक आघातों से कितनी ही आंखें विनष्ट हो जांय, यदि आमाशय के अन्त पर पहिरा देने वाला पट्ठा न हो, जिस से तुम आगे चल कर जानोगी और बहुत से सुपाक

के अयोग्य भोजन को जिसके बड़े२ग्रास आमाशय में डाल दिये गये हैं, आंतड़ियों में कच्चा जाने से न रोके, तो कितने ही पेट भर कर खाने वाले मर जांय।

मनुष्य की देह में और भी कई वस्तु हैं, जैसे चमड़ा, पट्ठे आदिक; परन्तु उनको तुम आगे चल कर जानोगी। हमने अभी केवल इसके ढांच अर्थात् अस्थियों और बलिष्ट पट्ठों का जो इनको हिलाते जुलाते हैं,कुछ वर्णन किया है।

देह का १म, काम हमें हिलने जुलने की शक्ति देता है, और तुम स्वयं अपने जी में विचार ला सकती हो, कि हमारी देह इस काम में स्तुति के योग्य है, अथवा नहीं, यदि तुम चेष्टाविद्या का ज्ञान रखतीं, अथवा वह नियम जानतीं जिन के अनुसार सब प्रकार की कलें बनाई जाती हैं, तो तुम समझ सकतीं,कि अस्थियों और पट्ठों का क्रम कैसा इन विषयों के अनुसार है, सारी कलों का

नियम है, कि जब इन से बल का काम लेते हैं, तो वह घिस कर निर्बल होजाती हैं, परन्तु हमारे देह की कल में यह बात नहीं, वह घिसे बिना शक्ति उत्पन्न कर लेने का प्रबन्ध और निर्बल होने बिना सहस्र काम निकालने से प्रकट होता है, कि यह अति उच्च कारीगरी से बनाई गई है। निस्सन्देह यही बात है।

देह का दूसरा काम अपने तईं पालना है, और यह रक्त द्वारा होता है, इसलिये अब हम रक्त अर्थात् जीवन की नदी का वर्णन आरम्भ करते हैं॥

तीसरा अध्याय

रुधिर अर्थात् जीवन की नदी।

यह तो तुम सब जानती हो, कि रुधिर कैसा होता है, और तुम में से कई स्त्रियां ऐसी भी होंगी, जो पढ़ चुकी हैं, कि रुधिर किस भान्त हमारी देह में फिरता रहता है, और प्रत्येक भाग को भक्ष्य पहुंचाता है। तुममें से जो स्त्रियें अधिक विचार वाली हैं, उन्हों ने इसके कई २ गुण भी देखे होंगे, यथा जब किसी बड़े गहरे व्रण से रुधिर निकलता है, तो रुधिर का रंग बड़ा ही गाढ़ा रक्त-वर्ण होता है, और जब जराह निस्तर लगाता है, तो बैंगनी रंग के बिंदु सहज २ टपकते हैं, और एक रुधिर में आश्चर्य गुण है, कि पवन के लगने से फट जाता है, किञ्चित् कृष्ण-रक्त बोटियां सी अलग हो जाती हैं, और पतला पीला सा पानी

अलग होजाता है। तुम में से कईयों ने इस बात को अपनी आंख से भी देखा होगा।

परन्तु हे स्त्रियो! इन बातों का तत्व समझने के लिये तुमें इतना ही यथेष्ट नहीं। तुम को रुधिर की वास्तव दशा, और उसके कामों के विशेष वर्णन जानने चाहियें, आक्सीजन (Oxygen) से भरे हुए नीरोगी रुधिर का सारा वृत्तान्त समझने ही के लिये केवल विद्या आवश्यक नहीं, वरंच यह परले दरजे का मनोहर है। रुधिर का नाम किसी ने जीवन-नदी अत्यन्त उत्तम रक्खा है, इस के वर्णन में ऐसा आश्चर्य और अचरज परिवर्तन दिखाई देता रहता है, कि परियों की कथा सी प्रतीत होती है। जैसे रुधिर में पहिली आश्चर्य्य बात यह है, कि इस का रङ्ग और ही प्रकार का है; यदि किसी वस्तु को लग जाता है, तो इस का चिन्ह कठिनाई से छूटता है, यदि अणु-वीक्षण के नीचे रखकर देखें, तो रुधिर का वर्ण कठिनता से दि-

खाई देता है; वरंच पानी की भान्त कुछ वर्ण दिखाई नहीं देता और उसमें लाखों अत्यन्त क्षुद्र२ पीले२ परिमाणु होते हैं; जिनका रूप सरस के कच्चे बीज के तुल्य है, अर्थात् गोल और बीच में दोनोंओर से भीतरकी ओर धसे हुए होते हैं; अथवा यूं विचार लो, कि एक चपाती के किनारे बहुत मोटे २ हैं और बीच में से पतली है, चाहे इस उदाहरण से इन का रूप तुम्हारी समझ में भली प्रकार आगया होगा।

यदि इन छोटे २ दानों को अणु-वीक्षण से भिन्न २ देखें, तो फीके पीत वर्ण से दिखाई देते हैं और जब बहुत से इकट्ठे देखें, तो रक्त-वर्ण दिखाई देते हैं। यह अत्यन्त सूक्ष्म दाने रक्त में ऐसे असंख्यात होते हैं, कि यह सदैव इकट्ठे ही दिखाई देते हैं, इस कारण रुधिर सदैव रक्त-वर्ण ही दिखाई देता है। इन की संख्या इतनी अनन्त है, कि इस का प्रमाण तुम इस बात से कर सकती हो, कि यदि कबूतर के खाली अण्डे को रुधिर से भरें,
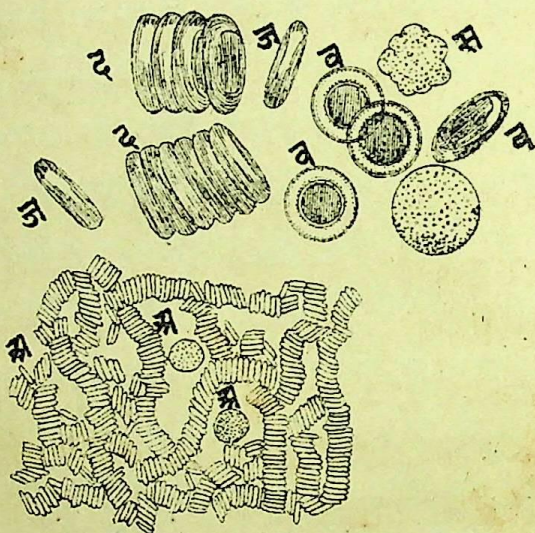
चित्र नम्बर ४ पृष्ठ ६७

तो इस में यह दाने इतने होंगे, कि संसार में स्त्री पुरुष और बच्चे नहीं। और यह दाने ऐसे पास पास मिल कर रहते हैं, कि यदि इन्हें सूई से उठाया जाय, तो उसकी नोक पर पांच सहस्र दाने आजायेंगे।

हम तुमें बता चुके हैं, कि उन सब जन्तुओं की रक्त का वर्ण,जिन की पीठ में अस्थि होती है, लाल होता है, और यदि हमें पीला अथवा अवर्ण रुधिर दिखाया जावे, तो हम परिणाम निकाल सकते हैं, कि यह किसी ऐसे जन्तु का रुधिर है, जिसमें अस्थि का ढांच नहीं।

चित्र नम्बर ४

रुधिर के रक्त और श्वेत दाने।

वास्तव की अपेक्षा चित्र में बढ़ाकर बनाये गये हैं॥

(अ) लाल दाने जो एक दूसरे के साथ पालों में लगे हुए हैं।

परन्तु ध्यान से देखने वाली स्त्रियों को रुधिर कुछ और बात भी बताता है, क्योंकि बहने वाले बहुत सूक्ष्म दाने, जिनको रुधिर के दाने भी कहते हैं, पिण्ड और रूप में एक से नहीं होते। मनुष्य तथा और सब जन्तुओं के रुधिर में जो अपने दूध से बच्चों को पालते हैं, यह दाने गोल होते हैं, परन्तु

(अ १) दो श्वेत दाने हैं, क़द वास्तव की अपेक्षा कुछ एक अधिक है।

(इ) लाल दाने (अ) की अपेक्षा, इन का पिण्ड बहुत बड़ा दिखाया गया है।

(उ) एक रक्त वर्ण दाना, जब किनारे की ओर से देखा जाय।

(ऋ) रक्त दानों की कतार बहुत बढ़ा कर।

(ए) एक श्वेत दाना वास्तव से इतना ही अधिक जितना (इ) से।

(ओ) एक श्वेत दाना जिसके कौने निकल कर रहे हैं।

पक्षी, रींगनेवाले जन्तु और मछलियों में, अथवा यूं कहो, कि इन सब जन्तुओं में जो अंडे देते हैं; इन दानों का रूप अंडे का सा होता है।

इस विद्या से बहुत बड़े २ काम निकले हैं, एक बार किसी मनुष्य ने पुलिस में यह प्रकट किया, कि मेरा पड़ौसी जिसकी मुझ से शत्रुता थी, मुझ पर आपड़ा, और इसने मुझे बहुत मारा, और अपने वर्णन के सिद्ध करने के लिए इस ने रुधिर के भरे हुए कपड़े आगे रक्खे। परन्तु जब कपड़े हसपताल में पहुंचे, और डाक्टर साहिब ने देखा, कि रुधिर बहुत है, और इस के ऐसा बड़ा घाव नहीं, तो उस के जी में संदेह हुआ और अणुवीक्षण से उन्हों ने सिद्ध किया, कि रुधिर के चिन्हों के दाने गोल नहीं, वरञ्च अंडे के रूप के हैं, इसलिये यह मनुष्य का रुधिर नहीं। फिर तो अर्थी जी घबराये, और डाकटर साहिब के इस प्रकार जान लेने से जिस का इसे विचार तक भी न था, लज्जित

होकर मान लिया, कि अपने शत्रु को फंसाने के लिये एक कुकड़ी को मार कर अपने वस्त्रों पर रुधिर छिड़क लिया था, और मार पीट की बात झूठी है ॥

अब तुमें निश्चय होगया होगा, कि विद्या किसी न किसी समय वर्ताओ में भी बड़ी सहायता देती है, चाहे रुधिर के दानों का रूप, जैसा छोटी सी ही बात क्यों न हो, इसलिये उचित है, कि जब तक तुम युवा हो और सीखने का अवकाश मिले,जहां तक हो सके अपना ज्ञान बढ़ाओ; स्मरण रहे, कि प्रत्येक स्वभाविक वस्तु जो तुम देखती हो,इसके उत्पन्न होने का कोई न कोई कारण अवश्य होता है, और कारण भी उत्तम होता है।

सो जब कभी तुमें कोई नई वस्तु दिखाई दे, अथवा किसी पुरानी वस्तु में नई बात सूझे, तो प्रतीत करो कि इसका सिद्धांत क्या है,और इस बात

को भी स्मरण रक्खो, कि प्रत्येक वस्तु के उत्पन्न होने और उसके काम का कोई न कोई उत्तम कारण अवश्य होता है। इसलिए तुम को भी इस साधारण नियम का अनुसरण करना उचित है, कि तुम्हारा कोई काम अथवा वचन वा विचार जहां तक सम्भव हो, उत्तम युक्ति से शून्य न हो।

तुमें अभी बताया है, कि सारे दूध पिलाने वाले जन्तुओं के रुधिर के दाने गोल होते हैं, परंतु एक प्रकार के जन्तुओं में नहीं होते, अर्थात् ऊण्ट जैसे समस्त जन्तुओं में पक्षियों के रुधिर की भांत अंडे के से रूप के दाने होते हैं। इस का कारण प्रतीत नहीं, परन्तु निःसंदेह इस का कुछ कारण अवंश्य है, और सम्भव है, कि निपुण मनुष्य इस को भी शनैः २ जानलें, क्योंकि प्रत्येक वस्तु के प्रतीत करने से ही मनुष्य की विद्या बढ़ती है॥

आश्चर्य्य बात है, कि यह दाने सब जंतुओं में एकसे क़द के नहीं होते, और सब से बड़े

जन्तुओं में यह सब से बड़े नहीं होते, वरंच इसके विरुद्ध मेंडक के रुधिर के दाने मनुष्यों के दानों की अपेक्षा दस गुणे बड़े होते हैं। तुम यह सुन कर और भी आश्चर्य्य होगी, कि दानों के क़द से हम जन्तुओं के स्वभाव प्रतीत कर सकते हैं, क्योंकि यह नियम है, कि जिन जन्तुओं के दाने क़द में बड़े और गिनती नें कम होते हैं, वह सुस्त और भद्दे होते हैं, और जिनके दाने छोटे और गिनती में अधिक होते हैं, इनमें बल साहस, और फुर्ती अधिक होती है; इस बात से हमें ज्ञात होता है, कि रुधिर के छोटे २ दाने क्या काम देते हैं, तुम पढ़ चुकी हो कि प्रत्येक चेष्टा उष्णता के द्वारा होती है, उष्णता के लिये इंधन चाहिए, और जलने से पहिले इंधन को आक्सिजन (Oxygen) की आवश्यकता होती है, इसी लिए चंचल जन्तु को भद्दे की अपेक्षा अधिक आक्सिजन (Oxygen) चाहिये, इस से सच्ची बात का पता लग जाता है,

कि यह नन्हें २ रुधिर के दाने आक्सिजन (Oxygen) होते हैं। जब हम उंगली हिलाते हैं, या बोलते वा ध्यान करते हैं, तो हमारे यह छोटे २ मित्र सहस्रों विनष्ट हो जाते हैं, गिनती की गई है, कि प्रत्येक पल में हम ऐसे दो करोड़ दानों को काम में लाकर विनाश कर देते हैं॥

इन लाल दानों के सिवा रुधिर में उन्हीं की क़द के लगभग और दाने भी होते हैं, जो गेंद की भांत सर्वतः गोल होते हैं, और कुछ रंग नहीं होता, वह भली भांत स्वच्छ निर्मल नहीं होते, वरंच उन में कई छोटे २ धुंदले चिन्ह होते हैं, इन को श्वेत दाने कहते हैं,भोजन करने के पीछे उन की संख्या बढ़ जाती है, परन्तु और समयों में कम रहती है, परन्तु आश्चर्य की बात यह है, कि शनैः२ अपने क़द्द और रंग को पलट कर यह अन्त में लाल दाने ही बन जाते हैं, परन्तु यह बात निश्चित हो चुकी है, यदि पांच सौ लाल दानों पीछे एक

श्वेत दाना रुधिर में हो, तो जान लो, कि रुधिर स्वस्थता की दशा में नहीं, क्योंकि इस से यह प्रकट होता है, कि श्वेत दाने जितने शीघ्र लाल दाने बनने चाहियें थे, उतने शीघ्र नहीं बनें, इसलिये रुधिर पतला और निर्बल है, महामारी ज्वर तथा और २ रोगों में श्वेत दाने गणना में मर्यादा से बहुत बढ़ जाते हैं, और इसी कारण जिन मनुष्यों को यह रोग होते हैं, उन का रंग पीला हो जाता है।

अब हम उन दोनों का वृत्तान्त समाप्त करते हैं, जो रुधिर में बहा करते हैं, और रुधिर के उस अंश का कुछ वर्णन सुनाते हैं, जो पानी की भांत होता है, और इसे हम रुधिर का अर्क कहेंगे, यह अर्क पानी की भांत पूर्ण रूप से स्वच्छ और निर्मल होता है, परन्तु जिस भांत पानी में लवन अथवा खांड घुली हुई हो, इस में एक निराली वस्तु घुली होती है, जिसे फैबरिन (Fibrin) कहते हैं,

अथवा वह वस्तु जिस से फैवरिन (Fibrin) बनती है, जब किसी कटी हुई नाड़ी से रुधिर निकलता है। और उसे पवन लगती है, तो उसी समय फैवरिन बनने लगती है, और उसी के पतले २ तार जो आपस में गुथी हुई होती है, अर्क से पृथक् हो जाती है, और अत्यन्त सूक्ष्म छिद्रों वाला जैसा चाहिए जाल बनाती है, जिस भांत पानी में जाल डालने से तैरती हुई मछलियां बन्धजाती हैं, इसी भान्त रुधिर के दाने इसमें फंस जाते हैं, और क्योंकि यह दाने अर्क की अपेक्षा कुछ न कुछ भारी होते हैं, इसलिए फैवरिन (Fibrin) के जाल समेत, जिसमें वह फंसे हुए होते हैं, नीचे बैठ जाते हैं, इसी भान्त कुछ मिंटों के पीछे रुधिर के दो भाग होजाते हैं, एक मैली लेसदार लाल काली वस्तु नीचे बैठ जाती है, और साफ पीलासा अर्क ऊपर आजाता है, यह लाल काली सी वस्तु फैवरिन (Fibrin) का जाल है, जिस में रुधिर के

दाने बंधे हैं, इसको रुधिर का लच्छा कहते हैं, परन्तु तुरन्त निकाले हुए रुधिर से एक पात्र भरें, और पतली २ टहनियों का एक मुट्ठा बांधकर उसे हिलायें, तो फैबरिन (Fibrin) की जो तार बनती जायगी, वह टहनियों पर लिपटती जायगी, फिर उसे हम निकाल कर देखें, तो साफ प्रतीत होगा, कि वह एक श्वेत वर्ण दृढ़ और लचकीली सी वस्तु है। अब तुम चाहे यह कहोगी, कि जब किसी नाड़ी से रुधिर निकलता है, तो उस में फैबरिन (Fibrin) किस प्रकार बन जाती है, और क्योंकर बन जाती है ?

पहिले प्रश्न का उत्तर देना तो बहुत ही कठिन है, क्योंकि जब तक रक्त पानी की भांत होता है, उस समय तक उसमें किसी व्यक्ति को अब तक फैबरिन (Fibrin) का कोई चिन्ह दिखाई नहीं देता, इसी लिए यह बात कि रुधिर के लच्छे में यह क्योंकर उत्पन्न होती है, अभी तक एक

कठिन बात है, जिस के सिद्ध करने का यत्न विद्वान् कर रहे हैं, और अभी हम उस का प्रसंग कर चुके हैं, हां तुमारे दूसरे प्रश्न का उत्तर अर्थात् फैरिबन (Fibrin) के बनने की युक्ति स्पष्ट है, तुम्हारी अंगुली में सूई तो बहुत बार चुभी होगी, और रुधिर भी निकला होगा, परन्तु कभी तुमने अपने जी में यह भी सोचा है, कि रुधिर बह क्यों नहीं जाता ? चाहिये तो यह कि जब तक तुम्हारी देह में एक बिन्दु भी रहे, रुधिर न थमें, क्योंकि तुमने रुधिर की नाड़ी में एक छेद कर दिया है, इस में से रुधिर निरन्तर निकले क्यों नहीं जाता ? इसका कारण यह है, कि जब रक्त मृत अथवा मृत प्राय वस्तुओं से अथवा कटे हुए वा व्रणित मांस से अथवा पवन से लगता है, तो फैबरिन (Fibrin) बन जाती है, सो जब बहिता हुआ रुधिर घाओ के व्रणित मांस से लगता है, तो एक लच्छा जमना आरम्भ होजाता है, और

नाड़ियों में जो छेद हो जाता है, उस में डाट वा काक का काम देता है, यदि रुधिर में फैबरिन न होती, तौ तनिक घाओ से भी इतना रुधिर निकलता, कि हम मर जाते, जैसा कि किसी२ समय रुधिर की बड़ी नाड़ियों के कट जाने से होता है, और इसका कारण यह है, कि बड़ी नाड़ियों से रुधिर बल से निकलता है, यह रुधिर की तीक्ष्ण धारा लच्छे को जमते ही बहा ले जाती है, और जब हम रुधिर की धारा को इतने बल से बहते हुए नहीं रोकते, और लच्छे को दृढ़ता से जमने में सहायता नहीं देते, तौ बड़ा भय होता, मानो फैबरिन (Fibrin) स्वाभाविक सुरेश है, जिस से परमेश्वर अपने जन्तुओं के व्रण जोड़ता है।

अब हम यह बताते हैं, कि रुधिर के अर्क में पानी के सिवा और क्या २ वस्तु होती हैं, ऐलब्यूमन (Albumin) एक बड़ी वस्तु है, जिस का वर्णन तुम कुछ सुन चुके हो, कुछ चर्बी की सी

वस्तु और कुछ सोडा और चूने आदि की किस्में और कुछ धातें भी इसमें होती हैं, जैसा कि तुम पढ़ चुकी हो, कि मनुष्य की देह इन्हीं की बनी होती है, इनके सिवा आक्सिजन (Oxygen) है, जो छोटे २ रुधिर के दाने ले जाती है, और कार्बानिक ऐसिड (Carbonce Acid) अर्थात् देह का कूड़ा भी रुधिर में विद्यमान है।

पहिले तौ तुम यह जानती होगी, कि रुधिर एक सामान्य सी वस्तु है, परन्तु अब तुम को प्रतीत हुआ, कि यह सामन्य वस्तु नहीं, वरञ्च एक आश्चर्य्य अर्क है, जिस में प्रत्येक अंश बड़ी निपुणता से उतना ही डाला गया है, जितना उसके काम के विचार से आवश्यक था, परन्तु यदि निर्द्धनता अथवा अज्ञता के कारण भिन्न २ प्रकार के उचित भक्ष्य आमाशय में न पहुंचे, और वहां से आवश्यक अंश रुधिर में न पहुंच सकें, तौ देह निर्बल हो जाता है, इस से फिर एक बार प्रतीत हुआ,

कि मच्छ्र के भिन्न २ प्रकार और उन के बलों से पूरा २ ज्ञान सुशिक्षिता स्त्री के लिए कुछ न कुछ लाभकारी है ॥

आओ अब हम तुमें यह बतायें, कि रुधिर जिसको प्राण-नदी भी कहते हैं, देह में अपना चक्र किस भांत करता है, यदि इस पुस्तक के कुछ पृष्ठों के पढ़ने के पलटे, तुम जीते मेंडक का पांओं अणुवीक्षण के नीचे रखकर देखलीं, तो एक बार देखते ही इतना समझ जातीं, कि यदि इसके वर्णन में कई पृष्ट लिखते जांय, तो भी तुम इतना नहीं समझ सकतीं, और तुम देखतीं, कि तुमारे सामने कोमल प्रकाशमान झिल्ली तनी हुई है, और इस में अत्यन्त सूक्ष्म फीके रंग की नालियां विस्तृत हैं, और उन नालियों में आक्सिजन (Oxygen) के ढोनेवाले रुधिर के दाने तुरन्त दौड़ रहे हैं, कभीर मेंडक के पांओं की झिल्ली जैसे अणुवीक्षण के नीचे दीखती है, तो एक २ दौड़ता है, परन्तु बहुधा

चित्र नम्बर ५ पृष्ठ ८१
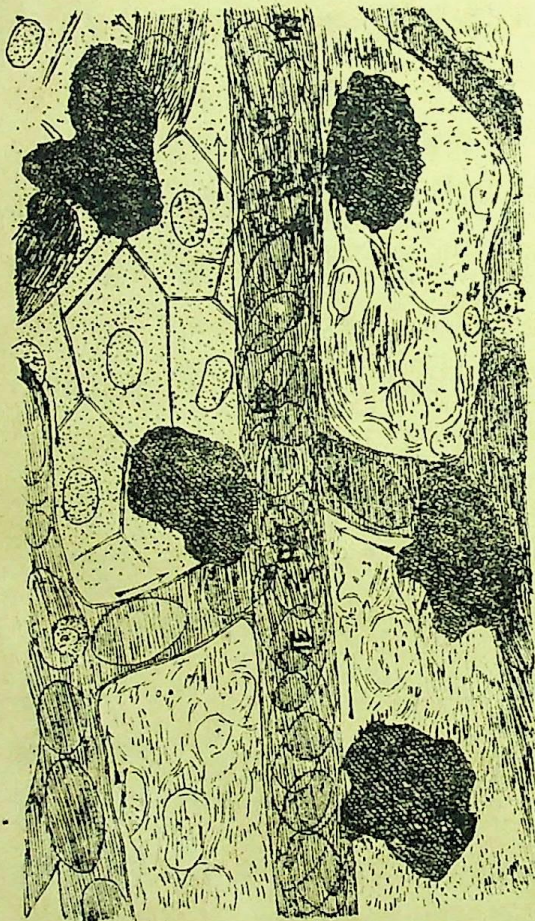
कतारें बांध २ कर दौड़ते हैं और ऐसे प्रतीत होते हैं, जैसे रुपयों की खड़ी लाट फिसल पड़ी है। यदि तुम अधिक ध्यान से देखोगी, तौ तुमें दिखाई देगा, कि बड़ी नालियों में रुधिर के दाने एक हि चाल से नहीं चलते, कई बार चाल धीमी होजाती है, और किसी समय शीघ्र, और यदि तुम इसके साथ ही मेंडक के हृदय पर हाथ रक्खो, तौ प्रतीत होगा, कि यह आलस और तेज़ी इसके धड़कने के अनुसार है, तुम यह भी देखोगी, कई छोटी नालियों में रुधिर के दाने तुमारी ओर से परे की ओर वहे जारहे हैं, और कई तुम्हारी ओर आरहे हैं।

चित्र नम्बर ५

मेंडक के पांओं की झिल्ली जैसे अनुवीक्षण के नीचे देखने में आती है।

(अ) आरटरी (Artery) (ल) रुधिर के लाल दाने (स) रुधिर के श्वेत दाने। (र) रंग के परिमाणु।

अभी तुम ने रुधिर की बहुत ही छोटी २ नाड़ियें को देखा है, यह सेर में से पूनी भी नहीं, परन्तु इस पर ध्यान करने से तुमें स्पष्ट प्रतीत हो जायगा, कि सारी देह में क्या हो रहा है। तुम कहोगी कि इन नाड़ियें में रुधिर को दौड़ाता कौन है ? सुनो रुधिर का धकेलने वाला दिल है। आओ, पहिले तुमें यह समझायें, कि दिल क्या वस्तु है, दिल मांस की एक पोली गेंद है, मुठी जितना उसका रूप होता है, अपने बाईं ओर हृदय के ठीक नीचे हाथ रक्खो, तौ वह धड़कता हुआ प्रतीत होगा, इस के बीच में एक मांस का पर्दा होता है, जिस से उसके दो भाग हो गये हैं,

चित्र नम्बर ६

भेड़ का दिल दो फेफड़ों के ऊपर वैसा रक्खा है, जैसा देह में होता है।

(प, प) फेफड़े (ब) दिल का बायां भाग।
(द) दिल का दायां भाग
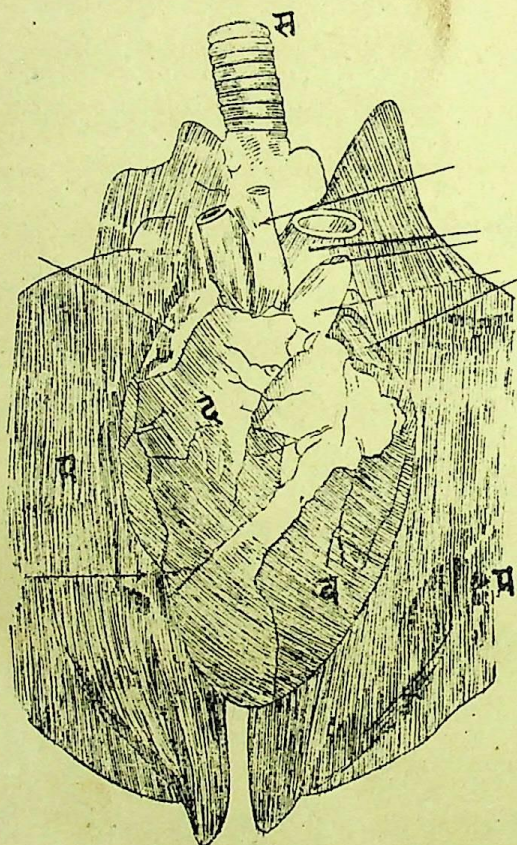
चित्र नम्बर ६ पृष्ठ ८२
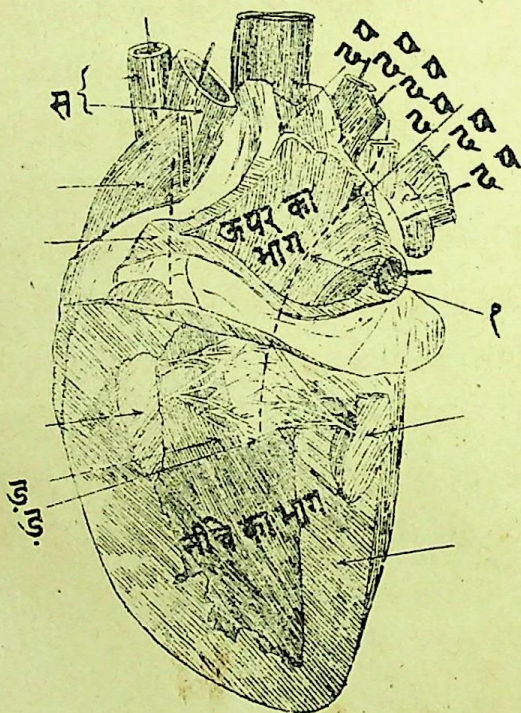
चित्र नम्बर ७ पृष्ठ ८३

एक दाईं ओर, दूसरा बाईं ओर, फिर प्रत्येक भाग के दो घर हैं, एक ऊपर को एक नीचे को, जिनके बीच में एक पर्दा है, और इस पर्दे में एक छिद्र होता है, जिस से यह दोनों परस्पर इस प्रकार मिले हुए होते हैं, कि यदि रक्त ऊपर की घुरी में प्रविष्ट हो, तौ उस छिद्र में से नीचे की घुरी में आसके। ऊपर की घुरियों को आरिकल (Auricle) अर्थात् प्रविष्ट होने की घुरी कहते हैं, और नीचे की घुरी को वेंट्रिकल (Ventricle) अर्थात् निकास की घुरी कहते हैं, परन्तु दिल के दोनों ओर के बड़ी घुरियों के बीच के पर्दे में कोई छिद्र नहीं होता, इस कारण यदि रुधिर एक ओर की बड़ी घुरी में से दूसरी ओर की बड़ी घुरी में जाना

चित्र नम्बर ७

भेडी के दिल का बायां भाग खुला हुआ है।

(प, द) फेफड़े की वेंज़ (Veins) जिनकी बाट से रुधिर बाईं आरिकल (Auricle) में फेफड़ों से

चाहे, तो इस को समग्र रक्त और कृष्ण वर्ण के रुधिर वाली नालियें से होकर आना पड़ेगा। क्योंकि दिल के बायें भाग को बहुत काम करना पड़ता है।

इसलिए हम रुधिर के संचार को यहीं से आरम्भ करते हैं, मानलो, कि दिल के बाईं ओर के ऊपरी भाग में जिस का नाम प्रवेशिका पुरी है, अत्युत्तम प्रकाशित रुधिर भरा हुआ है, जो

आता है, उनके बीच में लोहे की शलाका डाल रक्खी हैं।

(अ) सलाई जो ऊपर के और नीचे के खाने के भीतरी छिद्र में से लगती है।

(उ) ढकने के दो पलड़े (स) लाल रुधिर की बड़ी नाली जो बाईं वेंट्रिकल से निकलती है, इस की शाखों में सलाइयां हैं।

१ वेंट्रिकल (Ventricle) की कटी हुई भीतें, २ आरीकल (Auricle) की दीवार।
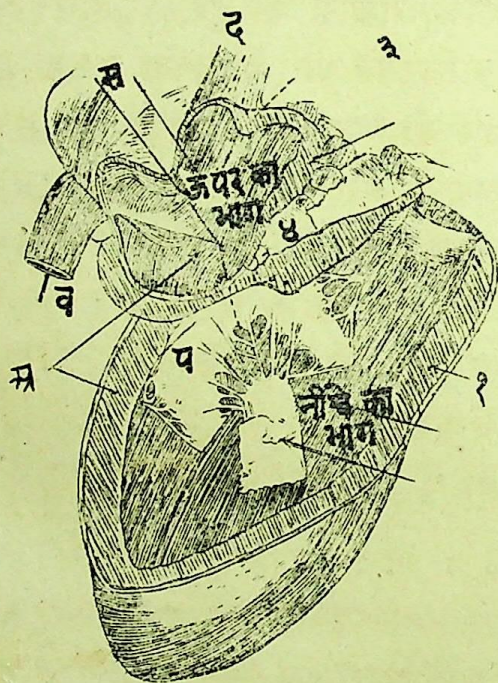
चित्र नम्बर ८ पृष्ठ ८५

अभी फेफड़ों में पवन द्वारा स्वच्छ हुआ है, और वहां से इसमें प्रविष्ट हुआ है, और सचमुच इसी भांत होता भी है। फिर वहां से यह निचली घुरी में जिसका नाम निकास की घुरी है, चला जाता है, यह घुरी रुधिर के आते ही तुरन्त सुकड़ जाती है, और रुधिर को एक बड़ी नाली में जो इस के साथ लगी हुई है डाल देती है। यदि तुम हम से इसका कारण पूछो, तो हम अपना सिर हिला कर कहेंगी, कि हमें प्रतीत नहीं। जब तक जन्तु जीवित है, उसका दिल धड़कता है, और जब

चित्र नम्बर ८

भेड़ी के दिल का दायां भाग।

(ब) भेड़ी के दिल का दायां भाग

(व) वेंज़ (Aueins) जिनके द्वार कृष्ण रुधिर सारी देह से दायें आरीकल (Auricle) में आता है।

(स) लोहे की सलाई जो दोनों घुरियों के बीच के मार्ग में होकर जाती है।

ठहर जाता है, तौ जीवन समाप्त होजाता है। भला ऐसा कौन है, जो जीवन की वास्तविकता का ज्ञानी हो? हम केवल इतना जानती हैं, कि दिल का नीचे का भाग सुकड़ता है। अथवा यूं कहो, कि पिचक जाता है, और छोटा हो, रुधिर को किसी और स्थान में अवश्य भेजता है, अब रुधिर ऊपर की घुरी में लौट कर नहीं जा सकता, क्यों कि बीच के छिद्र पर ऐसी निपुणता से एक ढकना लगा हुआ है, जो नीचे की ओर से तनिक दबाओ पहुंच ने से बंद होजाता है, यदि ऊपर की ओर से दबाओ पहुंचे, तौ खुल जाता है, इसी भांत

(प) बीच की बाट पर रखने के पर्दे।
१ (Ventricle) की कटी हुई भीत।
२ आरीकल और वेंट्रिकल के बीच छिद्रका स्थान
३ आर्टरी की कटी हुई भीत।
४ आरीकल और वेंट्रिकल के मध्य में चर्बी जो साबत दिल के ऊपर होती है।

रुधिर ऊपर की घुरी से नीचे की घुरी में आ सक्ता है, परन्तु फिर उस में उलटा नहीं जा सकता, इस लिये इसको जाने के लिये कोई और स्थान ढूंढना पड़ता है, और एक बड़ी नाली में जो लाल रुधिर से भरी हुई नीचे की घुरी में लगी होती है, चला जाता है, इसी नाली का नाम आरटरी (Artery) अथवा नाड़ियां हैं।

लाल रक्त वाली समग्र नालियें की भांत इस नाली में भी भिन्न २ वस्तुओं की तीन तहें होती हैं, जो इस भांत जमी हुई, कि समग्र नाली लचकीली बन जाती है। तुम जानती हो, कि लचकीली किसे कहते हैं ? जब किसी वस्तु को खूब खेंच तान कर छोड़ दें, और वह झटपट शीघ्र इस भान्त सिमटे जैसे कोई छलांग मारता है, और फिर अपने वास्तव रूप में आजाय, तो उसे लचकीली कहते हैं। जब लगभग तीन छटांक रुधिर दिल में से इस बड़ी में डाला जाता है, तो यह

फैलती है, और इस के पीछे फिर अपने वास्तव रूप में आने के लिये जब बल करती है, तो रुधिर को आगे धकेल देती है। और वह रुधिर जब एक बार इस भांत आगे चला जाता है, तौ फिर उस स्थान उलटा नहीं आ सकता, क्योंकि इस नाड़ी और दिल के बीच में बड़ी निपुणता से एक और ऐसा द्वार बनाया गया है, जो रुधिर के लौट आने को रोकता है। सारी रक्त रुधिर की नाड़ियें अर्थात् आर्टरियां (Arteris) लचकीली हैं, इस कारण यह रुधिर जब उनमें जाता है, तौ वह बारी २ से फैलती हैं, और सुकड़ती हैं, यहां तक कि रुधिर बाल जैसी सूक्ष्म नालियों में पहुंच जाता है, जो देह के भिन्न भागों में सहस्रों फैली हुई हैं। रुधिर सच पूछो तो लहिराता हुआ चलता है, और यदि तुम अपनी उंगली को नाड़ी पर रक्खो, तौ इसकी चेष्टा से तुमें रुधिर की गतिका ब्योरा प्रतीत होसकता है। इस का कारण यह है, कि

जहां लाल रक्त की नाड़ी त्वचा के समीप होती है, वहीं तुम रुधिर की गति जान सकती हो, परन्तु दिल से जितनी दूरी पर होगी, उतनी ही यह चेष्टा कम प्रतीत होगी। जब रुधिर बाल जैसी सूक्ष्म नाड़ियों में पहुंच जाता है, तो उसकी कूद फांद और शीघ्रता जाती रहती है, फिर एक बारगी सहजे २ बहता है, क्योंकि यह नाड़ियें लचकीली नहीं होतीं, और तीन पर्दों के स्थान उनमें एक पर्दा होता है, यह पर्दा अत्यन्त कोमल और स्वच्छ होता है, इसकी सूक्ष्मता और पतलापन यहां तक होता है, कि रुधिर का पानी वाला भाग देह के पालन के लिये इसमें से छन जाता है, और देह की मैल कुचैल इसमें से छिन कर रुधिर में प्रविष्ट होजाती है, जो आक्सिजन (Oxygen) दे देने के साथ ही अपना अमोलक लाल रंग भी खो बैठता है, और गंधलासा ऊदे रंग का हो जाता है, यह चक्र करने वाला रुधिर मलीनता से मैला हो

कर इन बाल जैसी सूक्ष्म नालियों में से बड़ी नालियों में चला आता है, जिन को वेंज़ (Veins) अर्थात् वरीद अथवा कृष्णरुधिर की नालियां कहते हैं, यह नालियां आर्टरियां (Artris) अर्थात् नाड़ियां जैसी हैं, परन्तु इतनी लचकीली नहीं होतीं; परन्तु फिर भी पिछले बल से रुधिर शनैः २ धक्का खाता हुआ चला जाता है, यहां तक कि कृष्ण रुधिर की नाड़ियें शनैः२ चौड़ी होती जाती हैं, और रुधिर दिल के दाईं ओर के ऊपर की घुरी में पहुंच जाता है, जब यह घुरी सुकड़ती है, तो

चित्र नम्बर ६

मनुष्य का दिल, रुधिर की बड़ी नालियां और फेफड़े ।

लाल भाग वह है जिसमें लाल रुधिर होता है, और नीले भाग में कृष्ण रुधिर ।

(प,प) फेफड़े तेज़ रुधिर की गति प्रकट करते हैं, (हैमिल्टन्)
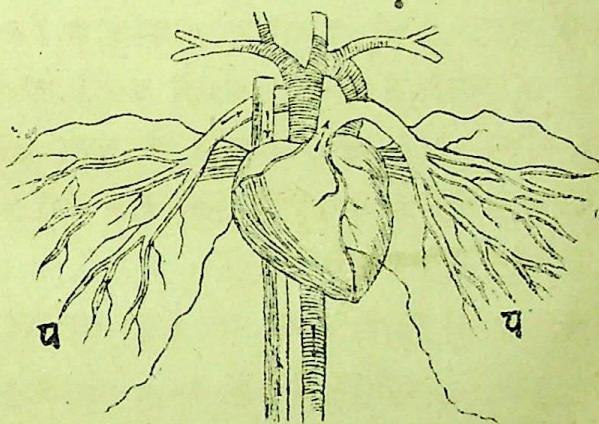
चित्र नम्बर ९ पृष्ठ ९०

रुधिर जिस का रंग अब कृष्ण होता है, दाईं ओर की नीची घुरी में आजाता है, अब तक तो रुधिर में वह अंश था, जो देह का भक्ष्य है, परन्तु अब नहीं रहा, और यह गन्दा हो गया।

तुम्हें स्मरण है कि दिल के बाईं ओर के नीचे की घुरी से इसका संचार आरंभ हुआ था, यह अपना काम आरंभ करने से पहिले दाईं ओर के नीचे के घर में स्वच्छ होने के लिये चला जाता है, यह घुरी भी सुकड़ती है, और गंदा काला रुधिर एक बड़ी आर्टरी (Artery) में डाला जाता है, जो फेफड़ों की ओर जाती है, जिस से करोड़ों बाल जैसी सूक्ष्म नाड़ियां बन जाती हैं, जो फेफड़ों के स्थान पर विस्तृत हुई २ होती हैं, जिस पवन से हम श्वास लेते हैं, वह इनको लगता है, और इन कोमल बालवत् नालियों की झिल्ली में से रुधिर अपनी मलीनताओं को बाहर निकाल देता है, और आक्सिजन (Oxygen)

को चूस लेता है, जिस के साथ ही इस का रंग फिर घना रक्त हो जाता है। यहां से यह छोटी २ कृष्ण रुधिर वाली नालियों में जाता है, और यह नालियां जूं २ आगे बढ़ती गई हैं, चौड़ी होती गई हैं, और परिणाम में दिल के बाईं ओर के ऊपर के घर में प्रविष्ट होगई हैं, वहां से रुधिर नीचे की घुरी में जाता है, और फिर नये सिरे संचार आरंभ करता है।

इस से तुम को प्रतीत होगया, कि वास्तव में दिल से रुधिर के दो भ्रान्त चक्र होते हैं, एक तो वह जो देह को भक्ष्य लाकर देता है, और दूसरे रुधिर को इस योग्य करता है, कि साफ़ हो सके; यदि हम विचारें कि यह सारा चर्खा इस प्रकार दिन रात हमारे भीतर चलता रहता है और हम को इस का समाचार भी नहीं, तो मैं विचार करती हूं, कि हमें मानना पड़ेगा, कि निःसंदेह यह आश्चर्य की बात है, कि एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार लिखता है, यह पेच

वाली कलें अपने अनन्त काम इसभान्त करती हैं, कि अचम्भा होता है; जीवन का यह बड़ा शीघ्र काम करने वाली करघा पल भर भी नहीं रुकती; जन्म और मृत्यु को बुनती चली जाती है, इस समुद्र का थाह किसी ने नहीं पाया, यह चेष्टा सदैव पलटती रहती है; मनुष्य का जीवन भी आश्चर्य कौतुक है, कई नदी नालों के मिलने से यह सदैव काल चलती रहने वाली तरङ्ग हमारी देह के प्रत्येक भाग में दौड़ती फिरती है, और हम को इस का कुछ भी ज्ञान नहीं; जीवन की ज्योति को प्रज्वलित रखने के लिये सूखा ईन्धन ले जाती है, और जलने के पीछे जो राख रह जाती है, उसे साफ़ कर देती है। यदि हम निज आंख से टुक मनुष्य की देह के भीतरी दशा देख सकते, जैसे कि कई छोटे २ जन्तुओं के स्वच्छ देहों को अनुवीक्षण से देखते हैं, तो प्रतीत होता है, कि इस अन्धेरी कोठरी में कैसा आश्चर्य कौतुक हो रहा है। एक प्रकार की

टेढ़ी तिरछी नाड़ियों में रुधिर की दौड़ती हुई तरंगें देह के सब भागों के भीतर और उनके तल पर अत्यन्त शीघ्रता से चल रही हैं; और दूसरे प्रकार की नाड़ियों में अंगों के भीतर से और तल पर से यही रुधिर दिल की ओर उलटा जा रहा है और चाहे नाड़ियें असंख्यात हैं, और असंख्य पठे परस्पर उलझे हुए हैं; परन्तु हमें किसी स्थान क्रम विरोध अथवा भूल दिखाई नहीं देती। ऐसा दृश्य हम केवल चित्त की आंख से देख सकते हैं, इस के चित्र से ही मन कांप उठता है।

देह में रुधिर की कूदती हुई तरंग, अथवा चलती हुई नदी, सुन कर तुम आश्चर्य हुई होगी; परन्तु तुम में से जिन्हों ने अभाग्य से लाल रुधिर की बड़ी नाड़ी को कटे हुए और फुहारे की भांत उस में से रुधिर की धार निकलते हुए देखा होगा, वह अवश्य इस उपमा की स्तुति करेंगी। और जिन्हों ने ऐसा कभी नहीं देखा, उन को हम व-

ताते हैं, कि लाल रुधिर की बड़ी नाड़ियें में रु-
धिर एक पल में एक फुट चलता है,और जब तक
हम जीते रहते हैं,५ सेर के लग भग रुधिर हमारी
देह के प्रत्येक भाग में उछलता रहता है।

तुम में से विचार करने वाली स्त्रियों ने सोचा
होगा, कि अब तक हमने केवल रुधिर संचार का
देह को भोजन पहुंचाना और फेफड़ों में जा कर
साफ होना ही वर्णन किया है; यह नहीं बताया
कि रुधिर हमारे भुक्त भोजनसे अपना नया सामा
किस भान्त एकत्र करता है; इस का विस्तार से
वर्णन आगे चल कर आमाशय और अन्नपाक के
शेष यन्त्रों के वर्णन समय तुमें बतायेंगे।

इस समय यह देखना चाहिये,कि इन थोड़ी
बातों से,जो रुधिर के वर्णन में तुम ने सीखी हैं,व-
र्ताओ के तौर तुम क्या २ लाभ प्राप्तकर सकती हो।

एक लाभ तो तुमें यह होगा, कि तुम जान
जाओगी, कि वर्ष की किसी २ ऋतु में रुधिर नि-

कलवाने का विचार सर्वतः व्यर्थ है, ऐसा बहुत कम होता है, कि देह में से रुधिर निकल जाने से (जो सच पूछो तो इस के प्राण हैं) कुछ लाभ होसके। इस समय विशेष में रुधिर छुड़वाने को लाभकारी विचारने में भूल यह है, कि लोक समझते हैं, कि इस प्रकार बुरे गंदे रुधिर से देह शुद्ध निर्मल हो जाता है, परन्तु नहीं, इस से देह स्वच्छ निर्मल नहीं होता, क्योंकि यदि बुरा भोजन अथवा किसी रोग के कारण रुधिर स्वास्थ्य के स्थान पर किसी प्रकार से न रहा हो, तो इस का ठीक २ कारण यह है, कि उन पट्ठों में जिन से रुधिर को खाद्य मिलता है, उचित रीति से नहीं पहुंचा, सो बुराई पट्ठे में है, और यदि तुम निकम्मे पतले रुधिर को निकाल दोगी, तो जो रुधिर उस के स्थान उत्पन्न होगा, वह उस से भी बहुत बुरा होगा। इस की चिकित्सा केवल इतनी है, कि पट्ठोंको योग्य खाद्य पहुंचाया जावे; यह विचार सर्वतः भ्रष्ट सा है, कि

औषधियों से रुधिर निर्मल होसकता है, चाहे मनुष्य कितना ही लवन खा जाय, उस का रुधिर वैसा ही सलौना रहा है, जैसा उचित प्रमाण लवन खाने से रहा करता है, हां पट्ठों को उचित अवस्था में रखने के लिये उनके योग्य भोजन खा सक्ती हो, वा आमाशय के अंशों को सुस्त न पड़ने देने के लिये औधियें पी सकती हो, परन्तु ऐसी कोई वस्तु नहीं, जो रुधिर तक पहुंच कर उसे निर्मल कर दे, इस लिये यदि तुम मांदी हो, वा कुछ अस्वस्थता हो, तो यह कभी विचार न करो, कि वतीसी अथवा इसी प्रकार की मिश्रित औषधियों का खाना ही इस की केवल चिकित्सा है, वरंच औषधियों की अपेक्षा उचित भोजन, व्यायाम, पवन और नींद रुधिर पर शीघ्र फल करते हैं; यदि तुमें सिर में व्यथा प्रतीत हो, और तुमारी देह ऐसी लाल हो जाती हो, कि तुमारी पड़ोसनां देख कर कहने लगें, कि अब तो तुम में बहुत

रुधिर हो गया है, तो रुधिर निकलवाने के स्थान तुम परीक्षा करके देखो, कि एक वा दो दिन कमखाने और अधिक व्यायाम करने से कैसा लाभ पहुंचता है। यदि तुम रुधिर को स्वभाविक रीति से स्वच्छ हो जाने में सहायता करने से इन कष्टों को भली भान्त दूर कर सको, तो रुधिर निकवाने से क्या लाभ ?

दूसरे तुमें प्रतीत होगा, कि नाड़ी वैद्य को क्या बताती है,यह इसे इतना बताती है,कि दिल शीघ्र गति कर रहा है वा शनैः२, बल से चल रहा है वा निर्बलता से; नाड़ी देखने से जिन बातों के ज्ञान कर लेने की प्रतिज्ञा वैद्य लोग करते हैं, वह बातें नाड़ी से कभी प्रतीत नहीं हो सकतीं, पर्दे में निकाले हुए हाथ की नाड़ी देखनी वैद्यके लिये यथेष्ट नहीं, और जो लोक यह प्रण करते हैं, कि केवल इतना ही देखने से रोग की परीक्षा हो सकती है; इस से बढ़ कर वह रोगी की दशा प्रतीत नहीं

करते, उन पर भरोसा न रखना चाहिये, हर एक कुटुम्ब की बड़ी बूढ़ी को यह जानना आवश्यक है, कि पुरुषों, स्त्रियों और बच्चोंकी नाड़ी की साधारण गति क्या है, कि रोग का जब डर हो पहिचान सके। दूध पीते बालक की नाड़ी एक वर्ष तक बहुत शीघ्र चलती है, अर्थात् एक मिंट में एक सौ बीस वार के लग भग; दूसरे वर्ष, उस में से २० वार कम हो जाती है, अर्थात् एक मिंट में केवल एक सौ वार ही चलती है, इसी प्रकार सात बरस की आयुतक घटते २ मिंट में अस्सी वार तक आजाती है, पूरी आयु में यह सत्तर तक हो जाती है, और जूं २ बुढ़ापा आता जाता है; अधिक तेज़ होती जाती है।

अब हम समझ सकती हैं, कि दिल और नाड़ियों को चलता रखना क्यों बड़ा लाभकारी है, चौबीस घंटे के भीतर २ हमारी देह में रुधिर पहुंचाने का काम जो दिल को करना पड़ता है,

इस में इतना ही बल लग जाता है, जितना कि ३४११ मन बोझ धरती से एक फ़ुट ऊंचा उठाने में प्रयोजनीय है, इस से तुम प्रमाण कर सकती हो, कि दिल में कितना एक बल होना चाहिये, इसलिये यदि दिलकी भीतें जो पट्ठों की बनी हुई हैं, वा लाल रुधिर की लचकीली दीवारें, निर्बल होजांय, तौ रुधिर अधिक धीमेपन से बहता है, और सारे देह को हानि पहुंचाता है। जब मनुष्य बहुत मोटे होजाते हैं, तौ प्राय ऐसा हो जाता है, कि दिल की दीवारें जो पट्ठों की बनी हुई हैं, मोटी और निर्बल हो जाती हैं, और यही कारण है, कि बड़े घराने की हिन्दुस्थानी स्त्रियों को रुधिर की मन्द गति के कारण, बहुतेरे रोग होजाते हैं। वह व्यायाम तो करती नहीं, और भोजन उत्तम करती हैं, इस से ऐसी मोटी हो जाती हैं, कि स्वास्थ्य स्थिर नहीं रह सकता, क्या जाने इस बात के जानने से तुमें बड़ी प्रसन्नता होगी, कि मंद वा

रुके हुए रुधिर के संचार से देह पर क्या फल होता है। तुमें समझाने के लिये हम फिर थोड़े काल के लिये मेंडक के पांओं की झिल्ली को एक तेज़ अणुवीक्षण के नीचे रख कर देखते हैं, वही पतली २ गैसें और छोटे २ रुधिर के दाने, हमें उन में वहते हुए दिखाई देते हैं, कभी नुकीले कोने पर तनिक ठहर जाते हैं, परंतु सदैव चलते रहते हैं, आओ एक बहुत सूक्ष्म सूई लेकर झिल्ली में छिद्र करें देखो, हमने सूई कैसी सूक्ष्म ली थी, परंतु फिर भी इसके एक ही वार चुभोने से बाल जैसी कैसी सूक्ष्म नाड़ियें फूट गईं। अब देखो रुधिर का दाना आता है, और उसके पास पहुंच कर आगे चलने से रुक जाता है, यह आगे नहीं जा सकता, यही व्रणित छोर से लगकर ठहिर गया है, इसी प्रकार एक और दाना आता है, और रुक जाता है, यूं ही इनकी गिनती बढ़ती जाती है। ए लो! अब तो इन रुके हुए दानों का यहां एक इकट्ठ हो गया,

और एक दूसरे के कारण से इनका रंग अधिक लाल प्रतीत होने लगा, और इन से नाड़ी कैसी फूल गई है, सो स्मरण रहे, कि जब रुधिर की नाड़ियों को कुछ हानि पहुंचती है, अथवा लाल रुधिर की लचकीली भीतों में कुछ न्यूनता आ जाती है, तो ऐसा ही हुआ करता है, सूक्ष्म नाड़ियें रुधिर के दानों से अट जाती हैं, इसी को पहिले यह कहते हैं, कि यहां रुधिर बहुत इकठा हो गया है, और जब कई दिन रहने से अधिक फैल जाता है, तो फिर वह स्थान रक्त-वर्ण हो जाता है, और व्यथा होती है, इस व्याख्या से तुम समझ गई होगी, कि सूजा हुआ स्थान, लाल क्यों हो जाता है। और जब किसी स्थान में सूजन बहुत हो, तो जोकें लगाना बड़ी बुद्धिमत्ता का काम है, जोकें उस रुधिर को जो यहां बहुत से दाने एकत्र हो जाने से गाढ़ा हो गया है, चूस लेती हैं, और जिस वस्तु की जिस को अब

आवश्यकता नहीं, उसे निकाल डालती हैं, परन्तु इस भांत रुधिर निकालने में और रुधिर निकलवा कर चंगी भली भुजा में से सेर वा आध सेर रुधिर निकलवा डालने में धरती आकाश का भेद है।

जब रुधिर साधारण गति पर नहीं चलता, तौ जो दशा उन सूक्ष्म व्रणित नाड़ियों में तुम ने देखी है, वही अथवा उसके लगभग हो जाती है। यही कारण है कि यहां की धनवती स्त्रियों को बिना प्रयोजन दुःख उठाना पड़ता है, वह न तो कहीं चलती फिरती हैं, न कभी उन्हें दौड़ने भागने का ही सम्भव होता है, दिन भर बैठे २ उन का रुधिर सड़ जाता है, और हज़ारों प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इस बात को तो हर एक पुरुष मानता है, कि लड़कों और युवा पुरुषों के लिये व्यायाम करना आवश्यक है, प्रत्येक पाठशाला में व्यायाम का स्थान नियत रहता है, लड़कों को व्यायाम करने के लिये साहस दिया जाता है, इस

प्रकार युवा अवस्था का रुधिर उनकी देहों में अधिक शीघ्रता से चलता है, परन्तु लड़कियों के व्यायाम की ओर किसी का ध्यान नहीं, इनकी अवस्था दया करने के योग्य है, न तो कभी स्वर्गीय शुद्ध पवन से कभी इन के फेफड़े भरते हैं, और न शारीरिक व्यायाम का साहस इनके रुधिर के संचार को शीघ्रता देता है। यदि स्त्रियें अपने बच्चों को बलवान् और दृढ़ रखना चाहती हैं, तो इन्हें निश्चय करना चाहिये, कि इन के लिये शारीरिक परिश्रम पुरुषों की अपेक्षा अधिक चाहिये, इस लिये सुगड़ स्त्री को उचित है, कि लड़कों और लड़कियों को खेलने कूदने, दौड़ने भागने और परस्पर हंसने बोलने का सदैव उत्साह दिलाती रहें, जिस से इन को जवानी दृढ़ता और स्वास्थ्य की प्रसन्नता प्राप्त हो, और प्रतीत करें, कि जीवन की नदी, किस उमंग से उन की देह में उछल रही है।

चौथा अध्याय।

फेफड़े और गले से हम किस भांत श्वास लेते हैं।

यह तो सब जानती हो, कि हम फेफड़ों से सांस लेती हैं, परन्तु ऐसी बहुत कम स्त्रियें हैं, जो यह जानती हों, सांस लेती क्यों कर हैं, इस लिये हम पहिले यह बताते हैं, कि फेफड़े देह के किस भाग में होते हैं। सुनो! फेफड़े और दिल दोनों हृदय अर्थात् धड़ के ऊपर के भाग में होते हैं। हृदय एक खोखला संदूक अथवा पिंजरा है, जिस को पीठ की हड्डी संभाले रहती है, पीठ की हड्डी में से चौबीस पसलियां निकलती हैं, बारह दाईं ओर और बारह बाईं ओर, यह टेढ़ी हड्डियां होती हैं, इनका एक सिरा तो पीठ की हड्डी में जुड़ा हुआ होता है, दूसरा टेढ़ा होकर पीठ की हड्डी के ठीक

सामने की ओर हृदय की हड्डी से आन मिलता है। सीने की हड्डी पतली सी होती है, और पसलियां लचकीली करकरी हड्डी के द्वारा इस के साथ जुड़ी हुई होती हैं, यदि सामने की ओर से उस हड्डियों के संदूक को दबायें, तो यह भीतर को दब जायगा, परन्तु टूटेगा नहीं, इसी लिए दिल और फेफड़े को चोट लगने का सम्भव बहुत कम होता है, यदि सीने की यह दीवारें कड़ी होतीं, तो यह बात न हो सकती। इस संदूक के नीचे बड़ी दृढ़ मछलियों की एक चटाई बुनी हुई है, जिसको अंग्रेज़ी में डायाफराम (Diapharagm) कहते हैं, यह तल गुम्बज़ की भांत है और इसमें सुकड़ने की शक्ति भी होती है। जब यह सुकड़ता है, तो सीने की भीतों को जिनमें फेफड़ा लगा हुआ है, नीचे की ओर खेंचता है, और आमाशय को जो इसके नीचे है दबाता है, पसलियों के बीच की कई मछलियें भी इस काम में उसको सहायता

देती हैं, और इस भांत सीने के संदूक के भीतर स्थान अधिक हो जाता है।

जब यह फ़रश का पर्दा फूल कर अपने ठीक रूप में आता है, तो सीने का संदूक फिर छोटा होजाता है। सीने की भीतां और तल के बारी२ फैलने और सुकड़ने से पवन फेफड़ों में जाता है और फिर बाहर निकल आता है।

फेफड़े केवल दो लचकीले थैले होते हैं, जिनके छोर पवन की छोटी २ थैलियों से भरे होते हैं, फेफड़े सीने की भीतां से सर्व्वत: लगे होते हैं, जब सीना फैलता है, तो यह भी फैलते हैं, और सारी छोटी२ पवन की थैलियों में पवन भर जाता है, जब छाती की भीतें सुकड़ती हैं, फेफड़े भी सुकड़ जाते हैं, और थैलियों में से पवन निकल जाता है, इसका समझना तो कुछ कठिन नहीं; निश्चय है कि तुम समझ गई होगी।

अब हम यह बताते हैं, कि पवन फेफड़े तक किस प्रकार पहुंचती है;तुम विचार करोगी, कि इस के जानने के लिये सब से सहज और शीघ्र पहुंच जाने की बाट बड़ी नाली से हो सक्ती है; परन्तु हमारा सृष्टि-कर्ता परमेश्वर इस बात को जानता था,कि यदि बाहर की शीतल पवन सीधी फेफड़ों में प्रविष्ट होगी, तो उष्णता के एक सा न रहने से रोग का भय सदैव लगा रहेगा; इसलिये उस ने ऐसा प्रबन्ध किया है,फेफड़ों में पहुंचने से पहिले पवन उष्ण हो जाता है। वह यह भी जानता था, कि चाहे नाली कैसी ही तंग हो, परन्तु यदि बाहर के पवन का सम्बन्ध सीधा फेफड़े के संग हुआ, जो कुछ न कुछ रीता होता है, तो नाली की बाट से पवन तुरन्त फेफड़े में चली जायगी, और रीते स्थान को भर देगी। तुम जानती हो, कि यदि पवन को सूक्ष्म से सूक्ष्म छिद्र भी मिल जाय, तो तुरन्त घुस जायगा, और रीते

स्थान को भर देगा। हमारी देह में बहुत सा पवन तो नाक की बाट से प्रविष्ट होता है,परन्तु कुछ न कुछ मुंह से भी जाता है, फिर नरखरे में जाता है, और यदि तुम अपना कण्ठ सामने की ओर से चुटकी में पकड़ो, तो नरखरा प्रतीत हो जायगा, यह गोल छल्लेदार नाली सांस लेने का पथ है और इस के ऊपर के सिरे के पास जो कण्ठ है, वह शब्द निकलने का यन्त्र है,जिस के द्वारा हम बात चीत करने के लिये भिन्न २ शब्द निकालते हैं;जब नरखरा सीने की अस्थि के पीछे और ग्रीवा-मूल के निकट पहुंच कर सीने में प्रविष्ट होता है, तो इस की दो शाखें बन जाती हैं,एक शाख तो दायें फेफड़े को जाती है,दूसरी बायें को,और जूं २ वह आगे बढ़ती जाती है,इन की और शाखें निकलती आती हैं,यहां तक कि इस का रूप उलटे पेड़ की भान्त हो जाता है;बड़ी नाली को यदि हम स्कन्ध समझें,तो छोटी नालियां जो क्रम २ से छोटी होती

जाती हैं, शाखें समझनी चाहियें और जैसे शाख के सिरे पर पत्ते होते हैं, इन के सिरों पर पवन की घुरियों का गुच्छा होता है, इन पवन की घुरियों के तल पर बाल जैसी सूक्ष्म नालियां सहस्रों विस्तृत होती हैं।

बैंजनी रंग का रुधिर जो देह की मलीनता से भरा हुआ होता है, साफ होने के लिये उन में आता है, इन की कोमल भीतों में से पवन का आकसिजन (Oxygen) रुधिर में प्रविष्ट हो कर हल हो जाता है और मकलियों के जलने से जो

चित्र नम्बर १०

(स) सांस लेने की नाली।
(न) नरखरा वा कण्ठ।
(अप) साबत फेफड़ा।
(२प) फेफड़ा जिस में खोल कर स की सूक्ष्म शाखें दिखाई हैं।
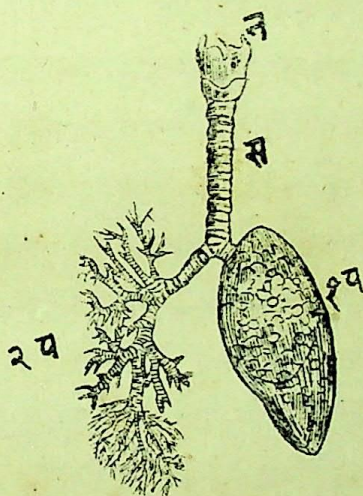
चित्र नम्बर १० पृष्ठ ५०

कार्बानिक ऐसिड (Carbonic acid) उत्पन्न होता है, वह बाहर निकल जाता है।

बचपन में फेफड़ों का वर्ण फीका, गुलाबी और अत्यन्त स्वच्छ होता है; परन्तु शोक है! जूं २ हम बड़े होते जाते हैं और सब प्रकार की गन्दी पवन से सांस लेते हैं, उस की मैल कुचैल के कारण जो बाहर से फेफड़ों में आकर प्रविष्ट होती है, इन का रंग कुरूप भूरा सा हो जाता है, और यहां तक हो जाता है, कि जिन लोगों को लकड़ी के कोयलों, अथवा पत्थर के कोयलों से काम पड़ता है, उन्हें काले फेफड़े का रोग हो जाता है, क्यों कि सांस लेते समय काली धूल के परमाणु उनके फेफड़ों में चले जाते हैं। इसी कारण इंगलिस्तान में चाकू और सूईयां बनाने के बड़े कार्यालयों में कर्मकारियों को बड़ा कष्ट हुआ करता था, क्योंकि फौलाद के अत्यन्त छोटे २ परमाणु सान से उड़ कर उन के फेफड़ों में चले जाया करते थे, और उन

को काट कर टुकड़े २ कर दिया करते थे, इस से बचने के लिये आज कल कर्मकारी जालीदार लोहे की टोपियां मुंह पर चढ़ा लेते हैं, इन जालियों में आकर्षक-शक्ति भरी हुई होती है। तुम सब ने सुना होगा, और कई स्त्रियों ने देखा भी होगा, कि चुम्बक लोहे को किस भान्त खेंचता है, बहुधा बाजारों में छोटे २ खिलौने मछली वा बतख़ आदि बने हुए होते हैं, और इन के साथ लोहे की एक छोटी सी तार का टुकड़ा जिस में चुम्बकीय आकर्षण-शक्ति भरी हुई होती है मिलता है। यदि इस मछली वा बतख़ को पानी में डालें, तो तैरने लगेगी, जिस ओर वह तार का टूक उसे दिखायेंगे दौड़ेगी क्यों? इस लिये कि लोहे की बनी हुई है, इसे वह आकर्षण-शक्ति खेंखती है, जो तार के टुकड़े में भरी है। अब तुम भली भांत समझ लोगी, कि जैसे यह चुम्बक की तार का टुकड़ा लोहे को अपनी ओर खेंचता

है, इसी भांत वह तार की टोपियां जिनमें आकर्षण शक्ति भरी हुई है, सूक्ष्म लच्छों को अपनी ओर खेंच लेती हैं, और फेफड़ों में जाने नहीं देतीं, वाह वा! कैसी बुद्धिमत्ता की युक्ति निकाली है।

इन सारी बातों से हम भली भान्त समझ सकते हैं, कि हमें इस बात की कितनी सावधानता करनी चाहिये, कि बुरा दुर्गंधमय पवन अथवा ऐसा पवन, जिसमें भयानक अणु मिले हुए हों, फेफड़ों में न जाने पाय। इस पुस्तक के १म, भाग के उस अध्याय में जहां पवन के आवागौन का प्रसंग है, इसका बहुत कुछ वर्णन किया जा चुका है। इसलिए इस समय केवल इतना ही बहुत है, कि वह बातें तुम को फिर स्मरण करा दी जांय, यदि तुम एक बार इस विषय को भली भान्त समझ लो, तो तुमारे देह के पालन का सारा भरोसा इसी पर है, कि रुधिर के छोटे २ दाने

तुमारे फेफड़ों में से होते समय यथेष्ट आक्सिजन (Oxygen) इकट्ठी करलें। और बाल की सी सूक्ष्म नाड़ियों की भीतें ऐसी कोमल सुकुमार हैं, कि उन में से विषाक्त गैसें छिन सकती हैं, तो फिर तुम अवश्य फेफड़ों में साफ़ सुथरा पवन पहुंचाने का यत्न करोगी, और दुर्गंधमय पवन उन में कदापि न जाने दोगी, तुम भली प्रकार जानो, कि इन दोनों बातों की ओर ध्यान न रखना, मानो जान बूझ कर भूखा रहना, अथवा विष भक्षण करना है।

आश्चर्य बात है, कि यदि फेफड़ों का पिण्ड वास्तव में बहुत छोटा है, और तोल में आध सेर के लगभग होते हैं, परन्तु इन में पवन की घुरियें अथवा थेलियां इतनी असंख्य हैं, कि जिन की गिणती करने से प्रतीत हुआ है, कि इन का तल २६४२ वर्ग फुट से कम नहीं, अर्थात् यदि सारे पवन के घर खोल कर धरती पर बिछाये जायें, तो १७ गज़ लंबी और १७ गज़ चौड़ी धरती रोकेंगी,

यूं तो यह बात विश्वास के योग्य प्रतीत नहीं होती, परन्तु हम को स्मरण रखना उचित है, कि एक वर्ष में फेफड़ों को ६५००० सहस्र मन रुधिर के लग भग स्वच्छ करना पड़ता है, यदि पवन के घरों में इतनी न आसके तो इतना रुधिर क्योंकर स्वच्छ हो सकता है ॥

अब हम फेफड़ों को छोड़, उन नालियों का वर्णन करते हैं, जिन के द्वारा पवन भीतर आता जाता रहता है, और उस कल का कुछ वर्णन करते हैं, जिस से हम बोलते हैं।

यह तो तुम सब जानती हो, कि यदि किसी खोखली नाली में फूंक मारें अथवा पवन उस में से निकसे तो शब्द होता है, और यह भी जानती हो, कि यदि नाली लंबाई वा चौड़ाई में कम होगी, तो शब्द भी धीमा निकलेगा, और जितनी लंबी चौड़ी अधिक होगी, उतना हि शब्द ऊंचा निकलेगा। इसीभांत पवन जितने बल से नाली में

जाता है, उतना हि शब्द ऊंचा निकलता है। तुम में से जिन स्त्रियों ने घागरा पलटन का बाजा बजता देखा होगा, वह इस बात को तुरन्त समझ जायेंगी, कि मनुष्य का शब्द किस प्रकार उत्पन्न होता है। बजाने वाले की तुरी में पवन की भरी हुई एक मशक सी होती है, वह कभी फूलती है, और कभी सुकड़ती है, फेफड़ों की दशा भी ऐसी ही है, जैसी उस मशक में नली लगी हुई है, जिस पर बजाने वाला उंगलियां रखता और उठाता है, वह ठीक वैसे हि हमारे फेफड़ों में नरखरा लगा हुआ है, जिस में से शब्द निकलता है, परन्तु तुम कहोगी, कि बाजा बजाने में तो अङ्गलियों से भी काम लिया जाता है, हमारी देह में ऐसी कौन सी वस्तु है, जो उनके पलटे काम देती है, निस्संदेह तुमारा यह प्रश्न बहुत ठीक है, इस बात के समझाने के लिए हम फिर गले के कण्ठ का कुछ वृत्तांत वर्णन करते हैं, जिसका कुछ प्रसंग ऊपर आचुका है॥

कण्ठ पर अपनी उङ्गली रक्खो, फिर मुंह फाड़ कर गाय की भांत भारी शब्द निकालो, फिर शीघ्र चील की भान्त सूक्ष्म शब्द बल से निकालो, तो तुमें प्रतीत हो जायगा, कि पहिले शब्द में कण्ठ नीचे को उतरता है, और दूसरे शब्द में ऊपर को चढ़ता है; इस से प्रतीत हुआ, कि कंठ में हिलने की सामर्थ्य है और यह सांस लेने की नाली को लम्बा और चौड़ा कर सकता है। इस बोलने के यन्त्र अर्थात् कण्ठ को अंगरेज़ी में लारिंक्स (Larynx) कहते हैं, और पंजाबी में इस का नाम घंडी है। परन्तु मनुष्य की बोल चाल के असंख्य भिन्न स्वर निकालने को केवल इतना यथेष्ट नहीं, यदि पवन छलनी के तुल्य सूक्ष्म छेद में से गुज़रे तो अति-सूक्ष्म शब्द निकलता है, यदि खजूर के तुल्य बड़े छेद में से निकले, तो शब्द उसकी अपेक्षा बहुत भारी होता है, इसी प्रकार कण्ठ में एक बड़ा कौशल रक्खा है, जिस

से वह छिद्र जिस में पवन फेफड़ों में से होकर जाता है, छोटा बड़ा होजाता है, अभी यह वर्णन समाप्त नहीं हुआ, एक बात और सुनो, तुम जानती हो, कि बल से तने हुए तार को छेड़ें, तो थरथराने लगता है, और उस में से शब्द निकलता है, और तार जितना अधिक मोटा, लम्बा और तना हुआ होगा, उतना ही बड़ा शब्द उसमें से निकलेगा। तारों के साज़ देखने से जिन्हें डूम बजाते हैं, यह बात सिद्ध होजाती है। इसी भांत लारिंक्स (Larynx) के भीतर दो थरथराने वाले तार हैं, जिनको हम अपनी इच्छा अनुसार ढीला कर सक्ते हैं, सब तुमें प्रतीत हो गया, कि मनुष्य का लारिंक्स (Larynx) एक सचमुच का बाजा है, जो कुछ तो बीन बाजे अथवा ढोल की भान्त पवन से बजता है, और कुछ सारंगी की भान्त तारों से। बीन बाजा बजाने वाला अपनी अंगुलियों से छिद्र बन्द करके नली के स्वर को पलटता है, इसी प्रकार
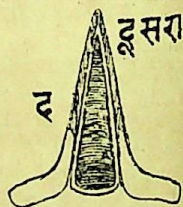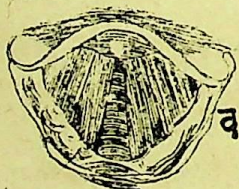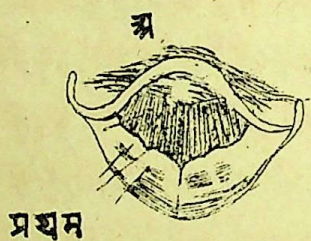
चित्र नम्बर ११ पृष्ठ १२८

जहां पवन को लम्बी वा छोटी नाली में से निकल जाना पड़ता है, जिस से शब्द पलटा खा जाता है। सारंगी बजाने वाला डंके की चोट से अपने बाजे को बजाता है, हम नाली को लंबा वा छोटा करके तारों को फूंक की चोट से हिला कर अपने कण्ठ के द्वारा गाते हैं, परन्तु जब हम बोलते हैं, तौ शब्द को जिव्हा, नाक, ओंठ और दांतों से पलट देते हैं। तुमने देखा होगा, कि सतार में तार लकड़ीके पोले संदूक पर तने होते हैं, और सारंगी

चित्र नम्बर ११

मनुष्य का कण्ठ।

१म, १ जब शब्द निकल रहा है।

(ब) जब कोई शब्द नहीं निकलता।

२य, (ज) बोलते समय तारों का रूप पृथक् करके।

(द) तारों का मूर्ति जब शब्द नहीं निकलता, भिन्न करके।

में ऐसे संदूक पर होते हैं, कि जिस पर भली भांत झिल्ली मढ़ी हुई होती है, ऊञ्चा शब्द निकालने के लिए यह युक्ति की जाती है, क्योंकि यदि तुम ढोलका विचार करो, तौ सहज ही समझ जाओगे, कि पोले स्थान चोट लगाने से शब्द बहुत बढ़ जाता है, ढोल केवल उङ्गली लगाने से ही बोल उठता है, और यदि इतने ही बल से धरती पर उङ्गली लगायें, तौ शब्द कठिनाई से सुनाई देता है, इस कारण तुम्हें शनैः २ प्रतीत होगा।

इसी प्रकारपवन जब फेफड़ों में से निकल, कंठ में से हो कर आता है, तो इस को मुंह की पोली छत अर्थात् तालू और नाक के पोले स्थान से टक्कर खानी पड़ती है, किसी २ समय ऐसा होता है, कि किसीमनुष्यकी मुंहकी छत ठीकनहीं होती, तो उस की बात कठिनाई से समझ में आती है, और जब सिर को शीत लगने से कंठ और नाक के बीच का छिद्र रुक जाता है, तो हम एक नि-

वाली ही भान्त बोलने लगते हैं, और कई अक्षर विशेष करके "म" और "न" मुंह से निकालने में बड़ा कष्ट होता है, भिन्न २ अक्षरों के बोलने से तुम आप जान सकती हो, कि जिव्हा और ओंठ किस भान्त शब्द को पलटते हैं। सो प्रत्येक अक्षर के उच्चारण के लिये बोलने की कल के भागों का विशेष क्रम हो जाता है। यह वर्णन पढ़ कर सोचना चाहिये, कि परमात्मा ने जो हम को बोलने का यह एक अत्युत्तम लचकीला यन्त्र दिया है, इस को हम किस प्रकार काम में लाते हैं ? मान लो, कि तुम्हारे घर में एक अत्यन्त मीठी स्वर का बाजा है, और उस जैसा संसार भर में दूसरा कहीं नहीं, परन्तु यदि तुम ने उस का बजाना नहीं सीखा, तो उस के होने से क्या लाभ ? निःसंदेह कुछ लाभ नहीं, परन्तु तुम यह कहोगी, कि गूंगी स्त्रियों के सिवा सब स्त्रियें बोलना तो जानती हैं, यह सच है, परन्तु प्रश्न यह है, कि इन

को जैसा कि बोलना चाहिये, वैसा बोलना आता है कि नहीं ? हम यहां की बहुधा स्त्रियें को मोटी और कान फाड़ डालने वाली स्वर से बोलते सुना है, ऐसा स्वर क्रोध से बोलने और परस्पर झगड़ने का परिणाम है। जब तुम किसी नगर में जाओ, तो स्त्रियें को बहुत चीख़ कर बोलते सुनोंगी, वस्तुतः इन के मनों में क्रोध नहीं और एक दो मिंट के पीछे पृथक् होते समय फिर सुल्ह कर लेंगी; परन्तु इस समय तो स्वर ऐसा ऊंचा है, कि इस के आगे और कोई स्वर सुनाई नहीं देता। स्त्रियो ! स्मरण रहे, कि प्राय देशों में इस बात की कहावतें बनी हुई हैं, कि नन्हीं सी सूक्ष्म स्वर स्त्रियें की बड़ाई है। इस लिये ऊंचे स्वर से बोल कर और चीख़ मार कर अपनी स्वर को बिगाड़ो नहीं, देखो यदि सतार के तार को अधिक चोट लगाई जाय, तो वह टूट जाता है, इसी भान्त कंठ के कोमल तार भी शीघ्र चौड़े हो जाते हैं।

यहां की स्त्रियों में गाने का प्रचार बहुत कम है, इस लिये इस अत्युत्तम यन्त्र से जो ईश्वर ने हमें दिया है, गाने का काम बहुत कम लिया जाता है; परन्तु हमें निश्चय है, कि जब संसार ज्ञान में बहुत बढ़ जायगा, तो यह बातें भी ठीक ठाक हो जायेंगी, परन्तु इस समय हम तुम से इतनी प्रार्थना करती हैं, कि जब कभी तुम गाओ, जैसा कि ब्याह स्वार्थ में वर्तारा है, तो कृपा करके इतना विचार रक्खो, कि यह कोमल यन्त्र उत्तमरीति से बर्ता जावे। अर्थात् अपनी नाक बन्द न करो, अथवा स्वर को किसी और प्रकार बिगड़ने न दो। और तनिक इस बात को भी सोचो, कि तुम्हारे गीत का आशय क्या है। प्यारियो ! जो बातें बोलने में निर्लज्ज और अश्लील प्रतीत होती हों, वह गाने में क्योंकर उत्तम हो जायेंगी ?

इस विषय को समाप्त करने से पहिले यह वर्णन कर देना भी आवश्यक है, कि स्वास लेने को

यन्त्र को चलता रखने के लिये स्वच्छ, निर्मल और नये पवन का यथेष्ट प्रमाण पहुंचाने के सिवा सुघड़ स्त्री को और क्या कुछ करना चाहिये।

एक तो शीत से बचना बहुत आवश्यक है, विशेष करके बालकों के लिये, तो इस की बड़ी सावधानता चाहिये, परन्तु शोक की बात है, कि जब तक यहां तक नहीं होजाता, जिसका कुछ चारा न चल सके, उस समय तक हिंदुस्तानी मांयें इस की ओर कुछ ध्यान नहीं करतीं, इस शीत से पहिले तो थोड़ा २ कष्ट प्रतीत होता है; परन्तु पीछे किसी२ समय यही मृत्यु का कारण हो जाता है। तनिक विचार तो करो, कि फेफड़े चाहे देह के भीतर होते हैं, और देह की उष्णता को एक से ग्रहण करने वाले हैं; परन्तु वाह्य पवन किस प्रकार उन को लगता रहता है; इस लिये साफ समझ में आता है, कि इन्हें शीत तुरन्त लग सक्ता है और उन में जो असंख्य केश के तुल्य सूक्ष्म

नाड़ियां हैं, उन में रुधिर शनैः २ बहिता रहिता है और जब बाहिर का शीत लगने से रुधिर शीत हो कर उन में जाता है, तो यह उस से रुक जाती हैं। नाक, मुंह, श्वास लेने की नली, और छोटी नालियों के भीतर जो फेफड़ों की ओर जाती हैं, एक ऐसी कोमल झिल्ली लगी हुई है, जिस में रुधिर अधिक हो जाने का बहुत सन्देह रहता है। क्योंकि इस से सूजन हो जाती है, इस लिये शीत लगने से देह के और भागों की अपेक्षा फेफड़ों और कण्ठ को अधिक हानि पहुंच सकती है, और इन को हानि पहुंचने से हर समय प्राण का सन्देह है। जैसा कि जब नाक के भीतर का चमड़ा सूज जाता है, तो इस का कष्ट दूर करने के लिये पानी सी पतली बहुत सी मैल नाक से निकलती है, इसी को ज़ुकाम अथवा "पवन लगी" कहते हैं, नाक का बन्द होना निस्सन्देह बहुत कष्ट देता है; परन्तु कष्टदायक नहीं भी होता, क्योंकि मुख की वाट

से बहुत सारी पवन भीतर जा सकती है, परन्तु जब सूजन सांस लेने की नाली तक चली जाती है, तो हमारा स्वर बैठ जाता है, क्योंकि कण्ठ के थरथराने वाले तार सूज जाते हैं और नाली के तंग छेद में जब मलिनता पहुंचती है, तो हम उसे निकालने के लिये खांसते हैं, परन्तु जब तक सूजन बहुत न हो, वा मल को निकालना कठिन हो, तो फेफड़ों के भरने के लिये पूरा पवन भीतर जा सकता है, पर फिर सूजन उन नालियें तक जा पहुंचती है, जो दायें और बायें फेफड़े में जाती हैं, अब यदि सूजन बड़ी नालियें तक है, तो कुछ न कुछ पवन उन में से आ जा सकता है; परन्तु जब सूजन सूक्ष्म नाड़ियों में पहुंच जाती है, जिन के सिरों पर पवन की थुरियें हैं, तो कुछ और ही रूप बन जाता है, वह सर्वत: बन्द हो जाती हैं और सांस रुकने के कारण अर्थात् पवन न पहुंचने से हम मर जाते हैं, सामान्य ज़ुकाम से सदैव

यही डर रहता है, कि भयानक न हो जाय और बालकों के ज़ुकाम में तो विशेष कर डर रहता है, इस लिये स्यानी स्त्रियो ! यदि तुमारे घर में किसी बालक को ज़ुकाम हो जाय, तो कभी उस से भूले न रहना ।

कई वार ऐसा होता है, कि शीत का कोई चिन्ह प्रकट नहीं होता और मनुष्य को कई प्रकार के रोग लग जाते हैं;सांस लेने में कष्ट होता है और सीने में थोड़ी वा वहुत पीड़ा होती है, थोड़ी सी खांसी होती है, इस लिये इस के सम्बन्धि सामान्य ज्वर समझते हैं, परन्तु उस के फेफड़े में सूजन हो जाती है और यह हिन्दुस्तान के बड़े असाध्य रोगों में से है,जिस को यहां सिल्ह का रोग कहते हैं । तुम्हें स्मरण है ? कि मेंडक के पांओं में तुम ने देखा था,कि बाल जैसी सूक्ष्म नाड़ियां सूजन के कारण रुधिर इकट्ठा हो जाने से भर गईं थीं, इसी भान्त फेफड़ों की सूक्ष्म ना-

लियां भी अट जाती हैं और फेफड़ों में ऐसी दशा का होना बड़ा भयानक है, क्योंकि रुधिर को पूरी २ आक्सिजन (Oxygen) नहीं मिलती।

तुम कहोगी कि वाह! आप ने हम को डरा तो दिया, परन्तु यह न बताया कि ज़ुकाम को बिगड़ने से किस भान्त रोकें? क्योंकि हम डाक्टर तो नहीं। बीबियो! सुनो! तुमें अपने प्यारों को साधारण ज्वर से बचाने के लिये यही सामान्य बुद्धि बहुत है, यदि तुम इस से काम लो; पहिले तो यह ध्यान रक्खो, कि ज़ुकाम होने ही न पाये, और विचारो कि वह भीगे वस्त्र कभी न पहिनें, शीतल पवन की वाठ में न बैठें, ओस में अथवा गीली धरती पर न सोयें, बालकों को उष्ण वस्त्र पहिनाये रक्खो, परन्तु रात के समय परिमित वस्त्रों से अधिक उष्ण वस्त्र न पहिना देना, और स्मरण रक्खो कि जब बहुत से मनुष्य एक छोटी सी तंग और

बन्द कोठड़ियों में रात को सोते हैं, तो वहां के अशुद्ध पवन से उनका सिर भारी हो तो जाता है, इन्हें सवेर के समय जब बड़ा शीत होता है, और बहुधा गहर भी पड़ती है, बाहर निकलने न दो।

यदि इस भारी सावधानी पर भी जुकाम होजावे, तो चिकित्सा से पहिले इसे ऐसा न बिगड़ जाने दो, कि तुमें अवश्य ही चिकित्सा करानी पड़े। आरम्भ में तो रात को सोने से पहिले दूध में गुड़ और नींबू उबाल कर पीना चाहिये, अथवा नींबू के अर्क में पानी और कुछ मिसरी डाल कर और कुछ उबटा कर पीलेना चाहिये, और छाती पर अलसी का तेल चिर काल मलते रहना चाहिये, कि छाती लाल होजाय, और मुलहठी का छोटा सा टुकड़ा मुंह में रखना चाहिये, जुकाम के आरंभ में इसी प्रकार की चिकित्सा से लाभ होजाता है। बहिनो!

अभी औषधियें बताने का समय नहीं आया, तनिक ठहरो, आगे चलकर चिकित्सा के विषय में और औषधियें बतायेंगे। इस समय हम केवल इतना बताना चाहती हैं, कि जब श्वास लेने की कल को कोई हानि पहुंच जाय, तौ हम को कितनी एक सावधानता करनी चाहिये, जो नालियां फेफड़ों को जाती हैं, उन्हें शीत लग जाने से इतने बालक मरते हैं, कि और किसी से नहीं मरते, यह भी हम बता देते हैं, कि जब ज़ुकाम बहुत चिरकाल तक रहै, तौ सदा हानिकर होता जाता है, ठंडा जल, और ठंडी पवन, तौ बल-दायक वस्तु हैं, परन्तु सदैवकाल ठंडी वस्तुओं का मिलना भी रोग उत्पन्न करता है।

इस अध्याय को हम एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार के कहने पर समाप्त करते हैं, और वह यह है, कि यह तो प्रत्येक बच्चा जानता है, कि श्वास लेने को

इसमें पवन आवश्यक है, और यह भी बहुधा जानती हैं, कि शुद्ध पवन से श्वास न लेना बुरा है, परन्तु ऐसा सहस्रों में एक होगा, जो इस बात को भली भांत समझता हो, कि जो नया पवन नहीं, वह विष तुल्य बुरा है।

पांचवां अध्याय।

आमाशय और भोजन का पचना।

यह बात जो प्रसिद्ध है, कि भूख जीवन की आंच है, अर्थात् वह इच्छा है, जिस के पूरा करने के द्वारा संसार के सब कामों का निर्वाह भली भान्ति होता जाता है, यह सच है, क्योंकि पेट ही के कारण मनुष्य को अवश्य काम काज करना पड़ता है, भूख ही किसानों से हल जुतवाती है, लुहारों से लोहा कुटवाती है, बढ़इयों से लकड़ी चिरवाती है, पत्थर फोड़ों से पत्थर फुड़वाती है, पहाड़ खुदवाती है, ऐसे ही समझ लो, कि सारे परिश्रम के काम करवाती है। व्योपारी, वकील और २ कर्मकारी लोग, इसी के कारण सवेरे ही उठते हैं, और बड़ी रात गये सोते हैं, क्योंकि चाहे धनी इतना रुपया कमाता है, कि उस और

उसके कुटुम्ब के पेट भरने के व्यय से अधिक होता है, परन्तु वह अधिक रुपया, औरों का परिश्रम मोल लेलेने में व्यय करता है, कि लोग इस के लिये उत्तम वस्त्र और उत्तम से उत्तम घर बनायें, और उसकी कई प्रकार की सेवा में लगे रहें। और लोग इसके लिए यह सब कुछ क्यों करते हैं ? इसी पेट के लिये यह कविता है।

पेट के काज रहैं दिन रात लगे,
सब काम समूह फसे हम।
कष्ट सहें सिर घाम औ शीत का
बादल से कछु नाहीं डरें हम।
झेलत हैं सब ही दुख को
मरयाद सुधार को नाहि गणे हम,
भानु यह पेट हि है सब कारज
साधक विघ्न ये कहे है ॥

अब रही यह बात, कि भूख जिस के कारण संसार के इतने काम निकलते हैं, वह क्या वस्तु है ?

हम में से बहुधा स्त्रियें यह जानती हैं, कि सच्ची भूख कैसी होती है, अर्थात् भोजन करने की वह इच्छा जिस से भोजन बड़ा रस देता है, और हम में से बहुधा स्त्रियें जानती हैं, कि निराहार रहने की भूख कैसी बुरी होती है, परन्तु चिरकाल भूखे रहने के दुःख को अत्यन्त निर्द्धन लोग ही जानते हैं, और यदि हम परमेश्वर न करे, बड़ी भूख के दुःख को जानते भी, तौ भी इस का ठीक कारण हम को केवल इतना ही प्रतीत होता, जितना अब प्रतीत है, यह तो हर एक जानता है, कि पेट सूना होने से भूख लगती है, परन्तु किसी ने अभी तक इस बात को भली भांत खोल कर वर्णन नहीं किया, कि भूख लगती क्यों है, यदि हम यह विचार करें, कि मनुष्य ऐसा नन्हा सा जन्मता है, जिस का तोल पूरे मनुष्य के देह की अपेक्षा सैंकड़ों गुणा कम होता है, और फिर बढ़ते २ पूरे डोल का मनुष्य होजाता है, तो हम

सहज ही समझ सकते हैं, कि नये मांस और हड्डी आदि की आवश्यकता की इच्छा जिस से मनुष्य का पिण्ड बनता है; सदैव बनी रहती है, जब मनुष्य पूरे डील तक पहुंच जाता है, फिर भी इस न्यूनता के पूरा करने के लिये जो प्रत्येक अंग के घिसने से होती है, नयी सामग्री चाहिये। इस का प्रसंग तुम भोजन के अध्याय में पढ़ चुकी हो, उसी अध्याय में तुमने यह भी पढ़ा था, कि मनुष्य को किस प्रकार का भोजन आवश्यक है, और भिन्न २ प्रकार के भोजन से क्या २ काम करना पड़ता है। इससमय तुम्हारा अभिप्राय इतना समझने से है, कि भोजन जो हम खाते हैं, किस प्रकार पच जाताहै, अथवा ऐसे रूप में पलट जाता है, कि रुधिर में प्रविष्ट हो सके, जिस से देह की पालना हो, क्योंकि समझ में यही आता है, कि दाल, रोटी मांस, और चावल ऐसे के ऐसे ही रुधिर में नहीं जा सकते, इन को दांतों से चबाया

जाता है, और मुख आमाशय आंतड़ियें और उन के कई अर्कों में मिलाकर प्रस्तुत किया जाता है, इस सारी प्रक्रिया का समझना तनिक कठिन है, परन्तु जहां तक हो सकता है, हम सहल रीति से वर्णन करते हैं ॥

सुनो ! पहिले दान्त हैं, इन से भोजन कुतरा और चबाया जाता है, कि आमाशय और आन्तड़ियों के अर्क इसके प्रत्येक अंश में पहुंच सकें, इसलिये भोजन के समय चबाना बहुत ही आवश्यक काम है, और इस में कभी भूल नहीं करनी चाहिये।

जो लोग भोजन को शीघ्र ही आमाशय में डाल लेते हैं, उनको अजीर्ण रोग से अवश्य दुःख भोगना पड़ता है। सब जन्तुओं के दान्त, रंग और ढङ्ग में एक से नहीं होते, जो जन्तु अपने से छोटे जन्तुओं को खाते हैं, उनके कई दांत लंबे और तीखे होते हैं, कि उन से भच्य को पकड़

सकें और कई आरे की नांई नुकीले होते हैं, कि उनसे टुकड़े २ कर सकें, और जो जन्तु घास पात खाते हैं उनके दान्त छैनी की भान्त होते हैं, जिन से वह बनस्पतियें कुतर सकते हैं, और इन को पीस कर गोंदा सा बनाने के लिए चपटी डाढें होती हैं, परन्तु मनुष्य के मुंह में दोनों प्रकार के दान्त होते हैं। तुम जानती हो, कि बच्चे जब जन्मते हैं, तो उनके दान्त नहीं होते, चाहे सातवें महीने के लगभग दान्त निकलने आरम्भ होते हैं, परन्तु एक वर्ष आयु तक बालक उनसे कुछ काम नहीं लेता, इस से तुमें यह बात सीखनी उचित है, कि जब तक दूसरा वर्ष आरम्भ न हो, बच्चों को कभी कोई ऐसी वस्तु खाने के लिये न देनी जो चबा कर खाने की हो।

यदि हम दांतों की बनावट का वर्णन करें, तो इस के लिये बहुत सा समय चाहिये, इस लिये थूक का वर्णन करने से पहिले साधारण रीति से

उन का कुछ प्रसङ्ग करते हैं। जब दांत ठीक २ तौर पर काम नहीं कर सकते, तौ अजीर्ण हो जाता है, जिस से दांतों को कष्ट पहुंचता है, क्योंकि परमेश्वर ने ऐसा कड़ा नियम बांध दिया है, कि कर्तव्य पूरा न करने के साथ हि उस का दण्ड मिल जाता है, यदि भोजन के सारे के सारे ग्रास निगले जांये, तौ वह बहुत चिर तक आमाशय में पड़े रहते हैं घुलते नहीं, वैसे के वैसे पड़े रहते हैं, क्योंकि वहां कोई कुचल कर छोटा २ करने वाली वस्तु नहीं, और आमाशय और आंतड़ियों के बीच के द्वार पर एक रक्षक है, जो अनघुली वस्तु को आमाशय में से आंतड़ियों में नहीं जाने देता, यदि ऐसा न होता, तो भोजन के बडे २ और कडे टुकड़े आंतड़ियों में जाकर फंस जाया करते। यह ग्रास आमाशय में पड़े सड़ते हैं, खट्टे हो जाते हैं, और इस प्रकार आमाशय के सूक्ष्म पर्दे को जो मुंह तक आया है, कष्ट देते हैं,

इस पर्दे में से एक खट्टा रस निकलता है, यह दांतों के ऊपर के रोगन को जो उनकी रक्षा के लिये चढ़ाया गया है, खाजाता है, फिर दांत गलने लगते हैं, और दुष्ट दांत से मनुष्य को ऐसा दुःख होता है, जिस का कुछ वर्णन नहीं हो सक्ता। इस भांत दुःख में दुःख पड़ता चला जाता है, क्योंकि जब दांत में पीड़ा होगी, तौ भली भांत रोटी नहीं चबाई जायगी, दांतों के भीतर खाद्य के छोटे २ अंश रह जाते हैं, यदि उन के निकालने में ध्यान न किया जाय, तौ वही दांतों की निर्बलता के कारण बन जाते हैं, जो लोग अपने दांतों को स्थिर रखना चाहते हैं, उन्हें चाहिये, कि भोजन के पीछे उन को भली प्रकार शुद्ध कर लिया करें।

जब दांतों से भोजन चवाया जाता है, तौ मुंह की भीतरी त्वचा से और उन छोटी २ थैलियों में से, जो जिव्हा के नीचे होती हैं, एक पत-

ला अर्क निकलता है, जिसे थूक कहते हैं और यह हम तुमें बता चुके हैं, कि थूक रोटी के उस भाग को जो स्टार्च (Starch) नशास्ता सा होता है, पलटा कर शर्करा सी बना देती है।

तुम कहोगी कि हमारे मुंह में थूक क्योंकर आजाता है? मुंह में भोजन होने के कारण से थूक निकलता है, और कई वार स्वादु वस्तु की सुगन्धि से ही भूखे मनुष्य के मुंह में पानी भर आता है, चाहे कितना ही बल क्यों न लगायें, इन छोटी २ थैलियों में से थूक के निकलने को हम नहीं रोक सकते।

जब भोजन मुंह में इतना प्रस्तुत हो चुका है, तो निगला जाता है, और निगलने के समय भी बड़ा भय होता है, क्यों? तुम को बता चुके हैं, कि सांस लेने की नाली भी मुंह में आकर खुलती है, यदि यह प्रस्तुत खाद्य कण्ठ में जाने के पलटे, जो इस नाली के पीछे होता है, और

आमाशय का मार्ग है, उस में चला जाए, तो हमारा श्वास रुक जाय, ईश्वर ने हमें इस डर से रक्षा के लिये दो प्रबन्ध कर दिये हैं, एक तो श्वास लेने वाली नाली का छिद्र इस रीति का बनाया है, कि यत्किञ्चित् वस्तु के छूने से भी ऐसी खांसी होने लगती है, कि जैसे कैसे उस को निकलना ही पड़ता है, दूसरे एक ढकना है, जो खुल सक्ता है, और ढंप सकता है, और अपने आप काम करता है, जब भोजन को निगलते हैं, तो वह सांस लेने की नाली को ढांप लेता है, यदि तुम अपनी उङ्गली को नरखरे पर रखकर निगलो, तो यह छोटा सा ढकना तुमें हिलता हुआ प्रतीत होगा, निगलने में यह एक आश्चर्य्य बात है, और इस से यह सिद्ध होता है, कि हमारा देह हमारे उत्साह बिना बहुत से काम अपने आप करता रहता है, चाहे तुम यह विचारती होगी, कि यदि हम थूक निकालने का पक्का प्रण करें, तो निगल

सकती हैं, भला यत्न तो करो, और अपने जी में यह ठान लो, कि जितना शीघ्र हो सकेगा, निगलूंगी, परन्तु दो तीन वार निगलने से तुमको प्रतीत होगा कि प्रति वार निगलना अधिक कठिन होता जाता है, यहां तक कि परिणाम में जब निगलने के लिये कुछ थूक नहीं रहता, तो तुम रुक जाती हो, तनक ठहरो, कि नया थूक मुंह में आजाय, फिर कठिनाई न रहेगी, इस का कारण यह है, कि जब तक पट्ठों को निगलने के लिये कोई वस्तु प्रतीत न हो, यह तुमारी आज्ञा नहीं मानते, मानो वह यह समझते हैं, कि तुम इन से मनह करती हो।

निगलने के पीछे भोजन लचकीली नाली में से हो आमाशय में जाता है, इस नाली को कण्ठ कहते हैं। आमाशय एक ऐसी थैली है, जिस का एक छोर दूसरे छोर की अपेक्षा बहुत चौड़ा होता है, इसका रूप एक बड़े कद्दू से मिलता
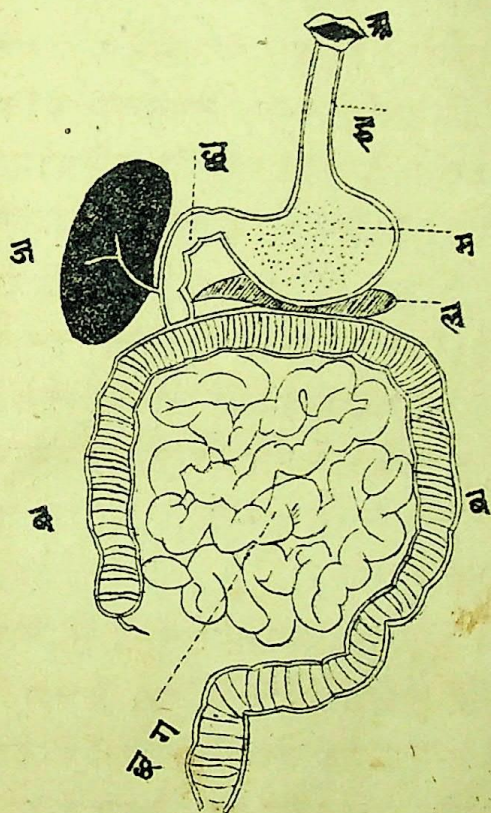
चित्र नम्बर ११ पृष्ठ १५२

झुलता है, चौड़ा सिरा दिल के पास ही ऊपर की ओर होता है, यदि अजीर्णता से आमाशय में पवन भर जाय, तौ फूल कर हृदय को दवाता है, और हृदय अस्वस्थता के कारण धड़कने लगता है, और मांदगी तथा निर्बलता प्रतीत होती है। आमाशय का छोटा सिरा जिगर की ओर इस के अन्त में छोटी आंतड़ी होती है, जिस निरीक्षक पट्ठे का हमने ऊपर प्रसंग किया है, वह इसी स्थान में होता है, यदि कच्चा भोजन आमाशय से बाहर जाना चाहता है, तौ यह द्वार बन्द हो जाता है, हम बता चुके हैं, कि मुख श्वास लेने की नाली नाक और कण्ठ के भीतर की झिल्ली वहुत कोमल होती है। इस चर्म को अंग्रेज़ी में म्यूकसमैम्बरिन (Mucous Membrane) कहते हैं, और यह मुंह से लेकर आन्तड़ी के अन्त तक सुपाक के समस्त यन्त्रों में भीतर की ओर मढ़ा होता है, इस का प्रसंग वारंवार आयेगा, इस लिये उचित है, कि तुम इस

का नाम स्मरण करलो। हम प्रसंग कर चुके हैं, कि मुख का म्यूकस मेम्बरिन्स (Mucous Membranes) छोटी २ थैलियों से थूक निकालता है, इसी प्रकार आमाशय का म्यूकस मैम्बरिन (Mucous Membrane) और अर्क बनाता है, जिस से भोजन पचता है, यह अर्क इतना निकलता है, कि २४ घंटों में ८ सेर के लगभग होता है, यह चबाये हुए भक्ष्य में मिलकर इसे गंदा सा बना देता है, आमाशय की तीन तहें होती हैं, और इसकी भीतें बड़ी दृढ़ और लचकीली बनाई हैं, कि अर्क को भोजन के साथ मिलाने में सहायता दें, क्योंकि जब पाक का काम आरम्भ होता है, तो आमाशय भद्दा कोइ सी भांत हिलाता रहिता है, जिस प्रकार हम किसी वस्तु को गालने के लिये हिलाते रहते हैं, अब तुम कहोगी, कि हमें भीतर का यह सारा वृत्तान्त क्योंकर प्रतीत होगा।

सुनो ! यह बात हमें कई प्रकार से प्रतीत हुई है, आप को क्या जाने निश्चय न आया, कि यह सारा ब्योरा आंख से देखा गया है; परन्तु यह बात सच है, कि पचास वर्ष के लग भग हुए, कि एक पुरुष के आमाशय में अचानक इस की बंदूक चल जाने से गोली लगी, व्रण तो अच्छा हो गया, परन्तु त्वचा में आमाशय के सामने एक छोटा सा छिद्र रह गया। एक निपुण डाकटर के जी में आई, कि पाक-शक्ति का तत्व प्रतीत करने का यह अत्यन्त उत्तम अवसर है; इस छिद्र में से वह झांका करता था और पाक शक्ति की सारी क्रिया अपनी आंखों से देखा करता था; आमाशय का अर्क कटोरे में निकाल कर इस में कुछ भच्य डालता और देखकर आश्चर्य्य करता, कि भच्य वैसे ही सुपक्क हो जाता, जैसे आमाशय में। इस ने यहां तक जान लिया, कि कई प्रकार के मांस एक तार में पिरो कर उसी छेद की बाट उस मनुष्य के आमाशय

में डाले और यह देखने के लिये, कि कितने पच गये हैं, थोड़ा चिर पीछे निकाल लिये, इस भान्त उस ने सिद्ध किया, कि कौनसी वस्तु चिर काल में पचती हैं और कौनसी शीघ्र। आमाशय का अर्क जिस को अंगरेज़ी में गैसट्रिक जूइस (Gastric-juice) कहते हैं, सब प्रकार के भोजनों को पचा नहीं सकता। स्टार्च (Starch) अर्थात् नशास्ता तेल और चर्बी पर इस का कुछ फल नहीं होता, परन्तु जो भच्य ऐलब्यूमन (Albumin) अर्थात् अण्डे की श्वेतता की भान्त होता है, वह शीघ्र सिद्ध हो जाता है।

जब आमाशय के भीतर का पथ्य भली प्रकार पच जाता है, और अच्छी उबली हुई पतली दाल की भान्त बन जाता है, तो आमाशय का छोटा सिरा ढीला हो जाता है और पथ्य को आंतड़ियों में जाने देता है।

सारी आंतड़ियां आठ गज़ के लगभग होती हैं और पेट के नीचे एक बड़े तंग स्थान में कई बल खाये पड़ी रहती हैं, आंतड़ी आमाशय से आरंभ हो कर कुछ दूर तक तो तंग रहती है, फिर चौड़ी हो जाती है, यूं समझो, कि यदि इसकी सारी लंबाई के तुल्य पांच भाग करें, तो चार भाग तक तो तंग रहती है,शेष का पांचवां भाग जिस को बड़ी आंत कहते हैं, बहुत चौड़ा होता है और भोजन का थूक जिस से देह को कुछ लाभ नहीं पहुंच सकता, इस की बाट से निकल जाता है, शेष भक्ष्य छोटी आंतड़ी में पचता है और इसी में से रुधिर भक्ष्यता को चूस लेता है।

हम प्रसंग कर चुके हैं, कि मुख और आमाशय की भांत आंतड़ियोंके भीतर म्यूकसमेम्बरिन (Mucous Membrane) होता है, और यह भी एक पाचक अर्क को निकालता है, मांस, अंडे,दूध, पनीर आदि सारी ऐलब्यूमन (Albumin) का सा भक्ष्य जब

आमाशय में प्रस्तुत होकर आंतड़ियों में जाता है, तो वहां का अर्क इस काम में लगा होता है, कि जो स्टार्च (Starch) अर्थात् नशास्ता सा थूक के फल से बच रहा है, उस को शर्करा बनावे। आंतड़ियों में लबलबे अर्थात् पठे से एक और प्रकार का भी अर्क आता है। लबलबे की बनावट थूक बनाने वाली थैलियों की सी है, परन्तु क़द में उन से बड़ी होती हैं और इसका अर्क सारी स्निग्ध वस्तुओं को गाल देता है, अथवा दूसरे प्रकार के भक्ष्य में इन को मिला देता है। तुम जानती हो कि तेल और पानी को मिलाना कैसा असम्भव है, परन्तु यदि तुम पहिले अंडे की पीतता तेल में डाल कर अच्छी तरह हिलाओ, तो फिर उस में पानी सहज ही मिल सकेगा। इस का कारण यह है, कि बिलोने से तेल के बहुत ही छोटे २ अणु बन सकते हैं और अंडे की पीतता उन के ऊपर लिप जाती है, लबलबे का अर्क भी स्निग्धभोजन के साथ

ऐसा हि करता है, और जिगर का अर्क जिस को सफरा वा पत कहते हैं, इस के साथ आंत में प्रविष्ट होकर इसे सहायता देता है, इस प्रकार भक्ष्य बहुत ही पतला हो जाता है, और जब छोटी आंतड़ी में से होकर जाता है, तौ उस में जो कुछ भक्ष्य अर्थात् पुष्ट करने वाले अंश होते हैं, वह तौ वहीं जीर्ण हो जाते हैं, अर्थात् रुधिर में मिल जाते हैं, और शेष फोक वड़ी आंतड़ी में उतर जाता है, जो देह से बाहर निकाल दिया जाता है।

तुम कहोगी कि खाने का अर्क क्योंकर निकाला जाता है? हम प्रसंग कर चुकी हैं, कि शेष फोक बड़ी आंतड़ी में उतर जाता है, जो देह के बाहर निकाल दिया जाता है।

तुम कहोगी, कि भोजन का सार क्योंकर निकाल दिया जाता है? हम प्रसंग कर चुके हैं, कि छोटी आंतड़ी का म्यूकसमैम्बरिन (Mucous-

Membrane) एक प्रकार का सार निकालता है, इनके सिवा बहुत से छोटे २ सूक्ष्म तार भी इसमें होते हैं, यह कुछ २ ऐसे होते हैं, जैसे कि चकोतरे के छिलके परन्तु छोटी २ फुनसियां सी होती हैं; परन्तु डील में उनकी अपेक्षा छोटी होती हैं, यूं समझो, कि अर्क निकालने वाली थैलियां तो मानो वह नन्हें २ चिन्ह हैं, जो चकोतरे पर कहीं२ होते हैं, और तार फुनसियां हैं, जो उसके छिलके पर होती हैं, अब तो तुम क्या जाने समझ गई होगी, कि आंतड़ी का म्यूकसमैम्बरिन (Mucous-Membrane) किस भान्त काम करता है।

गिनती की गई है, कि आंतड़ी में यह छोटी छोटी फुनसियां चालीस लाख से अधिक होती हैं, इनमें से प्रत्येक के बीचों बीच एक नाली होती है, जो सिद्ध किये हुए भक्ष्य के स्नेह को चूस लेती है, इस प्रकार सिद्ध किये हुये भोजन को काम (Chyme) कहते हैं। बाल जैसी सूक्ष्म रुधिर

की नालियां जो एक फुनसी में कई २ होती हैं, पुष्टिकारक शेष भागों को भोजन में से खींच लेती हैं।

अब तुम को प्रतीत होगया होगा, कि भोजन पचाने के दो द्वार हैं, तो फिनसियें के बीच वाली नालियां, जिन को अंग्रेज़ी में लिकटील्ज़ (Lceteals) कहते, हैं, और दूसरी बाल जैसी सूक्ष्म रुधिर की नाड़ियां जो आंत में होती हैं।

लीकटील्ज़ (Lceteals) अथवा सूक्ष्मशिरा शनैः २ बड़ी २ नालियां बन जाती हैं, और इस भांत भोजन की स्निग्धता इन के बीच में से बहुत सी नालियें में से होकर जाती है, यदि हम उन की व्याख्या करें, तो तुम सुनती २ घबरा जाओगी। परिणाम में वह स्नेह एक बड़ी नाली में आजाता है,जो उन वेंज़ (Veins) अर्थात् काले रुधिर की नाड़ियें में प्रविष्ट होती हैं, जो दिल के बाईं ओर खुलती हैं, और यहां पहुंचते २ इस चिकनाई

का रूप बहुत पलट जाता है, छोटे २ दाने से इस में दिखाई देने लगते हैं, जो शनैः २ सचमुच के रुधिर के दाने बन जाते हैं।

इस के साथ ही वह पालन करने वाले शेष अंग, जो आंत में से बाल सी सूक्ष्म रुधिर की नालियों ने चूस लिये थे,एक बड़ी वेन्ज़ (Veins) में से होकर तुरन्त जिगर में चले जाते हैं।

हृदय को दो काम करने पड़ते हैं, एक तो उसको अपना अर्क बनाना पड़ता है, जिस को

चित्र नम्बर १२

जिगर उलटाया हुआ, और जैसा नीचे से दिखाई देता है।

(ज ज) जिगर (ब) पट्ठा।

तुम जानती हो, कि जिगर कहां है? वह तुम्हारे दायें पहिलू के भीतर हृदय के दृढ़ तल से ऐसा लगा हुआ है, जैसा आमाशय बाईं ओर।
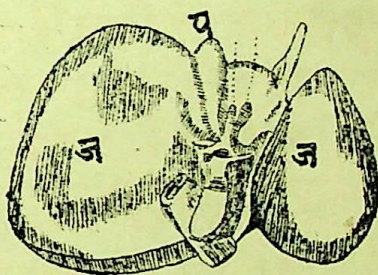
चित्र नम्बर १२ पृष्ठ १५२

पत कहते हैं, दूसरे उसको सब प्रकार के भच्यों के मलिनांश पृथक् करने पड़ते हैं, जो बाल से सूक्ष्म रुधिर की नाड़ियें ने चूस लिये हैं। परमेश्वर ने अपने साधारण संकोच से इन दोनों कामों को मिलाकर एक कर दिया है, अर्थात् जिन वस्तुओं से पत बनते हैं, वह वही हैं, जिन की रुधिर को आवश्यकता नहीं, जो इस से पृथक् कर देने चाहियें, सो हृदय पत बनाने वाली वस्तुओं को रुधिर से निकालता है, और पाक में सहायता देने के लिये फिर आंतों में डालता है, शेष साफ और छना हुआ रुधिर जिगर से निकल कर स्नेह में मिल जाता है। और उन वेनृज़ (Veins) में जा मिलता है, जो सिर के दाईंओर प्रविष्ट होतीहैं। तुमें बताया जा चुका है, कि रुधिर जो दिल के इस ओर होता है, पहिले पहिल वहां से फेफड़ों में जाता है, कि उनमें भली भान्त फिर कर पवन से साफ होजाय। सो नया रुधिर इस से पहिले

कि देह को पलने का काम आरम्भ करे, पवन से आवश्यक आक्सिजन (Oxygen) ले लेता है।

अब हम उन सारी रीतियों को जिन से भोजन पचता है, अथवा देह की पालना के लिये प्रस्तुत की जाती हैं, संक्षेप रीति से फिर लिखते हैं, कि तुम्हें भली भांत स्मरण हो जाय। पहिले तो दान्त भोजन को कुतरते हैं, और थूक उस में मिलकर स्टार्च (Starch) अर्थात् एक प्रकार के नशास्तह के अंशों को शक्कर बना देती है।

दूसरे आमाशय इस को भली भान्त इधर उधर हिलाता है, और गैसट्रिक ज्यूस (Gastric juice) इस में मिल जाता है, जो एल्ब्यूमन (Albumin) अर्थात् अंडे की सुपेदी की भान्त जितने भोज्य होते हैं, उन सब को सिद्ध कर देता है।

तीसरे आंतड़ियों के अर्क इनमें मिल जाते हैं, जिस के पीछे सारा स्टार्च (Starch) शर्करा के रूप में पलट जाता है। और एल्ब्यूमन (Albumin) सिद्ध हो जाता है।

चौथे लबलबे और हृदय के अर्क भोजन में मिल जाते हैं, और भोजन के स्निग्ध अंशों को अत्यन्त छोटे २ भाग करके उनको परस्पर एक प्राण कर देते हैं ॥

अब यह बात विचार में आती है, कि ऐसी लंबी पेचदार रीति जिस में इतनी रीतियों से काम लिया जाता है, यदि किसी भाग में कोई विघ्न अथवा रुकावट हो जाय, तो सारे काम में उलझन पड़ जाता होगा। निस्सन्देह ऐसा ही होता है। जितने छोटे २ रोग मनुष्य को सताते हैं, उनमें से बहुत से ऐसे हैं, कि जिन में प्राण का भय तो नहीं, परन्तु जीवन नीरस हो जाता है, उन में आधे तो अवश्य ऐसे होंगे, कि जो पचाने वाले कई अङ्गों के बिगड़ जाने से उत्पन्न हो जाते हैं, और इसमें बड़ी बात यह है, कि इनके बिगड़ने का दोष हम हि पर आता है। रोग की अवस्थाओं के सिवा आमाशय आन्तड़ियां और जिगर और लब-

लबा अपने २ कामों को उचित सीमातक करने के लिये प्रसन्नता पूर्वक प्रस्तुत रहते हैं।

परन्तु यदि हम बिना चबाई रोटी अथवा मांस के बड़े २ टुकड़े आमाशय में डाल लें, तौ क्या होगा ? आमाशय अपनी ओर से जहां तक हो सकेगा, उनके पचाने में यत्न करेगा, और अपनी सामर्थ्य से बढ़ कर काम कर डालेगा, परन्तु परिणाम में बेचारा कुछ काल पीछे निर्बल पड़ जायगा, और फिर भली भान्त चबाए हुये भोजन को भी जीर्ण न कर सकेगा। यदि हम ऐसा भोजन करें, जिसमें घी अथवा मक्खन बहुत हो, तौ इस से भी कर्दम (Chyme) अर्थात् भोजन के गोंदे में इतनी स्निग्ध वस्तु चली जाती हैं, कि जिगर और लबलबह इनका प्रबन्ध नहीं कर सक्ता, यदि हम प्रमाण से अधिक खाजायें, तौ जिगर खाद्य के आधिक्य से अट जाता है, रुधिर और पित्त दोनों इस में रहते हैं, और रुधिर में से

मलीनता दूर नहीं कर सकता, और न इस को काम के योग्य बना सकता है।

जिगर में रुधिर छनने से पहिले, आमाशय और नाड़ियों में जो भक्ष्य धसता है, उस में ऐसी वस्तु भी बहुत होती हैं, जो देह के लिए विष हैं, इसलिये यदि यह विषाक्त अंश पृथक् न किये जांय, और पत बन कर आन्तड़ियों में उलटे न जांय, तौ रुधिर में विष होने के कारण आश्चर्य्य नहीं, कि हम रुग्न, मृतप्राय और अस्वस्थ होजांय।

चाहे यहां के लोगों का भोजन बहुत सीधा सादा है, परन्तु तुम जानती हो, कि कोई वस्तु अपरिमित खाजाने से बहुधा अजीर्णता हो जाती है, इसी कारण यहां के लोगों को अजीर्णता बहुधा होती है, कि एक वार ही वह बहुत सा भोजन कर जाते हैं, जिस से आमाशय इतना भर जाता है, कि भोजन को पका नहीं सकता, इसी लिये गैसट्रिक ज्यूस (Gastric Juice) इस से उदर-व्यथा

और दूसरे प्रकार के दुःखदायी चिन्ह उत्पन्न हो जाते हैं। बात रोग से हिन्दुस्तान के लोगों को इतना कष्ट होता है, कि और किसी देश में ऐसा नहीं होता, इस का कारण केवल यही है, कि आमाशय को कूट २ कर भर लेने का स्वभाव इस देश के लोगों में पड़ गया है।

अजवायन का अर्क, पूदीने का अर्क और कितने ही और २ अर्क जो पंसारी बेचते हैं, उस अजीर्णता की औषधियें हैं, जिस से बात और कुलंज की पीड़ा हो जाती है, कबज़ और दस्तों को तो तुम सब जानती हो, परन्तु यह बात नहीं समझतीं, कि यह दोनों शीघ्र ही स्वास्थ्य को सर्वतः बिगाड़ देते हैं। मलरोध जिगर के अटने से उत्पन्न होता है और जिगर बहुत स्निग्ध भोजन करने और व्यायाम न करने से अट जाता है। यहां की स्त्रियें और विशेष करके उन को जो पर्दे में रहती हैं, सदैव यह कुरकुरी रहती हैं और

जब तक उन की दुर्दशा नहीं होजाती और रोगी का किसी न किसी भान्त निर्वाह हुए चला जाता है, यह कुरकुरी बड़ी नहीं प्रतीत होती, परन्तु यह बड़ी भूल है।

जब मल बड़ी आंत में चला जाता है, तो उस में कई परिवर्तन होते हैं, नन्हें २ कीड़े उत्पन्न हो जाते हैं और इस प्रकार कई विष उत्पन्न हो जाते हैं। यदि वह आंत में ही रहें तो, रुधिर में प्रविष्ट हो जाते हैं और बड़ा कष्ट देते हैं; सच है, कि जिस मनुष्य की देह से मलिनांश उचित रीति से नहीं निकलते, उस की दशा यह है, कि समझ रक्खो वह नित्य विष भोजन करता है।

बहुधा ऐसा होता है, कि सुधारने के अभिप्राय से और मलिनांश को निकालने का यत्न करने से दस्त लग जाते हैं और यह बुराई के हटाने की स्वाभाविक युक्ति है, इस की चिकित्सा केवल यही है, कि भोजन सुपच किया जावे और

बहुत सा व्यायाम किया जाय और अच्छा हो, कि हम अपने घर के चारों ओर इस भांत फिरा करें, जिस प्रकार कोई वनपंछी अपने पिंजरे में फिरता है, उन नियमों को न तोड़ें, जो परमात्मा परमेश्वर ने स्वर्ण लेखनी से हमारे ललाट में लिख रक्खे हैं। स्मरण रहे कि हम नियमों से किसी प्रकार बाहिर नहीं होसकते, क्योंकि उन के तोड़ने के साथ ही दगड मिल जाता है; यदि हम अस्वस्थकारी रीति से रहें, अथवा स्वर्गीय प्रकाश से शून्य रहें, अथवा जिस बड़े जगत् में रहने के लिये हम आये हैं उस से अज्ञ रहें, अथवा इन्द्रिय और मछलियों को जो बर्ताओ के लिये दिये गये हैं अकर्म रहने दें, तो न केवल हमें वरंच हमारी सन्तान को कष्ट उठाना पड़ेगा।

तुम में से वह जो लकीर की फकीर हैं, क्या जाने यह कहेंगी, क्या हुआ ! लड़कियां इसी भांत रहने के लिये उत्पन्न हुई हैं, केवल लड़कियां

ही नहीं वरंच लड़के भी, जो हम से उत्पन्न होंगे दुःख सहेंगे। हमारे रूप गुणों के सिवा और कितनी ही वस्तु हैं, जो हमारी सन्तान को हम से प्राप्त हैं। जाति का सारा प्रबन्ध जिस को हिन्दू ऐसा पवित्र समझते हैं,केवल इस बात के जानने से स्थिर हुआ है, जो कई पीढ़ियें बीतीं, कि उन के पण्डितों को प्रतीत था,कि बालक अपने पिता पितामह से स्वभाव प्राप्त करते हैं, इस प्रबन्ध में यह बात मानी गई है, कि ब्राह्मण का पुत्र बड़ा पण्डित बन सकता है और वैश का पुत्र उत्तम व्यापारी बन सकता है; पुत्र में पिता के गुण आजाने स्वाभाविक हैं, और यह बात ठीक सिद्ध हो चुकी है,कि बहुत से रोग,न्यूनता और निर्बलता निश्चित परम्परा से घरानों में चले आते हैं।

जब स्त्रियें जिन से वंश चलता है, ऐसी अवस्था में रहें,जो प्रकृति के समग्र नियमों से विरुद्ध हो, तो सारी जाति को उस का फल क्या न पहुंचेगा।

थोड़े दिनों से इस बात का बहुत यत्न हो रहा है, कि बड़े घराने की स्त्रियों की चिकित्सा के लिये स्त्री डाक्टर हों और निस्सन्देह जिन पुरुषों ने यह युक्ति निकाली है और इस की सहायता की है, वह बड़े प्रतिष्ठा के योग्य समझे जाने चाहियें, परन्तु कई विचारवान् मनुष्य शोक करेंगे और मन में कहेंगे, कि ऐसी चिकित्सा का प्रबन्ध कर देने में जिस से रोग अधिक काल तक रहे, कुछ लाभ नहीं, क्योंकि इस से मुंह नहीं मोड़ा जा सकता, कि बड़े घराने की स्त्रियों को बहुत से कष्ट इस लिये होते हैं, कि उन को ऐसी भान्त रहना पड़ता है, जो स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। इन को छोड़ निर्धनों के घरों में जाओ अथवा गांओं में देखो, जहां किसानों की स्त्रियें चौपाये हांक कर घर लाती हैं और खुले हरे भरे खेतों में काम करती हैं, वहां यह असंख्य रोग, जो इन घरों के भीतर बैठने वालियों को झेलने

पड़ते हैं दिखाई नहीं देते, हां रोग और मृत्यु तो वहां भी होते हैं; परन्तु यह यूं ही छोटे२ रोग जो पर्दे में रहने वाली स्त्रियों को बहुधा सताते रहते हैं, वहां नहीं होते। इस प्रकार के दुःख स्त्रीडाक्टर नियत हो जाने से दूर हो जायेंगे, परन्तु यह भी डर है, कि रोग का सच्चा कारण अधिक चिर तक रहे, ईश्वर को हम से बड़ा स्नेह है, वह नहीं चाहता कि जीव व्यर्थ दुःख पड़े भोगें, इस लिये हम जब उस के नियमों के विरुद्ध कुछ करते हैं, वह हमें दण्ड दिये बिना नहीं रहता, वह दुःख के द्वारा हम को यह सिखाता है, कि दुःख के कारणों से हमें बचना उचित है। परन्तु इस विषय को असल विषय से कुछ सम्बन्ध नहीं, इस लिये चाहे पैतृक रोग वा गुणों के विषय में बहुत कुछ कहना शेष है, अर्थात् किस प्रकार पितृपितामह से गुण और अपगुण चले जाते हैं; परन्तु इस समय हम इस को यहीं छोड़ते हैं। बालकों के पालन के

विषय में फिर इस बात को छेड़ेंगे। अब हम अपने वास्तव असल विषय पर आते हैं, अर्थात् उन कारणों का वर्णन करते हैं, जिन से अजीर्णता उत्पन्न होती है।

इस देश में अजीर्णता का बड़ा कारण यह है, कि यहां के लोग किसी न किसी भान्त अफीम को अवश्य वर्तते हैं, तुम सब जानती हो, कि बहुत सी अफीम खाने से मनुष्य सो जाता है, यदि थोड़ी सी खाई जाय, तो मनुष्य ऐसा हो जाता है, मानों आधा सोता है और आधा जागता है; अफीम खाने वाले की आंखों की ओर देखो, तो तुरन्त प्रतीत हो जायगा, कि इस का जी प्रसन्न नहीं, वरंच एक भ्रम की सी दशा में है, इस का देह भी अधमरा सा होता है, क्योंकि अफीम के पहुंचने से देह में सामर्थ्य कम हो जाती है और पाचकता, पुष्टता का काम बहुत ढीला होने लगता है, और हमारे देह के अंग भी कम घिसते हैं।

हिन्दुस्तान के बहुधा बालकों की माता इस काम को वर्त कर देख चुकी हैं, चाहे इस को वर्णन नहीं कर सकतीं और इस अभिप्राय से कि बालकों को भूख न लगे, और घड़ी२ दूध न पिलाना पड़े, विशेष कर इस अभिप्राय से कि इन की आंतड़ियां और गुर्दे काम करने से रुक जायें, अर्थात् मलरोध रहे और मूत्र न आये, बहुत सी स्त्रियें अपने बच्चों को तनिक अफीम खिलाती हैं, मानों बच्चों को सुथरा रखने के दुःख से बचने के लिये, इन को प्रतिदिन भयानक विष देती हैं।

अफीम का फल इस प्रकार होता है, कि म्यूकस मेम्बरिन (Mucous Membrane) को अर्क निकालने से रोक देती है। यदि तुम पेट भर कर खाओ और उस पर पूरे प्रमाण से अफीम निगल जाओ, तो जब तक अफीम का फल रहेगा, अन्नपाक नहीं होने लगेगा, इसी पर विचार कर सकते हैं, कि नित्यं प्रति अफीम खाने वाले की पाचकता-शक्ति

अवश्य निर्बल हो जाती है, जिस पुरुष ने पक्के अफीमी को भोजन पचाने की शक्ति न होने से, हर पल घुट२ कर मरते देखा है, वह सदैव इसको बुरा कहेगा, क्योंकि यद्यपि इस से मनुष्य सदैव मर नहीं जाता, परन्तु इस में मनुष्यपन नहीं रहता, यह मनुष्य को पशु बना कर छोड़ती है। सम्भव है, कि अफीमी बहुत वर्ष जीता रहे; परन्तु निरस्थि जन्तु की भान्त जिन्हें हम जन्तु भी काठनता से कह सकते हैं, केवल अधमरा रहेगा, अफीम चाहे थोड़ी सी भी खाई जाय, तो भी अर्क निकालने की शक्ति को कम करके देह की क्रिया नहीं होने देती। यदि हमें स्मरण रहे, कि यह अर्क पाचकता में आवश्यक हैं और पाचकता से रुधिर उत्पन्न होता है, और वही हमारे देह में प्राण हैं, कभी अफीम को छूहें भी नहीं, इसकारण प्रत्येक सुघड़ स्त्री को इस बात में बड़ा ही यत्न करना चाहिये, कि इसके सारे कुटुम्ब में अफीम कोई न खाय।

इस बात के समाप्त करने से पूर्व इस बात का प्रसंग छोड़ना भी उचित प्रतीत होता है, कि डाक्टर लोक जिव्हा की परीक्षा क्यों करते हैं, और इस के रूप से रोगी का रोग क्यों कर जान जाते हैं, इस का कारण यह है, कि जो म्यूकस-मेम्बरिन (Mucous Membrane) जिव्हा पर है, वही आमाशय और आंतड़ियों के भीतर निरन्तर चला गया है, इस लिये यदि जिव्हा मैली वा मैल से लिबड़ी हुई है, तो शेष म्यूकस मेम्बरिन (Mucous Membrane) भी ऐसा ही होगा; सो जिव्हा के वर्णन से अजीर्णता का प्रमाण हो सकता है, इस से अधिक और कुछ प्रतीत नहीं होता और जो लोग यह विचार करते हैं, कि डाक्टर ऐसे रोगी के लिये जिस का जिव्हा के सिवा और उसने कुछ नहीं देखा, शेष वृत्तान्त जान लेने के बिना बेखटके चिकित्सा कर सकता है, बड़ी भारी भूल में है।

———

छठा अध्याय।

आंखें—अर्थात् हम किस प्रकार देखते हैं, हम इस अध्याय के आरम्भ में एक बड़े मनुष्य का वचन लिखते हैं।

इन पांचों शक्तियों में जिन को ज्ञानेन्द्रिय कहते हैं, दर्शन-शक्ति निःसंदेह सब से उत्तम है, यदि हम मनुष्य को एक ऐसा मान लें, जो ज्ञानेंद्रियों के सिवा सब-शक्तियें रखते हों, और जिन्हें छूने से सहजे २ ज्ञान करने का स्वभाव हो गया हो, उन को जब यह बात प्रतीत हुई हो, आंख अर्थात् एक गोली और उसके एक खाने के द्वारा जिस का केन्द्र एक इञ्च से अधिक नहीं, एक पल भर में और अपने स्थान से कहीं जाय, बिना मनुष्यों के एक झुण्ड वा अत्युत्तम प्रासाद अथवा दूर तक के दृश्य को देखना सम्भव है, तो वह कैसे अचंभे में होंगे।

वास्तव में मनुष्य की आंख ऐसी ही है, यह केवल एक गोली है, जो प्राय डेढ़ इञ्च के केन्द्र के घर में जिस का स्वरूप कटोरे का सा है, लगी हुई है।

यद्यपि मनुष्य की आंख छोटी सी है, परन्तु ऐसी आश्चर्य्य रीति से बनाई गई है, कि इस की बनावट की सूक्ष्मता और पूर्णता का व्योरा एक अध्याय में पूरा २ नहीं वर्णन किया जा सकता, इसके सिवा तुम को ज्ञानेन्द्रियें की कई साधारण और अत्यन्त सादी ही बातों के समझने के लिये भी इतना आवश्यक है, कि पदार्थ-विद्या में तुमें वर्तमान ज्ञान से कुछ अधिक ज्ञान हो, इसलिये केवल इतना हो सकता है, कि आंख की बनावट का वृत्तान्त एक सीधे तौर पर तुमें समझा दें, हां इस बात को जहां तक हो सके स्पष्ट रीति से वर्णन करें, कि प्रकाश का फल आंख पर क्यों, और किस प्रकार होता है। तुम पढ़ चुकी हो कि

पवन में नन्हीं २ लहरें हिलती हैं, और आंख के उस भाग में जिस में प्रकाश के गुण जानने की शक्ति है, टकराती हैं, और दृष्टि के अंशों के द्वारा मस्तिष्क को समाचार पहुंचाती हैं और मस्तिष्क उस समाचार के कारण उस के रूप रंग और ढंग से ज्ञानी हो जाता है। चाहे तुम इस बात से अचम्भे में आजाओगी, परन्तु सच यही है, कि मस्तिष्क हि देखता है, यह आंखे केवल देखने का द्वार हैं, यदि मस्तिष्क सोता है, अथवा सावधान नहीं, तो चाहे आंख में कितना ही प्रकाश पहुंचे और अपना अत्यन्त आवश्यक समाचार मस्तिष्क तक पहुंचाये, परन्तु हम कुछ नहीं देखते, अथवा यूं कहो, कि हम उन प्रकाश की किरणों के स्वरूप रङ्ग और ढङ्ग से वाकिफ नहीं होते, जो हमारी आंखों से लग कर जाती हैं।

इस लिये हम आंख के ढेले का वर्णन सब से पहिले करेंगे, परन्तु इस से भी पहिले यह समझा
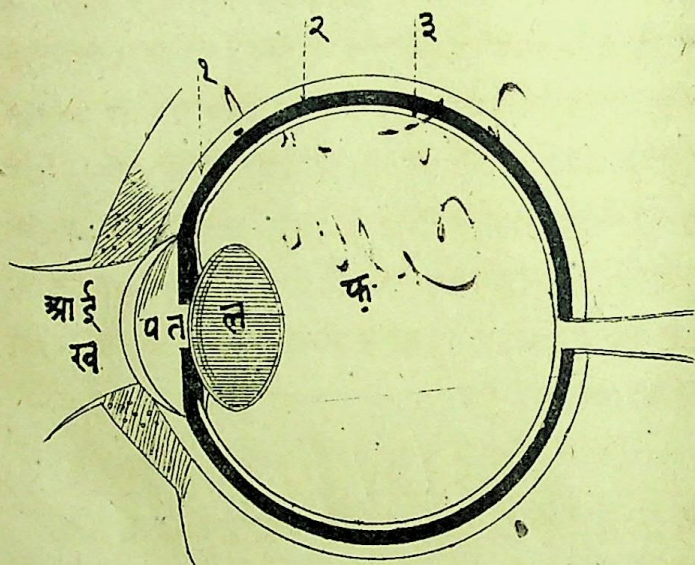
चित्र नम्बर १३ पृष्ठ १७१

देना आवश्यक है, कि आंखें देह के किस भाग में होती हैं। क्योंकि आंख एक गढ़े में होती है, इस लिये भवें, नाक, और गाल इसको बाहिर के आघातों से बचाने के लिये बाहर उभरे हुए होते हैं, और आंख देह के सब से ऊंचे भाग में इस लिये रक्खी गई है, कि दृष्टि दूर तक जा सके। यदि आंखें नीचे को होती, तो दृष्टि दूर तक न जा सकती, और किसी झाड़ी वा छोटी सी रोक से भी प्रकाश की किरणें रुक जातीं, और चोट भी बहुधा लगती रहती।

चित्र नम्बर १३

मनुष्य की आंख

१ लाभकारी त्वचा, जो सब के ऊपर होती है।

२ कृष्ण त्वचा जो बीच में होती है।

३ तीसरी त्वचा जो सब से भीतर होती है।

आयरिस (Iris)

१३वें चित्र में तुम देखोगी, कि आंख का ढेला एक खोखली गेंद है, और उस के सामने की ओर एक छिद्र है, ढेले की तीन पृथक् २ तहें हैं, और छिद्र पर एक मुड़ी हुई स्पष्ट और स्वच्छ खिड़की है, जैसे दर्पण और इसके पीछे एक पर्दा है, जो आगे को आसकता है, और पीछे को हट सकता है, इसके बिना ढेले में तीन भिन्न २ और स्वच्छ वस्तु हैं, जिन में से एक तो जलवत् है, दूसरी फालूदे की भान्त, तीसरी इन से कड़ी है, और यह दर्पणवत् है।

(ख) खिड़की।

(प) यह भाग जल के से तरल पदार्थ से भरा हुआ होता है।

(त) तल।

(ल) लैन्स (Lens)

(फ) खोखल भाग जो फालूदे जैसी लसलसी वस्तु सी भरा हुआ होता है।

१म, वा सब से वाहर का पर्दा, मोटा और श्वेत है, और इस में से प्रकाश नहीं निकल सकता, इस को हम आंख की श्वेतता कहते हैं, सामने के गोल छिद्र के ऊपर एक स्पष्ट स्वच्छ दर्पणवत् खिड़की लगी हुई है, जो जेब घड़ी के शीशे की भांत बाहिर को उभरी हुई होती है, इस खिड़की में से प्रकाश की किरणें विना किसी भान्त की रुकावट के जा सकती हैं, और यह अक्षि के भीतरी भाग को मट्टी आदिक हानिकारक वस्तुओं से बचाए रखती है।

दूसरा पर्दा मोटा और काला है, और इस के काम का वृत्तान्त आंख के आश्चर्य्यमय कल के समग्र वृत्तान्त में से बड़ा मनोहर है। यह तुम जानती ही हो, कि काली वस्तु केवल इसी कारण काली होती हैं, कि वह सब प्रकाश की किरणों को चूस लेती हैं, और किसी किरण को *ईथर

*ईथर (Ether) एक मान ली हुई वस्तु है,

(Ether) में जो उजाले का द्वार है, उलटा जाने नहीं देतीं, इसलिये यह मोटा काला पर्दा प्रकाश के घबरादेने वाली किरणों को ढेले में से होकर भीतर की अंधेरी खोखली ओर नहीं पहुंचने देता, वरंच इस समय प्रकाश की किरणों को भी चूस लेता है, जो शीशे की खिड़की की बाट से प्रविष्ट होती हैं, और मस्तिष्क को समाचार पहुंचा देने के पीछे किसी काम को नहीं रहतीं, यह काला पर्दा जब ढेले के गोल छेद के पास पहुंचता है, तो पलट कर उस का एक आश्चर्य पर्दा बन जाता है, जिस के द्वारा शीशे की खिड़की में से न्यून

जिस के विषय में यह विचार है, कि वह पवन से भी हलकी और पतली है, प्रत्येक स्थान और प्रत्येक वस्तु में विद्यमान है, उष्णता और प्रकाश इसी के द्वारा सूर्य्य से धरती तक आते हैं, और हिन्दू इसको पांचवा तत्व विचार में लाते हैं।

वा अधिक प्रकाश प्रविष्ट हो सकता है, जैसा कि दुपहरि के समय हम खिड़कियों और द्वारों के आगे पर्दे डाल देते हैं, कि अधिक प्रकाश हमारी आंखों को हानि न पहुंचाये, और जब सांझ को अन्धेरा हो जाता है, तो हम पर्दों को उठा देते हैं, कि अधिक प्रकाश भीतर आये, इसी भान्ति उस पर्दे की दशा है, जो आंख की खिड़की के पीछे लगा हुआ है। ढेले के छिद्र के अनुसार यह पर्दा भी गोल है, और इस के ठीक बीच में एक छेद है, यह पर्दा बड़ा लचकीला है, जब अधिक प्रकाश की आवश्यकता होती है, तो यह सुकड़ जाता है, जैसे गाड़ी के चक्रों में लकड़ियां होती हैं, इस पर्दे में पट्ठों के डोरे होते हैं, जो पर्दे को इकट्ठा कर देते हैं, और बीच के छेद को बढ़ा देते हैं, जब कम प्रकाश की आवश्यकता होती है, तो इस के लिये और डोरे नियत हैं, पर्दे के चारों ओर इनके छल्ले लगे हुए होते हैं, और जैसे थैली

वा बटुए का मुंह डोरा खैंचने से बन्द हो जाता है, ऐसे यह डोरे भी छेद को छोटा कर देते हैं, इस पर्दे का रंग मनुष्य जाति मात्र में ऐकसा नहीं होता, किसी का नीला, किसी का भूरा होता है, परन्तु हिन्दुस्तानियों का प्राय काला अथवा भूरे रङ्ग का होता है, इस पर्दे के रंग के अनुसार हम कहते हैं, कि अमुक व्यक्ति की आंखें करंजी वा भूरी वा काली वा शर्बती हैं, और क्योंकि इस पर्दे के रंग कई प्रकार के होते हैं, इसको आयरिस (Iris) अर्थात् इन्द्रधनु का पर्दा कहते हैं, क्योंकि तुमने देखा होगा, कि धनुष में भी जो वर्षा के पीछे आकाश पर दिखाई देता है, कई रंग होते हैं।

यदि तुम किसी मनुष्यके आयरिस (Iris) को ध्यान से देखो, तो एक गोल कृष्ण-चिन्ह इस के बीच में तुमें दिखाई देगा, जिस से तुम तिल कहती हो, परन्तु सच पूछो तो यह काला चिन्ह

नहीं, आयरिस (Iris) पर्दे का गोल छेद है, जिस में से आंख की काली धुरी तुम्हें दृष्ट आती है, इस की सिद्धि सुगम है, आंख के ऊपर कोई सायेदार वस्तु रक्खलो, कि प्रकाश की कुछ किरणें रुक जायें, फिर तुम देखोगी, कि अधिक प्रकाश प्रविष्ट करने के लिये वह काला छेद एक आन की आन में बड़ा हो गया, अब साये को आगे से हटा लो, कि आंख में शीघ्र प्रकाश आवे, फिर देखो, कैसा झट पट पर्दा केन्द्र अर्थात् मध्य के ओर विस्तृत होगया है, और हानि कारक तीक्ष्ण प्रकाश को रोकने के लिये छिद्र को छोटा कर दिया है।

यह पर्दा हमारी इच्छा के अधीन नहीं, स्वयं काम करता है, चाहे हम कितना ही यत्न क्यों न करें, परन्तु इस छेद को कम करना वा बढ़ाना अथवा उस को काम से रोक देना हमारी शक्ति से बाहिर है। अपनी सामर्थ्य भर तो आयरिस (Iris) अपने काम को ऐसा ठीक २ करता है, कि कभी भूल नहीं होती, परन्तु कई काम इस

की सामर्थ्य से बाहर हैं; जैसा कि यदि हम छिद्र की ओर देखें तो आयरिस (Iris) चाहे अपना सारा बल लगाये, परन्तु उस के तीव्र प्रकाश को अपनी निर्बलता के कारण ढेले में प्रविष्ट होने से और आंख के भीतरी अत्यन्त कोमल पर्दे को जिस में प्रकाश जानने की शक्ति है, हानि करने से नहीं रोक सकता, सो थोड़े चिर के लिये चुन्धिया जाती हैं, और कुछ देख नहीं सकतीं। इस भान्त जब रात होती है, प्रकाश की किरणें शनैः २ निर्बल होती जाती हैं, तो यह छिद्र चाहे सारा ही खुल जाय, परन्तु इतना प्रकाश इस में नहीं आसकता, कि मस्तिष्क को सीधा समाचार पहुंचा सके, इसलिये हमें वस्तु धुन्दली दिखाई देती हैं।

आंख का तीसरा वा सब से भीतरी पर्दा ऐसा बनाया है, कि तनिक प्रकाश से भी उस पर झट फल हो जाता है; इस की बनावट का वृत्तान्त तुमें पूरा २ समझना तो असम्भव है, परन्तु इतना

बताते हैं, कि इस का कुछ भाग देखने के अङ्ग की स्वच्छ कोमल झिल्ली में फैला हुआ है। प्रकाश की किरणें जो आंख की खिड़की में से आती हैं, इसी कोमल जीवित पर्दे से टक्कर खाती हैं, वहां से दर्शनेन्द्रिय जिस को आंख की बिजली कहना चाहिये; ब्रह्माण्ड में किसी वस्तु के देखने का समाचार पहुंचाता है।

अब हम उन स्वच्छ पदार्थों का वर्णन करते हैं, जिन से ढेला भरा हुआ है। पहिली वस्तु तो सर्वत: पानी की भान्त है; जिस से आंख का वह भाग भरा हुआ है, जो शीशे की खिड़की के पीछे है, इस में आयरिस (Iris) का कोमल पर्दा तैरता रहता है; जिस के कारण चोट के आहट से रक्षित और सदैव कोमल रहता है। खोखला ढेला एक गाढ़ी वस्तु से भरा हुआ है, जो लुआब की भान्त होती है, इस का एक काम यह है, कि ढेले को सुकड़ने से रोकती है, क्योंकि यदि यह शून्य

होता तो सुकड़ जाया करता, इन को स्वच्छ वस्तुओं के बीच में आंख का बड़ा प्रयोजनीय भाग है, जिस के बिना हम स्पष्ट देख नहीं सकते, यद्यपि इस के बिना भी सायादार खिड़की में से प्रकाश प्रविष्ट हो कर भीतर प्रकाश पहुंचाने वाले पर्दे तक पहुंच जाता है और वहां से मस्तिष्क में समाचार पहुंच जाता, परन्तु सर्वतः क्रम विरुद्ध होता, जिस से मस्तिष्क को केवल उजाला प्रतीत हो जाता है और प्रकाश की किरणों का वर्ण वा स्वरूप कठिनाई से प्रतीत हो सकता, इस का कारण और तीसरी स्वच्छ वस्तु का काम कुछ हम वर्णन तो करते हैं; परन्तु उस के भली भांति समझने के लिये तुमें पदार्थ-विद्या से कुछ अधिक ज्ञान होना चाहिये, तुमारी वर्तमान विद्या यथेष्ट नहीं।

इस को समझाने के लिये आवश्यक है, कि थोड़े चिर के लिये प्रकाश के गुणों का वृत्तान्त

जो कुछ तुम पढ़ चुकी हो, फिर वर्णन किया जाय, तुमें यह बता दिया गया है, कि प्रकाश केवल रूप पलटी हुई उष्णता है, और इसी भान्त कहा जा सकता है, कि उष्णता स्वरूप पलटी हुई चेष्टा है, सो प्रकाश केवल इस ईथर की चेष्टा है, जिस में उजाला होता है। अब सूर्य में प्रकाश होनेका व्योरा सुनो; सूर्य का प्रकाश इस प्रकार उत्पन्न होता है, कि सूर्य के परमाणुओं के जलने से चेष्टा उत्पन्न होती है और प्रकाश की लहरें सब ओर विस्तृत हो जाती हैं और धरती की ओर आती हुई यह किरणें कितनी ही ठोस और धुन्दली वस्तुओं से टकराती हैं, जिन में से निकल नहीं सकतीं और क्योंकि बहुधा वस्तु समग्र प्रकाश की किरणों को, जो उन पर पड़ती हैं, चूस नहीं सकतीं, इस कारण कई किरणें उन पर से उचट कर प्रकाश की निर्बल किरणों के रूप में ईथर (Ether) को उलटी लौट जाती हैं। तुम यह भी पढ़ चुकी हो, कि भिन्न २

वर्ण दिखाई देने का कारण यह है, कि सब स्थान प्रकाश को एक जैसा चूस नहीं सकतीं।

अब मान लो कि हम अन्धेरे घर में हैं और हमारी आंखें खुली हैं और जैसा कि तुम पढ़ चुको हो, यह घर सर्वतः शून्य है; इस में केवल एक लाल पर्दा है, जिस पर एक श्वेत वर्गक्षेत्र बना हुआ है, और इस में एक गोल काला चिन्ह है। क्योंकि पवन में कोई प्रकाश की किरणें नहीं, जो इन से लगें और प्रकाश की निर्बल किरणें हमारी आंखों में पहुंचें; इस कारण हम कुछ देख नहीं सकते। अब हम एक मोम की बत्ती जलाते हैं, जो तुम जानती हो कि एक प्रकार का बचा रक्खा हुआ सूर्य का प्रकाश है, इस के जलते ही हम को लाल पर्दा प्रतीत होने लगा, जिस पर श्वेत वर्ण का वर्गात्मक आकार और गोल कृष्ण चिन्ह है, इस का क्या कारण है।

पहिले हम श्वेत वर्ण वर्गात्मकक्षेत्र का वर्णन करते हैं; तुम पढ़ चुकी हो, कि किसी वस्तु के श्वेत कहने से केवल यह तात्पर्य है, कि इस का तल प्रकाश को तनिक भी नहीं चूसता, जितना प्रकाश इस पर पड़ता है, इतना ही वह ईथर को लौटा देता है, इस लिये प्रकाश की किरणें, जो मोम की बत्ती से निकल कर उस वर्गाकार पर पड़ी थीं, वह उस पर से उचट कर निर्बल प्रकाश की ओर जाने वाली लहरें बनकर ईथर में(Ether) में मिलीं और हमारी आंखों में पहुंचीं और हम को एक वर्गात्मकक्षेत्र जिस में से श्वेत प्रकाश आता है प्रतीत हुआ।

गोल काले चिन्ह की भी यही दशा है, इस का तल सारा प्रकाश चूस लेता है, इस लिये हमें यह प्रतीत होता है, कि एक ऐसी कोठरी में जो थोड़ी बहुत प्रकाश की किरणों से भरी हुई है, एक गोल चिन्ह है, जिस से सर्वत: प्रकाश नहीं नि-

कलता, लाल पर्दे का तल प्रकाश की किसी २ किरण को चूस लेता है, और किसी २ को लौटा देता है, यही कारण है, कि हमें इस का वर्ण प्रतीत होता है। तुमें बताया जा चुका है, कि किसी तल का वर्ण, जो हमें दिखाई देता है, इस बात पर निर्भर करता है, कि सात वर्ण की किरणों में से कौन सा वर्ण यह तल चूसेगा और इस का रूप चाहे कैसा ही हो, प्रकाश की किरणों का प्रतिबिम्ब उसी रूप में बनकर हमारी आंखों में पड़ता है।

इसी प्रकार हम भिन्न २ वस्तुओं के वर्ण और रूप से वाकिफ होते हैं; यदि कोठड़ी शूनी न होती और कुरसियें मेंजों आदि पदार्थों से भरी हुई होती, तो बत्ती का प्रकाश भिन्न२ रूपों और तलों पर पड़के हमारी आंखों में प्रविष्ट होता और उन सब रूपों और वर्णों का समाचार मस्तिष्क को पहुंचाता।

यह नहीं हो सकता, कि मोम बत्ती का प्रकाश जो केवल एक विन्दु से निकलता है; कोठड़ी की वस्तुओं पर निरन्तर तीक्ष्णता और स्वच्छता से पड़े; क्योंकि कई वस्तु दूर हैं और कई वस्तुओं के कई भाग तो प्रकाश के सामने हैं और कुछ सामने नहीं; सो यदि तल निरन्तर सम तल न हो, प्रकाश उस पर भिन्न बल और भिन्न२ रीति से भिन्न २ स्थान में पड़ता है, दूसरे हमारी आंखें कोठड़ी की प्रत्येक वस्तु से, एक से अन्तर पर नहीं, कई वस्तुओं को हम प्रकाश की तिरछी किरणों के पड़ने से देखते हैं, कईयों को सीधी किरणों के पड़ने से, कईयों पर प्रकाश पूरा २ पड़ता है और कई प्रकाश से निरन्तर छिपी हुई हैं। इसी विभेद से हम वस्तुओं के ठोस रूप देख सकते हैं, यदि इस श्वेत वर्गात्मकक्षेत्र के पलटे, कोठड़ी में रंगा हुआ वर्गात्मक संदूक होता, तो हम प्रतीत कर लेते, कि यह समतल नहीं, वरंच एक ठोस वर्गात्मकक्षेत्र है, क्योंकि उसके पहिलुओं पर प्रकाश

निरन्तर निराले ढंग से पड़ता, जहां तक हम से हो सका, यह तो तुमें अत्यन्त सुगम रीति से समझा दिया, कि भिन्न २ वस्तुओं पर से प्रकाश का प्रतिविम्ब हमारी आंखों में किस भान्त पड़ता है। अब हम यह बताते हैं, कि हमारी आंखों के भीतर प्रकाश किस प्रकार जाया करता है।

प्रकाश के विषय में तुम को यह बात स्मरण रखनी चाहिये, कि प्रकाशप्रद वस्तु का एक अत्यंत छोटा सा विन्दु ऐसा केन्द्र बनता है; जिस से किरणें सब ओर पहुंचाता है, इसलिये चाहे हम किसी ओर से उस की ओर देखें, प्रकाश की एक किरण सीधी हमारी आंख में अवश्य प्रविष्ट होगी, १४ नंबर के चित्र से यह बात तुमें अवश्य प्रतीत होगी, क्योंकि तुम समझ जाओगी, कि इस वृत्त

चित्र नंबर १४

पर जो प्रकाश का वृत्त है, चाहे किसी स्थान आंख रक्खी जाय प्रकाशित विन्दु से जो इस वृत्त का

चित्र १४ पृष्ठ १५८
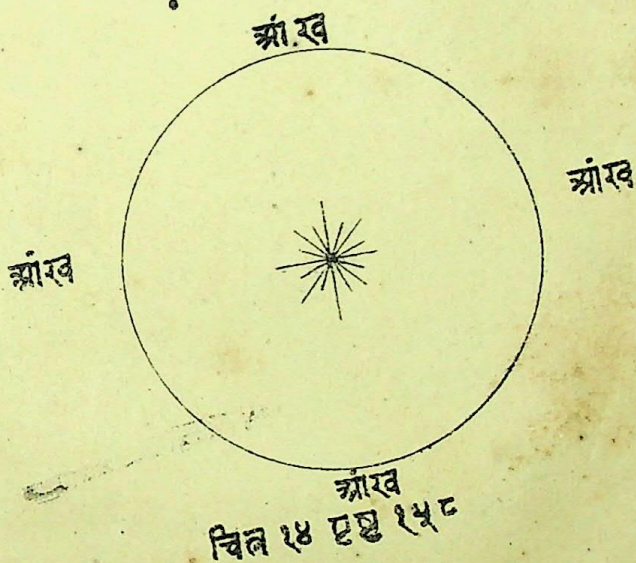
केन्द्र है, एक किरण हमारी आंख में अवश्य प्रविष्ट होगी। हां यदि इसकी बाट में कोई ऐसी वस्तु मिली है, जिसके आरपार प्रकाश नहीं जासक्ता, तो रुक जायगी।

किरण तल में प्रविष्ट होकर चक्षु के अंधेरे भाग में जाती है, और जब प्रकाश बहुत ही सूक्ष्म छिद्र में से प्रविष्ट होता है, तो एक आश्चर्य्य कौतुक देखने में आता है, इसका वर्णन हम तुम्हारे सामने बहुत सुगम रीति से वर्णन करने का यत्न करते हैं। तुम में से बहुतेरी स्त्रियों ने देखा होगा, कि जब सूर्य्य के प्रकाश की किरणें चौखट वा द्वार के सूक्ष्म छिद्र में से प्रविष्ट होकर जल पर पड़ती हैं, तो चाहे छिद्र वर्गात्मक हो, अथवा किसी बेढंगे रूप का हो, परन्तु तलपर सदैव एक अण्डाकार बन जाती हैं, इस का हेतु यह है, कि प्रकाश की किरण सूरज में से आती है, इसलिये इसी के स्वरूप की भान्त होती है।

चित्र नंबर १५

१५ नंबर के चित्र से तुम को प्रकट हो जायगा; कि ऐसा ही अवश्य क्यों होता है।

इस चित्र में भी पहिले की भान्त सूर्य्य के पलटे बत्ती से काम लिया है, जिस का प्रकाश मानो बन्द किया हुआ सूर्य्य का प्रकाश है, क्योंकि यदि खिड़की के द्वार में अथवा कागज़ में छेद किया जाय, तो सूर्य्य इतना दूर है, कि इस से छेद तक रेखा खेंचनी बहुत कठिन हैं, यदि इस छिद्र में से तुम एक रेखा बत्ती की लो के ऊपर तक खेंचो, और एक इस के नीचे तक, तो तुम को प्रतीत होगा, कि इस छोटे से छेद में प्रविष्ट होने के लिये आवश्यक है, कि रेखा तिरछी हो जांय, और परिणाम में एक दूसरे को काट कर उस में से हो कर जांय, यदि इस छिद्र के दूसरी ओर एक केवल अंधेरी कोठरी हो, तो उस में केवल इसी छिद्र की बाट से प्रकाश जा सकता
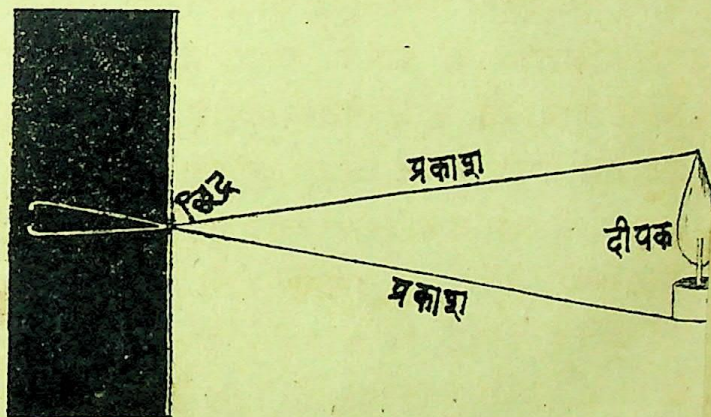
चित्र नम्बर १५ पृष्ठ १८८

है, और क्योंकि किरणें एक विशेष रूप बन कर उस छिद्र से होकर जाती हैं, यदि इस छिद्र के पीछे अंधेरी कोठरी में कोई पर्दा हो, तौ उस पर बत्ती का प्रकाश उज्वल होकर पड़ेगा, परन्तु यदि तुम प्रकाश की रेखाओं को ध्यान से देखो, तौ चित्र उलटा दिखाई देता है, क्योंकि प्रकाश की रेखा उस छिद्र पर अवश्य एक दूसरी को काटेंगी। क्योंकि तुम जानती हो, कि किरणें सदा सीधी जाती हैं, परन्तु यदि बाटमें कोई स्वच्छ स्फटिकवत् वस्तु न हो, जिस में से होकर एक ओर न हो जांय।

सो तुम समझ गई होगी, कि यदि प्रकाश एक छोटे से छिद्र में होकर अंधेरी कोठरी में प्रविष्ट हो, तौ अचरज कौतुक होता है, क्योंकि प्रकाश देने वाली वस्तु की उलटी मूर्त्ति बन जाती है। परन्तु अक्स के निर्बल प्रकाश से इस से भी अधिक आनन्द आता है, यदि छिद्र बहुत

छोटा हो, और छेद के भीतर की ओर एक श्वेत पर्दा लगा हो, तौ बाहिर की वस्तुओं का एक पूरा रङ्गदार चित्र दिखाई देगा, परन्तु वह चित्र उलटा होगा।

आंख की अंधेरी कोठरी में भी सर्वतः इसी भान्त होता है, आंख का तल छोटा छिद्र है, और भीतरी प्रकाश जानने वाली तह जिस को रेटिना (Retina) कहते हैं, पर्दा है।

परन्तु शोक है, कि जब तक छिद्र बहुत छोटा न बनाया जाय प्रतिबिम्ब चौड़ा और स्पष्ट नहीं होता, और छिद्र को यदि छोटा करें, तौ इतना थोड़ा प्रकाश प्रविष्ट होता है, चित्र मध्यम पड़ जाते हैं। इस न्यूनता को दूर करने के लिये लैन्स अर्थात् एक विशेष प्रकार का बिल्लौर वा शीशे का टुकड़ा वर्त्तना चाहिये। लैन्स (Lens) कई रूपों और शक्तियों के होते हैं। परन्तु जिस लैन्स (Lens) से परमेश्वर ने मनुष्य की आंख से काम
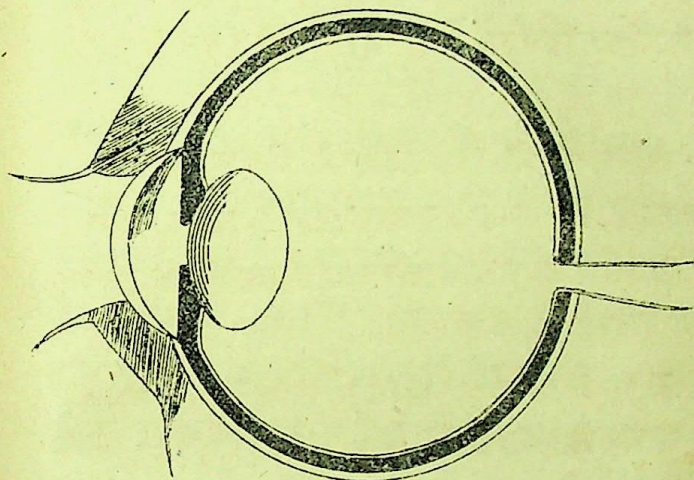
चित्र पृष्ठ १९०

लिया है, और जिस का प्रतिरूप बनाकर मनुष्य बहुधा देखने के यन्त्र में बर्तते हैं; इसका रूप १६ नंबर के चित्र की भान्त है, अर्थात् यह एक स्वच्छ स्फटिकवत् वस्तु है, जो दोनों ओर से बाहिर को उभरी हुई है; इस बात को पूरा २ समझना, कि लेन्स (Lens) किस भान्त काम करता है, कुछक कठिन है; परन्तु हम साधारण रीति पर इस का कारण वर्णन करते हैं। तुम जानती हो, कि यदि प्रकाश की किरण पहिले की सी स्फटिकवत् वस्तु में से होकर आये और फिर किसी दूसरी स्वच्छ वस्तु में होकर आये, जिस में से हो निकलना पहिली वस्तु की अपेक्षा अधिक कठिन हो, तो किरण सीधी नहीं जा सकेगी; वरंच कुछ न कुछ झुक जायगी, यदि प्रकाश की किरण के पलटे, सिपाहियों की एक कतार मान लो, जिस में प्रत्येक सिपाही को अगले सिपाही से एक से अन्तर में रहना पड़ता है, तो यह बात सहज ही तुमारी समझ में

आजायगी; यदि इस प्रान्त के मार्ग में कोई दल दल आजाय, अथवा ऐसी बाट आजाय, जहां साफ स्थान की भान्त शीघ्र नहीं चल सकते, तो अगले मनुष्य शनैः २ चलने लग जायेंगे और जो पीछे हैं, यदि उन्हें एक दूसरे से एक से अन्तर पर रहना है, तो उन को कुछ न कुछ एक ओर रहना पड़ेगा। सो जिस समय सारे सिपाही दल २ में पहुंच जायेंगे, तो जिस ओर वह पहिले चल रहे थे, वह पलट गई होगी और सीधे चलनेके स्थान इन की बाट तिरछी हो गई होगी। लैन्स (Lens) कई प्रकार के यन्त्रों में जैसे दूरवीक्षण, अणुवीक्षण में इस लिये बहुत काम आते हैं, कि इन में प्रकाश की सीध पलटने की शक्ति है। मान लो, दोनों ओर से उभरा हुआ लैन्स (Lens) प्रकाश की किरणों को अपने केन्द्र में इकट्ठा कर लेता है, और उन को इस भान्त इकट्ठा करता है, कि पर्दे पर उन के शोख रंग की स्पष्ट प्रकाशमान मूर्ति खिंच

जाती है। यदि तुम इन दोनों पूरे २ पृष्ठ भरकी मनुष्य के नेत्रों के चित्रों को जो इस अध्याय के आरम्भ में लगाये गये हैं, ध्यान देकर देखोगी तो यह बात तुमारी समझ में आजायगी।

यदि हम भिन्न २ प्रकार के लैन्स (Lens) की भिन्न २ शक्तियों का वर्णन करें, तो सहस्रों मनोहर बातें हैं; जैसे ऐसा लैन्स जो बाहर की अपेक्षा भीतर को झुका हुआ होता है, वह प्रकाश की किरणोंको इकट्ठा कर लेने के पलटे उन्हें बिथार देता है। इन की शक्ति चाहे कैसी ही हो, परन्तु नियमानुसार होती है, इन नियमों के ज्ञान होने से, बुद्धिमानों ने यन्त्र बना कर बहुत सी बातें जानी हैं, लैन्स (Lens) न होते, तो दूरवीक्षण और अणुवीक्षण न बनते, और तनिक विचारो यदि यह यन्त्र न होते, तो मनुष्य कितनी ही बातों से निर्बोध रहते। सो लैन्स (Lens) ही के कारण दृष्टि का अपूर्व प्रसाद हमें मिला है, क्योंकि बिना इस

के वह प्रतिबिम्ब जो प्रकाश के पहुंचाने वाले यन्त्र (रेटिने Retina) पर पड़ते हैं, इतने फैले हुए और सूक्ष्म होते, कि ब्रह्माण्ड तक ठीक २ समाचार न पहुंचा सकते।

आंख के लैन्स (Lens) में एक आश्चर्य बात इस लिये है, कि यह एक जीवित वस्तु का बना हुआ है और शीशे वा स्फटिक की भान्त निर्जीव नहीं, यह अपने रूप को कुछ न कुछ पलट सकता है, क्योंकि यह अपनी वक्रता को अधिक गोल वा चपटा कर सकता है और थोड़े वा बहुत अन्तर पर की वस्तुओं को देखने के लिये जितनी वक्रता आवश्यक होती है, उतना बना लेता है और ऐसा प्रबन्ध करता है, जिस से किरणें एकत्र होकर आंख को प्रकाश पहुंचाने वाले पर्दे की एक बिन्दु पर जा पड़ती हैं, क्योंकि जितना लैन्स (Lens) वक्र होता है, उतनी ही प्रकाश की किरणों को केन्द्र पर अधिक एकत्र कर सकता है। इस केन्द्र का

नाम फोकस (Focus) धरा हुआ है, इस लैन्स का बड़ा उद्देश्य यह है, कि एक साफ़ और ठीक ठीक चित्र उत्पन्न करे और उस का समाचार आंख के पट्ठे के द्वारा मस्तिष्क में झट पट पहुंचा सके।

तुम पूछोगी कि आंख की शिराओं के द्वारा जो समाचार जाता है, उस से ब्रह्माण्ड का ज्ञान किस भान्त हो जाता है ? यह बात अब तक किसी को प्रतीत नहीं हुई, इस लिये हम इसका कारण कुछ नहीं बता सकते; हां यह सच्ची बात है, कि चाहे प्रकाश की किरणें पुतली में से प्रविष्ट हों, और भिन्न २ अर्क और लैन्स (Lens) के द्वारा एकत्र होकर पर्दे पर प्रकाशमान प्रतिबिम्ब डालें और चाहे पर्दे की नाड़ियें इस संदेश को मस्तिष्क तक पहुंचायें, परन्तु यदि मस्तिष्क को कुछ आघात पहुंचा है, अथवा मस्तिष्क सोता है, अथवा सा-

वधान नहीं, तो हम को कुछ दिखाई नहीं देता, क्योंकि देखने वाली वस्तु तो मस्तिष्क ही है।

ढेले की बनावट की मोटी २ बातों से तुम ज्ञानी हो गई; अब हम उस कल का सामान्य वर्णन करते हैं, जिस से नेत्र चेष्टा करते हैं; चाहे किसी प्रकार से हो, इस बात का होना आवश्यक है, कि प्रकाश की किरणें सब ओर से हमारे नेत्रों में पड़ सकें, अथवा यूं कहो कि हम को इस योग्य होना चाहिये, कि अपने चारों ओर की वस्तु देख सकें, जिन जन्तुओं में रीढ़ होती है, उन में यह उद्देश्य कैसे पूरा किया गया है, उनकी आंख चेष्टा कर सकती है, परन्तु बहुत से कीड़ों की आंखें चेष्टा नहीं कर सकतीं, इस लिये उन की बहुत सी आंखें बनाई गई हैं। जैसे मक्खी जो हमारे घर में होती है, इस की आठ सहस्र के लगभग आंखें होती हैं और मकड़ी की आठ; परन्तु यह वृत्त में ऐसी युक्ति से रक्खी गई हैं, कि

कीड़ा एक बार सब ओर देख सकता है, परन्तु हमारी दो आंखों के साथ छः नाड़ियें होती हैं, जिन का केवल इतना काम है, कि आस पास की वस्तुओं को देखने के लिये हमारी दृष्टि को, उन के योग्य बनने में सहायता देती हैं। क्योंकि पट्ठे इतने बहुत हैं, और हमें सारी देह को चेष्टा देने की शक्ति भी है, इस लिये सिर के पीछे हम को भी आंखों की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती।

यह प्रकट है, कि यदि आंख की खिड़की जैसे कोमल और सुथरे यन्त्र पर धूल, मट्टी, खुद्री वस्तु पड़ती रहें, तो उस को अवश्य हानि पहुंचेगी। जैसे दर्पण खुला पड़ा रहने से मध्यम पड़ जाता है, इसी भान्त यह भी स्फटिकवत् न रहितीं, परन्तु इस की रक्षा के लिये पपोटे हैं, जो केवल बुरे प्रकाश को ही नहीं रोक सकते, वरंच ढेले को साफ भी करते हैं, क्योंकि इस के ऊपर फिसलते रहते हैं, साफ करने में पपोटों को आंसु-

यों की थैलियां भी सहायता देती रहती हैं, यह एक साफ मोती सा जल निकालती हैं; जो आंख को धो देता है, और भीगा रखता है, यदि तनिक भी भय होता है, दुःखदायी कोई वस्तु जैसे मट्टी के परमाणु वा छोटा सा कीड़ा, आंख में जा पड़ता है, तो यह थैलियां बहुत सा पानी निकाल देती हैं, और दुःखदायी वस्तु को धोकर बाहर फैंक देने का यत्न अपनी ओर से पूरा २ करती हैं।

आंख की बनावट में ऐसी असीम सावधानता और दूर दर्शिता प्रकट की गई है, कि उसे कुछ न कुछ समझाने के लिये एक दृष्टान्त देते हैं, और वह यह है, कि पपोटों की कोरों पर छोटे २ दानों की एक पांत है, जिन में से एक स्निग्ध वस्तु निकलती रहती है, उस से पपोटों के कोर स्निग्ध रहते हैं, और आंखों का स्वाभाविक जल कोरों से उछल कर वह नहीं सकता, क्योंकि तुमने

बहुतेरी वार देखा होगा, कि पानी स्निग्ध तल पर नहीं वहता।

आंखों में इतनी आश्चर्य्य और मनोहर बातें हैं, कि जिन की कोई सीमा नहीं। और हमने उन का बहुत कुछ वर्णन कर दिया, निश्चय है, कि अब तुम मान लोगी, कि संसार की सब शक्तियों में से दर्शन-शक्ति सब से प्रबल है। अब हम आंख के रोगों और दृष्टि स्थिर रखने की उत्तम रीतियों के विषय में कुछ आवश्यक बातें वर्णन करते हैं।

यह तो तुम सब जानती हो, कि जब बुढ़ापा आता है, तो दृष्टि घट जाती है, इस का कारण यह है, कि लैन्स (Lens) का रूप और तल पलट जाता है, यह लैन्स (Lens) अधिक कठिन और चपटा हो जाता है, और आगे की अपेक्षा कम चेष्टा कर सकता है, इसका परिणाम यह निकलता है, कि अब यह भिन्न २ दूरी की वस्तुओं को देखने के लिये पहिले की भान्त अपने को पलट

नहीं सकता, और विशेष कर समीपी वस्तुओं के देखने के समय। परन्तु आंख के स्वाभाविक लैन्स (Lens) में यदि कुछ दोष हो, तो ऐनक के लगाने से दूर हो सकता है, क्योंकि ऐनक का शीशा एक दूसरा लैन्स (Lens) है, इस भांत बुढ़ापे में दृष्टि को बहुत लाभ पहुंच सकता है। यह प्रचार पड़ा हुआ है, कि लोग जितना पहिले चाहिये ऐनक लगाने का आरंभ नहीं करते, डरते हैं कि लोग हमें बूढ़ा न समझें, और उस का फल यह होता है, कि आंख का लैंस (Lens) ऐसा घिस जाता है, कि फिर ऐनक से भी कुछ नहीं होसकता।

मुझे जब दूर की वस्तु न दिखाई दें, तो ऐनक लगानी आरंभ कर देनी चाहिये, और सदैव लगाये रखनी चाहिये, इस से बड़ा लाभ होता है, इस बात की अच्छी परीक्षा होगई है, कि अच्छी ऐनक लगाने से कुछ काल पीछे आंख का दोष

केवल दूर ही नहीं, वरञ्च सर्वतः चला जाता है, इसलिये आंख की कई दशाओं में उचित ऐनक लगाना सब से उत्तम उपाय है।

जब हम यह जानते हैं, कि उत्तम दृष्टि क्या मनुष्य क्या स्त्री और क्या बालक सब के लिये बहुत आवश्यक है, और फिर हम देखते हैं, कि हिन्दुस्तान में इस ओर तनक भी ध्यान नहीं, तो हमें अत्यन्त आश्चर्य होता है।

शोक की बात है, कि असंख्य अनाथ बालक जिनकी आयु कुछ सप्ताह की ही होती है, दुपहिर की कड़ी धूप में बाहर निकाले जाते हैं, अभी इन बालकों में न सिर फेरने की शक्ति होती है, न वह सिर फेरना जानते हैं, इसलिये कड़ा प्रकाश इनकी आंखों को सदा के लिये निर्बल कर देता है, और निर्बल होते ही आंखों के कोवों में से चीपड़ निकलने लगता है, और इसे कोई पूंछता तक नहीं, मक्खियां इस पर बैठती हैं, और सहस्र

भ्रान्त की मैल कुचैल यहां छोड़ जाती हैं। तुम में से ऐसी कौनसी स्त्री है, जिसने गली कूचे में अथवा घर के आंगन में बच्चों को चारपाई पर लेटे हुए न देखा होगा, जिन की आंख नाक और मुंह सब मक्खियों से काला होता है, और देखने वालों को डर लगता है।

तुम ही कहो, कि फिर बच्चों की आंखें न दुखें, तो क्या हो? इसलिये यह कोई आश्चर्य्य की बात नहीं, कि आंखें दुखने का शब्द हिन्दुस्तानी माओं के बोल चाल में बड़ा प्रसिद्ध हो रहा है। मानों उन्होंने इसे एक सामान्य सी बात समझ रक्खी है। आश्चर्य्य यह है कि जब आंखें दुखने आजायं, तो मां मोटा सुरमा डाल कर अथवा मोटी २ पिसी हुई ओषधियों का लेप पपोटों पर करके रोग को बढ़ा देती है, इसलिये हर वर्ष यहां के असंख्य बच्चों की दृष्टि सर्वतः विनष्ट हो जाती

अथवा सदा के लिये निर्बल हो जानी, कुछ आ-
श्चर्य्य बात नहीं।

हे सुघड़ स्त्रियो! स्मरण रक्खो, आंख दुखने का बड़ा कारण मैल कुचैल होती है, और जब घर में यह रोग हो जाय, तो फिर छूत से फैल जाता है। दुखती आंख में से यदि रत्ती के सौवें भाग के तुल्य मैल भी स्वस्थ आंख में पड़ जाय, तो वह भी दुखनी आजाती है, परन्तु बहुधा देखने में आया है, कि हिन्दुस्तानी मांएं बच्चों की आंख का चीपड़ दुपट्टे के आंचल से पूंछ लेती हैं, और पांच ही मिंट पीछे उसी कोने से अपनी आंखें, अथवा और किसी स्वस्थ बच्चे की आंखें पूंछने लग जाती हैं।

जब आंखें दुखनी आजायें, तो उन्हें शुद्ध रखना सब से उत्तम औषध है, दुखती आंखों को अन्यून तीन बार नित्य मन्दोष्ण जल से धोना चाहिये, और फिटकड़ी के पानी की कुछ बूंदें

आंख में डाल देनी उचित हैं। छटांक भर पानी में इतनी पिसी हुई फिटकड़ी डालनी चाहिये, जितनी एक दुअानी भर आसकती है। और रात्रि के समय पपोटों पर मक्खन अथवा घी भले ही चुपड़ देना चाहिये, कि आपस में जम न जांय, यदि आंखों में बड़ी पीड़ा वा जलन हो, तौ आंखें मूंद कर एक स्वच्छ चीथड़ा उन पर रक्खें और थोड़े चिर तक उसे पानी से गीला करते रहें, परन्तु स्मरण रहे, कि वहुत चिर तक यह गीला वस्त्र न रक्खा रहे॥

यदि कोई छोटा सा कीड़ा अथवा और कोई वस्तु बच्चे की आंख में जा पड़े, तौ ऐसी दशा में बच्चे को आंख मलने न दो, वरंच तुम तुरन्त एक हाथ से ऊपर के पपोटे की पलकें पकड़ कर शनैः२ वाहर की ओर खेंचलो, और दूसरे हाथ से उस नीचे के पपोटे को सहज से उठा कर आंख के ऊपर रखदो, और दोनों को एक वारगी झटपट

छोड़दो। इस युक्ति से पलकें पीड़ा-दायक वस्तु को बाहर निकाल डालेंगी। यदि आंख में चोट लग जाय, तो जब तक डाक्टर न आय, वा रोगी हसपताल न पहुंचे, उस समय तक के लिये सब से उत्तम प्रतीकार यह है, कि रुई की मोटी सी गद्दी जमाकर आंख पर रखदो, और हलकी सी पट्टी बान्ध दो, कि आंख चेष्टा न कर सके।

इस बात को कभी न भूलना चाहिये, यदि आंख में चोट लग जाय, अथवा किसी प्रकार का दुःख पहुंचे, तो बड़े भय की बात है, और उसी समय प्रतीकार कर लेना बड़ी बुद्धिमत्ता है।

निपुण डाक्टरों ने आंख के रोगों को दूर करने के लिये इतनी चेष्टा की है, कि यदि इन के बड़े २ आश्चर्य वृत्तान्त लिखते जांय, तो पृष्टों के पृष्ट चाहियें, इसलिये हम तुम्हें केवल एक बात सुनाते हैं, जिस से तुम प्रमाण कर सकते हो, कि इसमें कितना समय और कितनी बुद्धि व्यय हुई

होगी। वह बात यह है, कि डाक्टरों ने एक ऐसा यन्त्र बनाया है, जिस में वह मनुष्य के ढेले के भीतर की अवस्था देख सकते हैं, और आंख के लैंस (Lens) में अथवा देखने के इन्द्रिय में यदि कोई दोष हो, तो जान लेते हैं। यह साधारण नियम है, कि रोग का न होना, रोग से मुक्त होने से श्रेष्ठ होता है। आंखों के रोगों का भी यही नियम है, यदि दृष्टि जाती रही, तो इसे फिर उत्पन्न करना कठिन है, परन्तु उत्तम-दृष्टि बनाये रखना इस से सुगम है, उत्तम-दृष्टि स्थिर रखने के लिये पहिले यह बात है, कि ऐसे कड़े प्रकाश से जो आंखों को बुरा प्रतीत होता हो, बचना चाहिये, और हिन्दुस्तान में इस की बड़ी सावधानता रखनी चाहिये, और दूसरे अफीम तंबाकू तथा और २ मादक वस्तुओं से हटे रहना चाहिये, अफीम आयरिस (Ires) को ठीक काम करने से रोकती है, और इस से दृष्टि जाती रहती

है, परन्तु हिन्दुस्तान में चेचक से जितनी आंखें बिगड़ती हैं, और किसी रोग से नहीं बिगड़तीं। और शोक है कि यहां लोग व्यर्थ दुःख भोगते हैं, यदि वह अपनी सन्तान को टीका लगवाया करें, तो इस रोग की विपत्ति यहां से बहुत शीघ्र जाती रहे, जैसा कि-इङ्गलिस्तान में हुआ है।

यह अध्याय इतना बढ़ गया है, कि आंखों की चिकित्सा का प्रसंग करने के लिये अब स्थान नहीं रहा, परन्तु यह विषय प्रत्येक सुशिक्षिता स्त्री के लिये बहुत ही मनोरम है, क्योंकि इसी पर इसके बच्चों की बहुत सी प्रसन्नता का निर्भर है। हमारा नित्य का जीवन व्यवहार ऐसा है, कि नित्य २ वही बातें हम को दुहरानी पड़ती हैं, और उन्हीं २ बातों के न होने से हमारा जीवन आनंद रहित हो जाता है, इसलिये जितना आंख को प्रत्येक वस्तु का ध्यान से देखने का स्वभाव डाला जाय, उतने ही आनन्द के सामान अधिक हो

जायंगे। एक प्रमादी यात्री थका हुआ सड़क पर दायें बायें नहीं देखता, और आंखें मीचे चलता है, इसी सड़क के हर एक मोड़ पर मन परचाने की कई वस्तु होती हैं। छोटे २ फूल, घास पर दौड़ती चिड़िया, पेडों में से निकलती हुई धूप की धारी। एक सावधान यात्री की बाट को बड़े आनन्द से काट देती हैं, और दूसरा यात्री अपने आप में मस्त केवल यही चाहता है, कि बाट कब पूरी हो, परन्तु इस प्रकार आंख को सिखाना यहां के लोगों की प्रक्रिया नहीं। कई वार ऐसा हुआ है, कि जब कभी किसी साधारण चिड़िया वा वन के फूल का नाम पूछा गया है, तो लोग यही कहते हैं, कि परमेश्वर जाने कोई वन की बूटी वा पक्षी होगा, चाहे उन उत्तर दाताओं का जीवन इन्हीं फूलों, और चिड़ियों में बीतता हो। परन्तु फिर भी इन के स्वभावों से ज्ञान नहीं रखते, नहीं जानते कि यह पौदा कब फूलेगा, अथवा यह

पक्षी कहां पर घोंसला बनाता है, चाहे यह बातें छोटी २ हैं, परन्तु बहुधा मनुष्य ऐसी २ बातों से ही प्रसन्न होते हैं। अंग्रेज़ी भाषा में एक पुस्तक है, जिस का नाम "हर्वेस्ट आफ दि क्विक् आई" (Harvest of the Quick Eye) अथवा फुर्तीली आंख का पुरस्कार है, तनिक सोचो, कि इसका प्रयोजन क्या है, और अपनी आंखें खोलने का यत्न करो, कि उस अमोलक भण्डार को, जो प्रकृति प्रतिदिन वरञ्च हर घड़ी हमारे घर तक लाती है, समझ सको।

सातवां अध्याय ।

कान अर्थात् हम किस भान्त सुनते हैं ।

कान देह का एक छोटा सा भाग है, परन्तु उन पांच द्वारों में से है, जिनके पथ में से हम को ज्ञान प्राप्त होता है, इसलिये इस की पदवी बहुत बड़ी है, अर्थात् पांचों इन्द्रियों में से श्रवण इसी के द्वारा होता है ।

यदि और कोई शक्ति चली जाय, तो हमें इतना दुःख नहीं होता, जितना इसके जाते रहने से होता है, और बहिरे मनुष्यों की दशा देख कर हम इसका प्रमाण कर सकते हैं, बड़ी प्रसिद्ध बात है, कि अंधे बडे प्रसन्न रहते हैं, और बहिरे सदैव चिन्तातुर, प्राय स्वभाव के खट्टे, और सन्देहातुर होते हैं। यदि हम तनिक सोचें तो इसका कारण प्रतीत कर सकते हैं, यह सच है, कि दृष्टि न होने

से अंधे मनुष्य का सम्बन्ध संसार से टूट जाता है, न तो वह पेड़ों और फूलों की बहार देख सकता है, और न मेघों के झूम कर आने की प्रसन्नता लाभ कर सकता है, सो संसार के सारे सौन्दर्यों से कुछ आनन्द नहीं लाभ कर सकता। जिन मनुष्यों से वह प्यार करता है, उनके स्वरूप वह नहीं देख सकता, परन्तु वह मन से बात चीत से और परस्पर प्रेम से इसकी वैसी सेवा कर सकता है, जैसे आंखों के होने की दशा में करता। अंधा बच्चा अपनी मां की प्रेम भरी बातों को सुन सकता है, उस के प्यार को जान सकता है, और संसार के सब दुःखों में उसका प्रेम और उपकार से इस को सान्त्वना मिलती है, जब घर के लोग बातों से मन बहिलाते हैं, तो यह भी उन की बातें सुन कर मन बहिलाने में उनके साथ शरीक बनता है, और जो कुछ किया जा रहा हो, उस से भी अव-काश प्राप्त करता है।

बहिरा मनुष्य इन सब बातों से अलग रहता है, और यद्यपि प्रकट मनुष्यों में रहता है, परन्तु सच पूछो, तो केवल एकान्त में हि रहता है। और मित्रों के रूप देख लेने के सिवा और कुछ नहीं जानता, अन्धा तो संसार को खो बैठता है। बहरे को मनुष्य जाति से निकाला जा सकता है।

इस समय हमारा प्रेम बढ़ा हुआ है, और जी चाहता है, कि इस इन्द्रिय का कुछ वर्णन करें, जिस से ऐसी निधियें मिलती हैं, और बतायें कि इस के काम करने की रीति क्या है।

सब से पहिली बात यह है, कि कान अथवा कोई और वस्तु जो कान का काम देती है, बहुत से छोटे जन्तुओं के सिवा सब जन्तुओं में पाई जाती है। पहिले तो इस की बनावट बहुत ही सीधी होती है, केवल छोटी सी थैली को छोड़ और कुछ नहीं होता, जिस से जन्तु केवल शब्द वा चुपकी दशा में विचार कर सकता है, परन्तु

हम ज्यूं २ बड़ी पदवी के जन्तुओं को देखते हैं, उन के कानों की बनावट में क्रम अनुसार उन्नति दिखाई देती है, यहां तक कि दूध पिलाने वाले जन्तुओं में कान पूरे दर्जे तक पहुंच जाता है। श्रवण-शक्ति मनुष्य में सब से तीव्र नहीं, और हम प्राय बन के जन्तुओं से तुलना करें, तो इस बात में मनुष्य उन से कम है, परन्तु मनुष्य की बात चीत में असंख्य प्रकार के स्वर होते हैं, इसलिये सम्भव है, कि इसके कान स्वरों का भेद पहिचानने में अधिक तेज हों।

कान के सदैव दो भाग होते हैं, बाहर का और भीतर का। बाहर का भाग स्वर को समेट कर भीतर पहुंचाता है, इस को बाहर का कान कहते हैं, भीतरी भाग एक कोमल यन्त्र है, जिस में स्वर पहुंचता है, यहां से नाड़ियों के द्वारा मस्तिष्क में पहुंचता है। मस्तिष्क ऐसा यन्त्र है, कि इसकी बनावट को देख मनुष्य की बुद्धि च-

कित होती है। इस में जा कर शब्द प्रतीत होता है ॥

प्राय जन्तुओं में बाहिर का कान स्वरूप में एक सा नहीं होता, घोड़े का कान बड़ा और नुकीला होता है; बिल्ली का तनिक गोल कटोरे की भान्त, परन्तु काम सदैव सब का वही रहिता है, अर्थात् शब्द की तरङ्गों को समेटना और श्रावणेन्द्रिय तक पहुंचा देना। तुम यह पढ़ चुकी हो, कि वास्तव में शब्द पवन की तरङ्ग अथवा चेष्टा होती है, इस लिये तुम अब सहज ही समझ जाओगी; यदि श्रावणेन्द्रिय का छिद्र केवल एक छेद ही सिर में होता, तो केवल वही तरङ्गें जो सीधी इस छिद्र में पड़ती हैं, भीतर प्रविष्ट हो सकतीं। परन्तु सीप वा प्याले के रूप के कान होने से, हम सब ओर के शब्द सुन सकते हैं। बहुधा जन्तु अपने कान को जिधर चाहते हैं मोड़ सकते हैं, इस से उन्हें स्वर के एकत्र करने में बड़ी सहायता मिलती

है। देखो ! तीखे घोड़े के कान कभी पल भरभी ठहिरे नहीं रहते; यदि कोई नयी वस्तु सामने से दिखाई दे, तो आगे को हो जाते हैं,यदि पीछे से कोई अचानक शब्द होता है,तो उधर ही को मुड़ जाते हैं।

साधारण नियम यह है, कि मनुष्य में कान हिलाने की सामर्थ्य नहीं; परन्तु कई मनुष्य हिला भी सकते हैं, इस में सन्देह नहीं, कि सहस्रों पीढ़ियें पहिले जब मनुष्य अति असभ्य थे, और उन की देहों की बनावट अभी ऐसी पूरी २ नहीं हुई थी, जितनी अब है, तो उन में कान हिलाने की सामर्थ्य थी। तुम में से कई स्त्रियों ने कान के बाहर के किनारे की ओर एक छोटी सी गोली देखी होगी; बुद्धिमानों का विचार है, कि पुराने समय में यह कान का एक कोनह था।

यदि विद्यावानों से पूछोगी, तो कान के बाहर निकले हुए होने का वही कारण बतायेंगे,

जो हमने ऊपर वर्णन किया है, परन्तु हमें निश्चय है, कि यदि यहां की स्त्रियों से पूछा जाय, तो उन में से बहुधा यही कहेंगी, कि बालियां पहिरने के लिये बनाये गये हैं, इस के पक्ष में बड़े बलात् कार से कहेंगी, कि यदि यह ऐसी भारी बोझ उठाने को नहीं बनाये गये, तो फिर इन में ऐसी दृढ़ कर-कड़ी हड्डी क्यों रक्खी है। यह एक आश्चर्य बात है, कि सारी धरती में असभ्य और मूर्ख जातियें कानों में छेद करती हैं,परन्तु जितनी २ कोई जाति सभ्य बनती जाती हैं, उतना ही देह में छेद करने और उन में वस्तु लटकाने का प्रचार कम होता जाता है; निस्संदेह इस का कारण यही है, कि मनुष्यों को अपनी भूल प्रतीत होती जाती है,और स्वभाव के पीछे पड़ना छोड़ देते हैं; चाहे हिन्दुस्तान में सभ्यता की बहुत उन्नति हुई है, परन्तु अब तक प्राय यह देखा जाता है, कि चांदी सोने के बोझ से कान कट २ कर टुकड़े २ होजाते हैं;

प्रत्येक स्त्री यही कहती है, कि अपनी पड़ौसन से अच्छी वालियां पहिने और इस वात से जान बूझ कर इतना कष्ट सहती हैं, कि निश्चय नहीं आता। यदि किसी स्त्री को इस रीति के प्रचलित होने में सन्देह हो, तो उसे उचित है, कि अपने कानों के समग्र भूषण उतार डाले और किसी ऐसे बालक के कानों से तुलना करे, जिस ने अभी वाले न पहिरे हों और फिर न्याय से कहे, कि किस के कान अधिक सुन्दर हैं। वालक के झुके हुए सीप की भान्त के कान अधिक सुन्दर हैं, वा उस के टेढ़े तिरछे और टूटे हुए व्रणित और प्राय पक्के हुए लोथड़े से जिन को सदैव आठ२ छटांक चांदी सोना उठाना पड़ता है।

यह एक ऐसी मन्द रीति है, कि जिस का प्रचार पढ़ी लिखी लड़कियों को कभी अपनी सन्तानमें नहीं डालना चाहिये, जिन्होंने इस पुस्तक जैसी और पुस्तकें भी पढ़ी हैं और जो कुछ २

समझती हैं, कि हमारी देह किस आश्चर्य्य शिल्प नैपुण्य से बनाई गई है, वह ऐसी मूर्ख न होंगी, कि यह व्यर्थ निश्चय रक्खें, कि कान वा नाक में एक दो छेद कर लेने से कोई मनुष्य भाग्यवान् बन जाता है, वा आपदें टल सकती हैं, हम देखते हैं, कि हमारी देह की किसी वस्तु में भी स्रष्टा ने कोई न्यूनता नहीं रक्खी, यदि वह हमारे नाक, भूषण पहिरने को बनाता, तो निश्चय जानो कि सर्वशक्तिमान् परमेश्वर जिस ने सारा जगत् बनाया है, अवश्य तुमारे नाक, कान छिदेछिदाये उत्पन्न करता।

यह तो तुम जानती हो, कि बाहर के कान में से भीतर की ओर एक नाड़ी जाती है, यह एक इंच के लगभग लंबी होती है; इस का भीतरी सिरा पतली झिल्ली से बन्द होता है और वह इस पर तनी होती है और बाहर का सिरा कोमल और करकरी अस्थि का होता है, परन्तु जितनी

यह नाड़ी सिर के भीतर को होती गई है, उतनी कड़ी होती गई है, यहां तक कि उस के अन्त पर एक कड़ी हड्डी हो गई है, जिस के मुख पर चर्म का गोल पर्दा सर्वतः वैसा ही तना होता है, जैसे ढोलक पर तना होता है, इसी को कान की ढोलक कहते हैं और पवन के झकोले इस पर जा कर लगते हैं। पवन के झकोलों के नित्यप्रति चोट लगने से यह चमड़ा कुछ काल पीछे भीतरी ओर धस जाता है, इस कारण इस के रोकने का प्रबन्ध भी कर दिया गया है।

इस चमड़े के पीछे पवन से भरा हुआ एक छोटा सा खाना लगा रहता है, जिस में पवन एक नाली की बाट से कण्ठ से आती है। यदि तुमें हमारी बात पर निश्चय नही है और स्वयं सिद्ध करना चाहती हो, तो अपनी नाक को चुटकी से खूब बन्द कर लो और मुख को भी खूब भींच लो, और अब फेफड़ों में से पवन बाहर निकालो, प्रकट

है, कि नाक और मुंह में से पवन निकलने को बाट नहीं रही, सो अब पवन उन नाड़ियों में चढ़ जायगी, जो कानों की ओर गई हैं, यदि वह किसी कारण से बन्द न हो गई हों, और इस खाने को इतना फैला देंगी, कि कान के ढोलक का चर्म बाहर की ओर उभर आयेगा। और तुम को कड़क सा शब्द आयगा। यदि तुम तुरन्त एक वा दो बार पवन निगल कर उस घुरी में से बहुत भरी हुई पवन को न निकालो और चमड़ा अपने ठीक स्थान पर न आजाय, तो तुम बहरी हो जाओगी। क्योंकि इस के दोनों ओर पवन का दबाओ एक सा है। ऊपर की परीक्षा में जो हमने कण्ठ से कान तक जाने वाली नाड़ियों के विषय में कहा है, कि यदि वह किसी कारण से ढक न गई हों, इस का कारण यह है, कि किसी समय सूजन न पड़ने अथवा जुकाम की उपेक्षा करने से यह नालियां बन्द हो जाती हैं और पवन

इन में नहीं जा सकता, हिन्दुस्तान में इसी कारण बहुत से मनुष्य बहरे हो जाते हैं; परन्तु इस का उपाय सहज हो सकता है, जो आगे चल कर हम वर्णन करेंगे; इस बात के प्रसङ्ग करने से पहिले कि पवन की लहरें ढोलक के सिरे से उस घुरी में हो कर जो कण्ठ की नाड़ियों के द्वारा पवन से भरा हुआ होता है, भीतर के कान तक जहां शब्द पहुंचता है, किस भान्त जाती हैं। हम तुमें यह समझाते हैं, कि कोई कीड़ा बाहर के कान में से घुस कर मस्तिष्क तक जा नहीं सता, और साधारण लोगों का यह विचार सर्वतः निष्फल है, कि कान की बाट से कीट मस्तिष्क तक चढ़ जाता है, क्योंकि ढोलक का चर्म किसी वस्तु को आगे नहीं बढ़ने देता; हां यह आघात पहुंचने से टूट सकता है, परन्तु इस के लिये बहुत सा बल चाहिये।

अब हम फिर शब्द की तरङ्ग की ओर ध्यान देते हैं और मान लेते हैं, कि यह जाकर ढोलक के सिरे को लगी है, और बड़े बल से उसे थर थरा रही है, अर्थात् यूं हिला रही है, कि झिल्ली तुरत २ आगे को आती और पीछे को जाती, इस पर्दे के बीचों बीच में एक छोटी सी हड्डी का सिरा लगा होता है, जिस को हथोड़ा हड्डी कहते हैं, क्योंकि इस का रूप हथोड़े से बहुत मिलता जुलता है, और यह हड्डी ऐहरन हड्डी से लगी होती है, और

चित्र नम्बर १८

मनुष्य का कान।

(व) बाहर का कान
(न) नाली
(ढ) ढोलक की झिल्ली
(ह) हथोड़ा हड्डी
(ऐ) ऐहिरन हड्डी
(र) रकाब हड्डी
(क) भीतरी कान
(ख) पवन की घुरी
(ह) नाली जो कंठ से [आती है
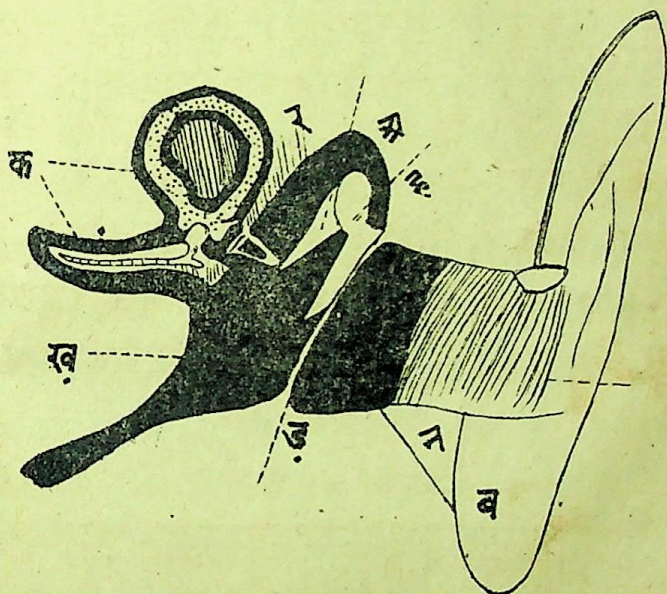
चित्र नम्बर १८ पृष्ठ २२२

रकाब हड्डी से जुड़ी होती है; इन हड्डियों के यह नाम इस कारण नियत किये गये हैं, कि उन के स्वरूप ऐसे ही होते हैं, जैसे ऐहिरन और रकाब के; हवा के भरे हुए खाने की दूसरी ओर एक अण्डे के रूप का छिद्र होता है; रकाब हड्डी का नीचे का भाग, अर्थात् जिस भाग पर वास्तव रकाब रक्खी जाती है, उस के साथ लगा होता है, इस चित्र के देखने से तुम्हें प्रतीत होगा, कि इस प्रकार तीन हिलने वाली हड्डियों का सिलसिला ढोलक के पर्दे से लेकर भीतरी कान के छिद्र तक बना हुआ है; ढोलक के पर्दे को जो चेष्टा पहुंचती है, वह उन हड्डियों के द्वारा ऐसी आश्चर्य शिल्प क्रिया से आगे पहुंचाई जाती है, कि हम तुम्हें स्पष्ट रूप से समझा नहीं सकते, इतना कथन बहुत है, कि रकाब के रूप की हड्डी प्रत्येक चेष्टा के बल को बीस वा तीसगुणा अधिक बढ़ा देती है, और उस पतले चमड़े पर चोट

लगाती है, जो अण्डाकृति छिद्र पर मढ़ा हुआ है, इस छिद्र के दूसरी ओर अत्यन्त आश्चर्य शिल्प कर्म से बना हुआ एक यन्त्र है, जिस का ब्योरा जान लेने के योग्य है, परन्तु हमें आशा नहीं कि तुम समझ सको, क्योंकि इस के भाग ऐसे कोमल हैं, कि उन्हें अचानक चोट लगने से सुरक्षित रखने के लिये ईश्वर ने ऐसी कोठरियों में रक्खा है, जो देह में कड़ी से कड़ी हड्डी खोद कर बनाई गई हैं; इस का एक भाग ऐसा गुञ्जल सा है, कि उस का नाम लेबरिंथ (Labyrinth) अर्थात् भूलभूलईयां रक्खा गया है।

साधारण तौर पर हम यूं कह सकते हैं, कि भीतरी कान के तीन भाग हैं, जो पानी से भरे हैं, जिस में अत्यन्त कोमल झिल्ली का टुकड़ा तैरता है, और उस पर नाड़ियें विस्तृत हो रही हैं, जब बाहिर का पवन कान की ढोलक के चर्म पर चोट लगाता है, तो हर वार हथोड़े के रूप की

हड्डी ऐहिरन को दबाती है, और यह इस दबाओ की चेष्टा को रकाब की सी हड्डी पर पहुंचाती है, और वह इस आघात से इस चर्म पर जो भीतरी कान के अण्डाकृति छिद्र पर मढ़ा हुआ है, बड़े बल से चोट लगाती है, और इस का स्वाभाविक परिणाम यह होता है, कि भीतरी पानी हिलने लगता है, और नाड़ियें पर आघात लगाता है, और इस आहट से जो विचार उत्पन्न होता है, उस को नाड़ी मस्तिष्क तक पहुंचाती है।

चित्र में ध्यान से देखो, पवन की पुरी में नीचे की ओर, एक और छेद भी दिखाया है। हमारा परमेश्वर हमें सम्पूर्ण आघातों से बचाने के लिये बड़ी सावधानता से प्रबन्ध करता है, यह छिद्र इस विषय का अत्युत्तम दृष्टान्त है। कोमल चमड़ा जो भीतरी कान में तैरता है, इतना निर्बल है, कि यदि स्थान न होने के कारण हिलती हुई लहरों को रोकना पड़ता तो वह पानी जिस में

वह तैरता है, इस को दबाता, तो इस के टूटने का भय था, इस लिये अण्डाकृति छिद्र पर लचकीली झिल्ली मढ़ी हुई है; जब तरङ्गें आती हैं, तो यह फूल जाती हैं और अधिक स्थान उत्पन्न कर देती हैं और तरंगों का सारा बल इस के विस्तार में व्यय हो जाता है। अब तो तुम्हें भली भान्त विदित हो गया होगा, कि परमेश्वर इस बात को भली भान्त जानता है, कि कान में छेद किस स्थान होने चाहियें; इस बात की कुछ आवश्यकता नहीं, कि तुम नये छेद करके इस के प्रबन्ध को सुधारो।

इन बातों के जानने से सुशिक्षिता स्त्री कई शिक्षा प्राप्त कर सकती हैं, अब हम उन शिक्षाओं को वर्णन करते हैं; सब से पहिली और बड़ी शिक्षा यह है, कि परमेश्वर ने भीतरी कान को चोट से बचाने के लिये असीम सावधानी की है, इस लिये बच्चों के कान और सिर पर दण्ड देने

के लिये मुक्का आदि लगाना अत्यन्त मूर्खता है। और इस बात से हम को बड़ा शोक है, कि इस बात का बड़ा प्रचार है, कि सिर की चोट से बालक सारी आयु भर के लिये बहिरा हो जाता है, कान खेंचना भी बड़ी भयानक बात है; हड्डी का रोग और २ कई प्रकार के दुःख इस से हो जाते हैं। तुमारे ठीक २ चित्त में बैठाने के लिये हम यह भी बता देते हैं, कि कान पर मुक्का मारने से क्यों चोट लगने का भय है, हाथ की चोट से बाहर का पवन, कान की बाहर की नली में बल से भीतर धस जाता है और ढोलक के चमड़े पर ऐसे बल से टक्कर खाता है, कि वह फट जाता है, तुम सब जानती हो, कि बड़े रौले गौले के कारण तुमारे कान गुङ्ग हो जाते हैं, और थोड़े चिर तक तुमें सुनाई नहीं देता; इस का कारण यह है, कि ढोलक के पर्दे पर पवन की तरंगें इतने बल से लगती हैं, कि उस को आराम लेना नहीं मिलता,

इस लिये जब तोपखाने का सिपाही तोप चलाता है, तो सदैव अपना मुंह खोल देता है, कि कण्ठ नालियों में से पवन की घुरी तक निर्विघ्न पवन पहुंच सके। इस प्रकार इस पर्दे के दोनों ओर पवन का दबाओ एक सा हो जाता है, और तोप के चलने से जो पवन की तीव्रतरंगें उत्पन्न होती हैं, वह इसे बहुत नहीं पचकातीं।

दूसरी शिक्षा यह है, कि हमारा एक बड़े कोमल यन्त्र से सम्बन्ध है, इस लिये बुद्धिमत्ता यही है, कि कोई असामान्य चिन्ह देखकर प्रमाद न किया जाय, परन्तु इस देश में हम बहुधा देखते हैं, कि बहुधा बच्चों के कान बहरे हैं, और उनकी मायें कुछ ध्यान नहीं करतीं, इस की चिकित्सा शीघ्र न करने से चाहे बालक मरते नहीं, परन्तु कान बहरे हो जाते हैं, अथवा ऊंचा सुनाई देने लगता है, और कई वार देखा गया है, कि बालकों के कान बाहर की ओर से बहुत ही मैले कुचैले

रहते हैं, और मायें कुछ ध्यान नहीं करतीं, बड़ी उमर के मनुष्य भी अपने कान कनमैलियें को बुलाकर भीतर से साफ करवाते हैं, जिन के अस्त्र अत्यन्त ही भद्दे होते हैं, यदि लोग इतना ही स्मरण रक्खें, कि परमेश्वर स्वयं भीतरी कान की अवेक्षा करता है, और तुम्हारा काम केवल उन्हें बाहर से साफ रखना है, तो सब के लिये अत्युत्तम है। कानों को तीक्ष्ण औज़ारों से छेड़ना बड़ा भयानक काम है, और इस से अधिकतर कोई वस्तु भयकारी नहीं।

यदि तनिक कहीं से हिल जाय, तो सारी आयु बड़ी बुरी भांत बीते, यदि तुमें प्रतीत हो, कि कान बन्द है, तो उष्ण तेल की थोड़ी बूंदें डाल लेने से बहुधा लाभ हो जाता है, इसी भांत यदि कोई ओपरी वस्तु वा कीट बाहर के भाग में प्रविष्ट हो जाय, तो उस को किसी अस्त्र से निकालने का यत्न करना बड़ी भूल है, क्योंकि इस का

बहुधा यह परिणाम होता है, कि वह नाली के कोमल भाग से सरक कर कड़ी हड्डी के सिरे में चला जाता है, जहां से उस को निकालना बहुत कठिन है। कान में सहज से मन्दोष्ण तेल अथवा पानी डाल कर उस को तैराने का यत्न करना चाहिये, यदि फिर भी सुफलता न हो, तो डाक्टर के पास जाओ, वह इस को पिचकारी से साफ कर देगा।

इस बात के समाप्त करने से पहिले उचित है, कि जन्म के मूक और बहिरों का कुछ प्रसङ्ग करें, इस देश के लोग विचारते हैं, कि यह एक असाध्य रोग है, इस लिये उन का दुःख और चिन्ता कम करने का यत्न नहीं करते, और न उन्हें, यह सिखाते हैं, अपने जैसों के साथ वार्तालाप करने की कठिनाई किस भांत सुगम हो सकती है।

इङ्गलिस्तान और बहुधा सभ्य देशों में इस के विरुद्ध इन विपदामारों को बड़ी सावधानी से शिक्षा मिलती है, और उन में से प्राय दूसरों के ओठों का हिलना देख साफ २ बोलना सीख जाते हैं। स्मरण रक्खो कि जन्म के मूक बहुधा बहुत ही कम होते हैं, परन्तु जो बालक सर्वतः बहिरे होते हैं, और कभी कोई शब्द नहीं सुनते वह इस का अनुकरण नहीं उतार सकते, इसी लिये जब तक उन को सिखाया न जाय, बहिरे बच्चे बोल नहीं सकते, और न बोलने का यत्न करते हैं, परन्तु कई वर्षों में कई वार यह बात आन बनी है, कि जिन लोगों ने कभी बात भी नहीं सुनी, उन को अक्षरों के मुख्य स्थान अर्थात् कण्ठ, उरस्, मुख, ओंठ और दांत के स्थान ऐसे ध्यान से सिखाये गये हैं, कि जिस से वह यह शब्द हि निज मुंह से नहीं निकालते, वरञ्च यदि कोई और मनुष्य उन के सामने बोलता है, तो उस

को भी समझ लेते हैं। यद्यपि उन्हें बहुत काल तक सिखाने की आवश्यकता होती है, परन्तु जब उन्हें बोलना वा बात का समझाना आ जाता है, और इतना जान जाते हैं, कि शब्द की कल के बीच में से,पवन यदि इस भान्त निकले तौ अमुक वस्तु का नाम होता है, तौ तुम विचार कर सकती हो, कि अपने प्यारों से बात चीत करने का द्वार पाकर वह कैसे प्रसन्न होते होंगे। यह शिचा-प्रणाली इस असीम अंश तक है, किसी २ समय यह परीचा करनी कठिन पड़ जाती है, कि वक्ता बहिरा है, और बहुत से रोगी इस भान्त सीखने के पीछे इतनी बात चीत सुगमता से कर सकते हैं,जितनी नित्य के काम के लिये चाहिये। बहिरा हो जाने के तुल्य कोई हानि नहीं, बहिरे के सहस्रों भय हैं, जिन से कानों वाले बचे हुए हैं। जैसे जो लोग गाड़ियें अथवा रेल के नीचे दब जाने से मर जाते हैं, उनमें से बहुधा वही होते

हैं, जिन की श्रवण शक्ति अच्छी नहीं होती, परंतु आश्चर्य की बात यह है, कि इस देश के लोग स्वयं इस भय को बढ़ाते हैं, यहां के बहुतेरे मनुष्य अपनी पगड़ियों के कई २ पेच अपने कानों पर भली भान्त लपेट कर और ऐसा प्रबन्ध करके, कि पवन की तरंगे मस्तिष्क तक पहुंचने से सर्वतः रुक जांय, बड़े आनन्द से भीड़ भाड़ वाले बाजरों में जाते हैं। यदि कोई पुरुष आंखों पर पट्टी बांध कर फिरने का विचार करे, तो तुम उस को कैसा मूर्ख और उन्मत्त समझोगी, सच पूछो तो कानों पर पट्टी बांधनी भी वैसी ही मूर्खता है। स्मरण रहे कि यदि परमेश्वर ने तुमें पांच इन्द्रियें दी हैं, तो तुमें योग्य है, कि जहां तक हो सके, उन्हें स्वच्छ रक्खो।

आठवां अध्याय।

त्वचा और उस से लाभ।

मनुष्य की देह के भिन्न २ भागों का वर्णन जहां तक हम से हो सका, भली भान्त विस्तार पूर्वक और अत्यन्त सुगम रीति से हमने इस आ-शय से वर्णन किया है, कि तुम कुछ समझो, और लाभ उठाओ। हम तुमें हड्डियों, मछलियों और पाक-शक्ति, श्वास, रक्तसञ्चार के यन्त्रों और आंखों और कानों के विषय में बता चुके हैं, अब एक तो कड़ी और जीवित त्वचा का वृत्तान्त शेष है, जिस में यह सब कोमल अंग लिपटे हुए हैं, और एक मस्तिष्क का वर्णन जो इन सब पर अधिकार र-खता है॥

मस्तिष्क का वर्णन हम अगले अध्याय में करेंगे, इस अध्याय में केवल त्वचा की बनावट,

उसका वर्ताओ, और उस को स्वस्थ और काम के योग्य रखने की आवश्यकता का कुछ वृत्तान्त वर्णन किया जाता है ।

शरीर की त्वचा तुम्हें एक सामान्य सी वस्तु प्रतीत होती है, परन्तु वास्तव में यह सामान्य वस्तु नहीं, विषय की सुगमता के लिये हम पहिले वास्तवी त्वचा का प्रसंग करते हैं, फिर स्निग्धता और घाम उत्पन्न करने वाले यन्त्रों का, जो इस में होते हैं, वर्णन करेंगे, और सब से पीछे बाल और नखों का वृत्तान्त वर्णन करेंगे, जो त्वचा के भाग हैं । त्वचा की तीन तहें होती हैं। पहिली कड़ी, इस में बहुत से पतले २ सींग के से छिलके एक दूसरे पर रक्खे हुए, और परस्पर अच्छे दृढ़ जुड़े हुए होते हैं। बाहर की ओर से यह छिलके सदैव घिसते रहते है। और जब प्राचीन हो जाते हैं, तो सूख कर ढीले पड़ जाते हैं, और गिर पड़ते हैं। जब कोई वस्त्र देह से मिला हुआ पहिना

जाता है, तो उस में मट्टी सी लग जाती है, यह वही छिलके होते हैं। यह कड़ी तह देह के सब भागों में एक सी मोटी नहीं होती, वरंच पांओं के तलों में सब से मोटी और आंख के पपोटों में सब से पतली होती है।

बहुत से रोग यथा चेचक, खसरह और कई प्रकार के ज्वर ऐसे होते हैं, जिन से देह पर पफोले पड़ जाते हैं; और ऐसा प्रतीत होता है, कि यह त्वचा मर गई है, और जितना रोग घटता है, पुराने कड़े छिलके झड़ते जाते हैं, इस का परिणाम यह होता है, कि रोगी के पहिने हुए कपड़े और उस के चारों ओर का पवन इन छोटे २ छिलकों से भर जाता है, जिन में कि तप का विष भरा हुआ होता है; और इस प्रकार दूसरे नीरोग मनुष्य रोगी होजाते हैं। और इसी प्रकार और रोग एक व्यक्ति से दूसरी व्यक्ति को प्राय हो जाता है।

इस कड़ी खाल के नीचे एक कोमल खाल होती है, यह उसी प्रकार का चमड़ा होता है, जैसा सारे हाज़मे और श्वास लेने वाले अवयवों के भीतर की ओर लगा हुआ होता है, और तुम्हें स्मरण रहे, कि पांचवें अध्याय में हमने तुम्हें इस का नाम म्यूकस मैम्बरिन (Mucous Membrane) बताया है, इसी चमड़े में रंग होता है, श्वेतवर्ण जातियों के इस चमड़े में बहुत थोड़ा रंग होता है, परन्तु कृष्ण वर्ण जातियों में पीले और गंदमी रङ्ग से लेकर काले तक कितने ही प्रकार के रङ्गों की झलक होती है, और कई पीढ़ियों तक सूरज की कड़ी धूप से जलते रहने के कारण शीघ्र अधिक रंगीन होजाती हैं, क्योंकि सब से अधिक कृष्णवर्ण जातियें अत्यन्त उष्ण देशों में पाई जाती हैं, श्वेत से श्वेत त्वचा भी कड़ी धूप और उष्णता से काली पड़ जाती है, परन्तु मनुष्य जातियों का वास्तव भेद हमें केवल चमड़े के वर्ण ही से देखना

नहीं चाहिये, वरंच उनके मस्तिष्क के विभेद से जान लेना चाहिये, इस का कारण तुमें अगले अध्याय में बताया जायगा ।

त्वचा की तीसरी तह वास्तव चर्म है, और जब जन्तुओं की त्वचा कमाई जाती हैं, तो इसी तेह से चौड़ी बन जाती है ; यह अत्यन्त सूक्ष्म धागों अथवा रस्सियों का एक जाल होता है, नमदे के टुकड़ों को देख कर इस की बनावट का विचार कर लो, क्योंकि यह भी वैसा ही कोमल दृढ़ और लचकीला होता है। इस में केशवत् सूक्ष्म नाड़ियें जिन में रुधिर होता है, और पट्ठे जिन को देह की तडियल्ल कहना चाहिये, सब ओर विस्तृत हुए २ होते हैं;

चित्र नम्बर १९

कर्तन, जिस त्वचा के पर्दे और पसीने की गिलटियां दिखाई देती हैं।

(अ) पहिली त्वचा जिस के छिलके पतले २ और सींग जैसे होते हैं।
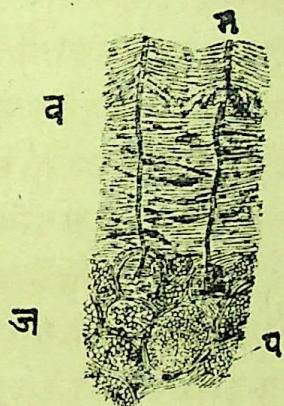
चित्र नम्बर १९ पृष्ठ २३८

इस चमड़े का तल समतल नहीं, वरंच कई स्थानों में उभरा हुआ होता है, और यह उभार म्यूकस (Mucous) की तह अर्थात् दूसरी त्वचा में छोटी२ उङ्गलियों की भान्त धसे हुए होते हैं।

ऐसे, ही पट्ठों के सिरे देह की त्वचा के बहुत निकट आजाते हैं, और उन के द्वारा हम बहुत स्पष्टता से प्रत्येक वस्तु को जान सकते हैं। इसी चर्म में पसीने और चिकनाई की थैलियां होती हैं, और उन के नीचे जाल के छिद्र अधिक खुले होते हैं, और तारों के बीच के घुरे चर्बी से भरे होते हैं, इस चर्बी से तीन लाभ हैं; एक तो हमारी देह में सुन्दर बेल डालती है, दूसरे यदि विघ्न हो तो गद्दी का काम देती है, और इस से बचाती है, तीसरे देह की उष्णता को भीतर र-

---

(द) दूसरी त्वचा जिस में रंग होता है।

(ज द) तीसरी त्वचा ।

(व) गिलटियां जिन से पसीना निकलता है।

(म) रोम कूप ।

रखती है। इस वास्तव चर्म में एक बड़ा शिल्प कौशल है, जिस का ज्ञान स्त्रियों को विशेष करके मनोहर प्रतीत होगा। क्योंकि उन को पुरुषों की अपेक्षा अपने रूप रंग का अधिक विचार रहिता है। इस रीति से चर्म साफ़ रहिता है, और झुररियां नहीं पड़तीं, इस में जेबघड़ी की कमानियों की भान्त बहुत सी छोटी २ कमानियां होती हैं, जो कभी सीधी नहीं रहतीं, और यदि चमड़े पर मछलियों का बल पड़ने पर खिंच भी जांय, तो मछलियों के ढीले पड़ते ही यह भी अपनी अवस्था पर आजाती हैं, अर्थात् उसी भान्त छल्लेदार हो जाती हैं। तुम समझ गई होगी, कि इन से चर्म न तो बहुत तना रहता है, और न झुरराया हुआ; और तुमें सिद्ध हो गया होगा, कि किस सावधानता से हमारे देह बनाये गये हैं, झुररियां पड़ने की तनिक सी बात का भी विचार रक्खा गया है, और प्रबन्ध किया गया है, एक काल

व्यतीत होने के पीछे जब हम बूढ़े हो जाते हैं, तो यह कमानियां भी निर्बल होकर ढीली पड़ जाती हैं; इस लिये चमड़े पर सदैव के लिये झुररियां पड़ जाती हैं।

इस असली चमड़े में तीन प्रकार की थैलियां होती हैं, जो अर्क बनाती हैं; एक तो पसीना बनाने वाली थैलियां हैं, जिन को रोमकूप कहते हैं। उष्णता के नियम में इन थैलियों का बहुत कुछ हाल और उन के काम का वर्णन तुम पढ़ चुकी हो। गणना की गई है, कि चौबीस घण्टे में एक सेर पानी के लगभग चमड़े से निकल कर पवन में मिल जाता है; परन्तु व्यायाम, घर्म और फेफड़ों और गुर्दों की दशा और काम से यह प्रमाण बहुत बढ़ जाता है। यह तो तुमें कई बार बताया गया है, कि फेफड़े पानी और मलिनता किस भान्त निकलाते हैं; परन्तु अभी तक इस बात का प्रसंग नहीं आया, कि देह से निकम्मा अंश

निकालने में गुरदे क्या सहायता देते हैं; चमड़े और गुरदों के काम का बहुत सा मदार एक दूसरे की सहायता पर है।

चित्र नम्बर २०

इस लिये यहां गुर्दों का कुछ वृत्तान्त वर्णन करना उचित है; क्योंकि यह और चमड़ा दोनों मलिनांश निकालने के यन्त्र हैं।

गुर्दे दो होते हैं, एक दाईं ओर की पसलियों के नीचे पट्ठे की हड्डी के पास, दूसरा इसी भांत बाईं ओर, और नालियों के द्वारा उन का सम्बन्ध मसाने के साथ होता है, जो नीचे की देह के सामने की ओर कूल्हे की हड्डी के पास होता है;

(ग) गुरदे।

(म) मसान्ह।

(न) नालियां, जिन की बाट से मूत्र गुरदों से मसाने में जाता है।

चित्र नम्बर २० पृष्ठ २४२

कूल्हे की हड्डी पर ही रानों की हड्डियां फिरती हैं, पानी और निमक की सी वस्तु निकालने के सिवा गुर्दे एक बड़े विषमय अंश को रुधिर से पृथक् करते हैं, जिस को अंगरेज़ी में यूरिया (Urea) कहते हैं; यदि रोग अथवा गुर्दों के दोष के कारण यह रुधिर में रह जाय, तो बड़ी हानि पहुंचती है। शीत ऋतु में जब चर्म में से पसीना कम निकलता है, तो गुर्दों को अधिक काम करना पड़ता है, और इस लिये कड़े व्यायाम के पीछे अथवा बहुत घाम में जब चमड़े से पसीना निकलता है। तो गुर्दों से कम पानी निकलता है। पसीना बहुधा खट्टा होता है; परन्तु जब बहुत निकलता है, तो बहुधा न खट्टा होता है न सलोना, और इस अवस्था में बड़ा शीघ्र सड़ जाता है, और देह में बड़ी दुर्गन्ध उत्पन्न कर देता है; इस का प्रसंग हम पहिले भी कर चुके हैं, इस देशमें मनुष्य अपनी देहों को इस भ्रष्ट दशा में इतना रहने देते हैं, कि हम

फिर एक वार इस प्रस्ताव की ओर ध्यान देते हैं; कोई मनुष्य भी जब इस प्रकार रहना अच्छा नहीं समझता, कि आधा सड़ा हुआ रुधिर इस की देह पर मला रहे, अथवा इस की देह के किसी भाग पर और कोई मलिनता जिस के नाम से घिन आती है लगी रहे, फिर पसीना जो एक प्रकार का व्यर्थ अंश है, इस की देह पर क्यों लगा रहे, और सड़ता रहे। इस से केवल घिन ही नहीं, वरंच स्वास्थ्य को भी वड़ी हानि पहुंचाती है; नित्य देह को भले ही शुद्ध कर लेने से मैले चर्म में कोई ऐसी वड़ी दुर्गन्ध नहीं रहती, जो हिन्दुस्तानियों के वहुधा समुदाय में तीव्र घ्राण वालों को सताती है। स्वच्छ रहने वाले मनुष्य को नित्य प्रति एक वार से कम नहीं न्हाना चाहिये। दूसरे प्रकार की थैलियां स्नेह बनाने वाली हैं, यह वात वहुधा तुम ने कभी न सुनी होगी, कि तुमारी देहों में से तेल भी निकलता है, निःसंदेह तेल भी

निकला करता है, और इसी तेल के कारण सावन और उष्ण जल से धोये विना त्वचा शुद्ध नहीं हो सकती, क्योंकि धूल और चिकनाई चर्म पर लगी रहती है, जो शीत जल से, अथवा विना सावन के धोये नहीं उतर सकती; परन्तु यदि उस तेल को चमड़े पर लगा रहने दें, तो उस पर दुर्गन्ध हो जाती है; क्योंकि समस्त पशुओं में से निकाले हुए तेल, पवन के लगते रहने से सड़ जाते हैं, जब तेल सड़ जाता है, तो उस में से बड़ी दुर्गंध आने लगती है, जो सड़े हुए पसीने की गंध से भी अधिक मंद होती है। कृष्ण चर्म मनुष्यों की देह में गौर चर्मों की अपेक्षा यह तेल बहुत बनता है; इस लिये इस देश में इस की स्वच्छता का अधिक विचार रखना चाहिये। तीसरे प्रकार की थैलियां वह हैं, जिन से बाल उगते हैं, और जिन को बालों की थैलियां कहते हैं। हाथ की हथेली और पांओं के तलों के सिवा यह प्राय सब स्थान

में होती हैं, भुजा आदि पर कोमल रुयें की थैलियां तल के निकट होती हैं; परन्तु सिर और डाढ़ी के वालों की थैलियां बहुत भीतर चमड़े के वसामय भाग में होती हैं, बाल केवल बाहर की कड़ी त्वचा होती है, जो चपटे छिलकों के पलटे लंबे तार बन गये हैं। अणुवीक्षण के नीचे मनुष्य का बाल रख कर देखने से तुमें बड़ा आनन्द आयेगा, तुम कभी निश्चय न करोगी, कि यह मोटा सा रस्सा, जो इस में से प्रतीत हो रहा है, और जिस के चारों ओर छोटे २ हुक से निकले हुए हैं, वही पतला कोमल बाल है, जो उङ्गलियों को बड़ा साफ प्रतीत होता है। १६ नम्बर का चित्र देखने से तुमें प्राय बाल का वृत्तान्त विदित हो जायगा; बाल यद्यपि छूने से गोल प्रतीत होता है, परन्तु सच पूछो तो गोल नहीं होता, वरंच कुछ न कुछ चपटा होता है, और जितना अधिक चपटा हो, उतने ही उस में अधिक छल्ले पड़ते हैं, केवल व-

हुत काल व्यतीत होने से ही बाल गलते सड़ते नहीं, जिन मनुष्यों को धरती में दबाये हुए १५ सौ अथवा दो सहस्र वर्ष बीत गये हैं, उन की खोपरियों पर साबत चमकीले बाल देखे गये हैं।

परन्तु जीवन के दिनों में बाल विशेष समय तक जीवित रहते हैं। जिन की अवधि सब में एक सी नहीं, मनुष्य के स्वास्थ्य पर अवधि है। वास्तव में बालों की दशा बदलने से नीरोगता का अच्छा प्रमाण मिल जाता है, जब तक यह प्रकाशित लचकीले और दृढ़ हों, न उखड़ते हैं, न टूटते हैं, तो जान लेना चाहिये, कि मनुष्य नीरोग है, और उत्तम रीति से पोषित हो रहा है।

जूं २ बुढापा आता जाता है, बालों का रंग पलट कर श्वेत हो जाता है; कई लोग कल्प करके उन की चिकित्सा करने का यत्न करते हैं, परन्तु उस रंगने से सच छिपा नहीं रहता, और भली भान्त स्मरण रहे, कि बालों के रंग लेने से

वास्तव में वे अच्छे नहीं रहते, तुमारी आयु में भेद नहीं पड़ता, न तुम एक दिन में अधिक बुढ़िया हो जाती हो, और न एक दिन में जवान हो जाती हो।

ऐसा करने से किसी को लाभ नहीं पहुंचता, क्योंकि रंगे हुए बाल देखते ही साफ़ पहिचाने जाते हैं; सो तुमारी आयु के विषय में न तो औरों को धोखा हो सकता है, और न स्वयं तुम को। परन्तु, हां केशों का ध्यान देह की शुद्धि का आवश्यक भाग है, क्योंकि यदि इन की ओर ध्यान न किया जाय, तो इन में जूंएं पड़ जाती हैं; परन्तु इस देश की स्त्रियें दुःख से बचने के लिये लड़ियों के बालों की कड़ी मेंढियां गूंधती हैं, और फिर कई २ मास तक उन की ओर ध्यान नहीं करतीं; अनाथ लड़की जब अपने सिर को हर समय खुजलाती रहती है, और इस के सिर में इतनी जूंएं पड़ जाती हैं, कि सारे घर में जूंएं ही जूंएं हो जाती हैं, तो फिर बड़ी धूम धाम

का दिन आता है, और कई घण्टे इस काम में व्यय होते हैं, और बहुधा खुली गली में बैठ कर पहिली भूल से जो जूंएं उत्पन्न हो गई हैं, उन्हें मारती हैं। युवा स्त्रियें भी बहुधा कई २ सप्ताह अपने बालों में कंघी करने की ओर ध्यान नहीं करतीं, ऐसा बुरा स्वभाव डाल लेने के विषय में कोई आपत्ति नहीं सुनी जा सकती, यदि स्त्रियों को इस प्रकार गुंदे हुए बालों का नित्य प्रति खोलना और पवन लगानी कठिन है, तो इस वर्ताओ को छोड़ ही क्यों नहीं देतीं; सिर को सदैव धोते रहने, और उन में कंघी करते रहने से केश केवल साफ़ ही नहीं होते, वरंच लम्बे और सुन्दर भी हो जाते हैं। तुम ने देखा होगा, कि सिक्खों के बाल, कैसे शोभायमान होते हैं; क्यों? इसलिये कि उन के हां केशों का सुधार के रखना धर्मसम्बन्धी कर्तव्य है। सुन्दर केशों का होना निस्सन्देह बड़े सौन्दर्य की बात है, परन्तु सुधार से विना किसी

को क्या आशा हो सकती है। दूसरा बड़ा प्रचार यह है, कि स्त्रियें बालों को स्वच्छ रखने के लिये कई प्रकार के स्निग्ध-द्रव्य सिर पर लगाती हैं, और स्वभाविक रीति से उन के स्वच्छ होने के लिये आवश्यक कष्ट को भी नहीं करतीं, इस का फल यह होता है, कि मैल मिट्टी बालों में भर जाती है, और वह परस्पर सुरेश की भान्त जम जाते हैं।

अब नखों का वर्णन सुनो, यह भी बालों की भान्त कड़ी त्वचा के बढ़े हुए भाग अथवा मोटी तहें होती हैं। इन के बनाने का अभिप्राय यह प्रतीत होता है, कि हाथ पांओं की उंगलियों के सिरे शून्य रहने की अपेक्षा दृढ़ होजांय, बालकों के नख विशेष करके शीघ्र बढ़ते हैं, इसलिये इन को सावधानता से नियमानुसार काटते रहना चाहिये, कि टूट न जांय, परन्तु यह देखा गया है, कि बड़े रोगों के समय नख तनिक नहीं बढ़ते,

और आरोग्यता के पीछे दूसरी वार वढ़ने आरंभ होते हैं, और एक साफ रेखा नखों पर पड़ जाती है, और यदि रोग चिर तक रहे, तौ यह रेखा, बहुत गहरी हो जाती है, और थोड़े दिन रहे, तौ कम गहरी। इस प्रसंग से केवल हमारा यह तात्पर्य्य है, कि देखो रोग से देह को कैसा भारी दुःख पहुंचता है, सो जब आराम होने लगे, तौ कितनी सावधानी चाहिये।

उस काम का प्रसंग करने से पहिले, जो हमारी त्वचा को स्पार्शन-प्रत्यक्ष शक्ति प्रतीत करने के विषय में करना पड़ता है, हम संक्षेप रीति से वर्णन करते हैं, कि यह देह से मलिनांश किस भान्त निकालता है, और किस भान्त देह की उ-ष्णता को कम करता है, सहस्रों और करोड़ों रोम-कूपों से इसे एक अर्क निकालना पड़ता है, जो देह से व्यर्थ वस्तु निकाल लाता है, और उष्णता से रुधिर की अवस्था ९८ अंश तक रखता है, यह

सारी बातें तुम को १म, भाग में समझाई जा चुकी हैं, अब इतना शेष है, कि शारीरिक स्वच्छता का कर्तव्य पूरा करने की वारंवार ताकीद करें।

हमने प्राय देखा है, छोटी २ लड़कियों के हाथों में उन की प्यारी मांयें महिंदी लगा दिया करती हैं, और उन के हाथों पर इतनी मैल जम जाती है, कि वह अपनी पुस्तकों पर रखने के लिये उंगली निकालने में लज्जित होती हैं, और उन के नख टूटे, मैले और बुरे २ होते हैं, और बाल जूंओं से भरे हुए, कपड़े मैले, आंखें मैल से लाल, और नाक के चारों ओर मक्खियां उड़ती हुईं, यह कुछ बढ़ा कर नहीं लिखा, अत्यन्त लज्जा की बात है।

क्या तुम जानना चाहती हो, कि इस देश के बालकों पर मक्खियां क्यों भिनकती हैं, इस का कारण यह है, कि इन को न्हलाया धुलाया नहीं जाता, तेल और मैल कुचैल और मलीनता

में मक्खियों का भक्ष्य उन की देह पर जमा हुआ होता है, इस देश के तुल्य और किसी देश में बालकों को मैल कुचैल से दुःखी होना नहीं पड़ता, और इस का उपाय करना सुघड़ स्त्री का सब से पहिला कर्तव्य है।

पहिले भाग में जो तुम ने पढ़ा है,उसे भली भान्त स्मरण रक्खो, कि स्वच्छता केवल स्वयं ही अच्छी नहीं, वरंच इस से सदैव सभ्यता सचाई, और भद्रता उत्पन्न होती है।

असभ्यों में न्हाने धोने का प्रचार ही नहीं, वह केवल देह को शीतल करने के लिये कभी २ पानी अपने ऊपर डाल लिया करते हैं। जिस की स्वच्छता का इन्हें तनिक विचार नहीं, वह एक ही वस्त्र बरसों पहिने रहते हैं, कभी नहीं पलटते, सो प्रकट है, कि स्वच्छता से बहुत कुछ भद्रता आती है। जिस पुरुष वा स्त्री का यह स्वभाव हो, कि हाथ मुंह और देह और वस्त्र मैले

रक्खे, वह इस योग्य नहीं, कि मनुष्य कहा जावे।

तुम में से कई स्त्रियां यह विचार करेंगी, कि सुशिक्षिता स्त्री का कर्तव्य केवल यही है, कि कि बालकों को स्वच्छ शुद्ध रक्खे, नहीं! नहीं! यदि इस के घर में एक मनुष्य भी मैला रहेगा, तो प्रत्येक मनुष्य जिस को इस मैले मनुष्य से मेल जोल होगा, हानि पहुंचाने का भय है, इस लिये सुशिक्षिता स्त्री को विचार करना चाहिये, कि इस के घर में कोई पुरुष बिना न्हाये धोये न रहे। तुमारी त्वचा मानों तुमें संसार के प्रबन्ध के साथ मिला देने वाला द्वार है। अर्थात् उसके द्वारा तुम्हारा सम्बन्ध संसार के साथ है, यदि यह अशुद्ध और मलिन है, तो वह सब वस्तु जो तुम इस से छूकर प्रतीत करोगी, मलिन हो जांयगी।

अब हम त्वचा का वर्णन इसलिये करते हैं, कि इस में स्पर्शशक्ति अर्थात् छूकर ज्ञान करने

वाली शक्ति है। यद्यपि सारी त्वचा में स्पर्श-शक्ति है, परन्तु इस के कई भागों में औरों की अपेक्षा यह शक्ति अधिक होती है। जैसा कि जिव्हा की नोक, ओंठ, और उंगलियों के सिरों में स्पर्श-शक्ति बहुत होती है, और अभ्यास से इस शक्ति में उन्नति हो सकती है, जैसे कि अन्धे पुरुष में हो जाती है, क्योंकि उन को दृष्टि का काम भी स्पर्श से ही लेना पड़ता है, अन्धा पुरुष केवल मुंह पर तनिक हाथ फेरने ही से मनुष्य को पहिचान लेता है। हमें बहुत सा ज्ञान छूने के द्वारा होता है, प्रत्येक बालक में पहिले कई वर्ष तक वस्तु को हाथ में पकड़ने की इतनी इच्छा होती है, कि कभी उस से तृप्त नहीं होता, यद्यपि उस से उस के संबधियों को कुच्छ न कुच्छ कष्ट होता है, विशेषत: जब उस से किसी कोमल वस्तु को हानि पहुंचे। परन्तु स्मरण रहे, कि बालक के ज्ञान में उन्नति होने का केवल यही द्वार है, इस बात के सम-

भने से पहिले, कि गोल वस्तु कैसी होती है, यह आवश्यक है, कि वह इसे हाथ में पकड़े, और देखे कि,उसमें कोई कोन्ह तो निकला हुआ नहीं। इस बात के निश्चय करने से पहिले कि आग दाह कर दिया करती है, यह आवश्यक है, कि उस में अपनी उंगली डालकर परीक्षा करले। प्रायः स्पर्श-शक्ति ब्रह्माण्ड को ठीक समाचार भेजा करती है, परन्तु इस बात के सिद्ध करने के लिये, कि सदैव ऐसा नहीं होता, हम एक हंसी की छोटी सी परीक्षा तुमारे सामने दिखाते हैं । अपनी तर्जनी उंगली पर मध्यमा उंगली को इस भान्त रक्खो, कि उन की नोकें परस्पर मिल जांय, और फिर उन से नाक की नोक को छूओ; तुम बहुधा शपथ खाने को प्रस्तुत हो जाओगी, कि दो नाकें प्रतीत होती हैं, इस भान्त यदि एक हाथ की हथेली पर चने के एक दाने को रखकर दूसरे हाथ की दो उंगलियों से आंखें बन्द करके इस

भान्त टटोलो, कि एक उंगली दूसरी पर धरी हो, तौ तुम बता सकोगी, कि तुमारे हाथ में एक चना है, वा दो चने हैं। भला इस का कारण क्या है?

इस का कारण यह है, कि तुमें ऐसा स्वभाव पड़ा हुआ है, कि तुमारी उंगलियों के सिरे तक को भी एक ही वस्तु का स्वभाव है। जब दो उंगलियों के सिरे, जो बहुधा एक दूसरे से पृथक् रहते हैं, तुमारे नाक वा चने के दाने को छूते हैं, तौ मस्तिष्क को तुरन्त बिजली यन्त्र की भान्त पृथक् २ यह समाचार पहुंचाते हैं, कि यह नाक वा चने का दाना है, परन्तु यह वही नाक अथवा दाना नहीं, क्योंकि हमारी उंगलियों के सिरे कभी भी वस्तुओं को एक वारगी प्रतीत नहीं कर सकते, और केवल स्वभाव पड़ जाने से हम को धोखा देते हैं, भला क्या इस से यह प्रकट नहीं होता? कि व्यर्थ पदार्थों का भी स्वभाव होने से हानि और लाभ पहुंच सकता है।

नवां अध्याय।

मस्तिष्क अथवा हम किस भान्त ज्ञान लाभ करते हैं।

शरीर की बनावट और इस के भिन्न २ भागों के काम से तो तुम कुछ न कुछ ज्ञानी हो गई हो; मनुष्य के पिञ्जर, मछलियों, श्वास लेने और पोषण करने के यंत्रों तथा देखने और सुनने के यंत्रो और त्वचा का वृत्तान्त जिस में यह समग्र भिन्न २ अङ्ग लिपटे हुए हैं, तुम को पृथक् २ समझा दिया गया; परन्तु एक बात शेष है, और वह सब से आवश्यक है, और अभी तक उस की ओर कभीर केवल कुछ २ ध्यान दिलवाया गया है। कई वार हमने नाड़ियों का प्रसंग किया है, और इन को यह मान लिया है, कि वह मानो हमारे देह के वाहर की वस्तुओं और उस आश्चर्य भेद के मध्य में,

जिसे मन कहते हैं, तड़ित् (विजली) यन्त्र लगे हुए हैं।

वास्तव बात यह है, कि यह प्रस्ताव ऐसा कठिन है, कि जान बूझ कर अन्तिम अध्याय के लिये रक्खा गया है, परन्तु इस को कुछ न कुछ जाने बिना और विशेष करके उन स्वरूपों से ज्ञानी हुए बिना, जिन से प्रस्ताव घिरा हुआ है, तुम अपने देह के आश्चर्य्य २ विषयों को सर्वत: जान नहीं सकतीं, इस लिये पहिले हम इस का वह भाग आरम्भ करते हैं,जो स्पष्ट है, और जिस में कुछ संसय नहीं।

कड़ी हड्डी और कुरकुरी हड्डी के सिवा सारी देह में अनन्त तार से होते हैं, जिन को पट्ठे कहते हैं; यह त्वचा और मछलियों के भीतर श्वेत वर्ण के होते हैं, जब हम उन तारों को देह के बाहरी भाग से देखने लगते हैं, तो प्रतीत होता है, कि यह तार आगे चल कर और तारों

में मिल जाते हैं, और मोटी २ रस्सियां सी बन जाती हैं; इसी भान्त और आगे बढ़ कर यह रस्सियां परस्पर मिल जाती हैं, और इन के मोटे अथवा स्कंध से बन जाते हैं, और परिणाम में यह हरामम़गज़ से जा मिलते हैं। तुम जानती हो कि रीढ़ की हड्डियों में एक खोखला सा मार्ग बना हुआ होता है, इस में यह हराममगज़ सुरक्षित भेजे तक चला जाता है। रस्सियों अथवा रस्सों से तुम यह न समझ लेना, कि इन की भान्त नाड़ियें भी बलदार होती हैं, वरंच यह केवल तारों का ऐसा लच्छा होता है, जैसे रंगे हुए सूत के कलावों में हुआ करते हैं। जो तुम दुल्हन के सिर के बालों में गुंधा करती हो।

प्रत्येक अंग की तार में दो आवरण होते हैं, जिन के भीतर बहुत ही सूक्ष्म और कोमल धागा होता है, जिस के विषय में यह विचार है, कि हमारे सब विचार और इन्द्रियों के विषय इसी के

द्वारा मस्तिष्क तक सर्वतः इसी भान्त पहुंचते हैं, जिस भान्त तड़ित् यन्त्र के द्वारा समाचार पहुंचता है, और जिस प्रकार तड़ित्यन्त्र के तार में एक तो सूक्ष्म तार होता है, जिस के द्वारा संदेश जाता है, और उस के ऊपर रक्षा के लिये संदेश पहुंचाने वाली शक्ति खोई न जाय, अथवा इधर उधर न हो जाय एक आवरण होता है, और उस आवरण पर एक और आवरण, उस को बाहर के खटकों से सुरक्षित रखने के लिये चढ़ा होता है, ठीक इसी भान्त पट्ठों का भी प्रबन्ध है, हां! जब पट्ठे रीढ़ की हड्डी के छिद्र अथवा कपाल में प्रविष्ट होते हैं; तो फिर बाहिर का रक्षक आवरण उन पर नहीं रहता। अब पट्ठों के डोरों की कोमलता का हाल सुनो, वह ऐसे कोमल होते हैं, कि उन में से कईयों का केन्द्र इञ्च का $\frac{1}{12000}$ भाग होता है। और एक तीव्र अणुवीक्षण के बिना उन का देखना सम्भव नहीं।

हराममग़ज़ १५ इंच से अठारह इंच तक लम्बा होता है, और एक बड़े छिद्र में से जो कपाल के नीचे होता है, मस्तिष्क में चला जाता है, अथवा यूं कहो कि मस्तिष्क से जा मिलता है, इस के दो भाग होते हैं, जिन के विषय में यह विचार है, कि एक भाग देह के एक छोर को विषयों का समाचार पहुंचाता है, और दूसरा देह को दूसरी ओर को।

अब स्वयं मस्तिष्क का वृत्तान्त वर्णन करते हैं; यह तो तुम जानती हो, कि एक बड़ी सी डिबिया में जिस को खोपरी (कपाल) कहते हैं, यह सुरक्षित होता है, और कपाल की दृढ़ता का प्रसंग पहिले कर चुके हैं, इस के सिवा भेजे की सुरक्षा के लिये तीन आवरण और होते हैं। पहिले आवरण को जो सब से ऊपर है, कड़ा पर्दा कहते हैं, क्योंकि यह कड़ा होता है; दूसरे को इस की कोमलता के कारण मकड़ी का जाला

कहते हैं, और तीसरे को कोमल आवरण, इन सब के भीतर भेजा रहता है, क्या जाने तुम ने किसी जन्तु का मस्तिष्क देखा होगा, यदि नहीं देखा, तो आओ, उस का वृत्तान्त हम से सुनो, जिस भान्त अखरोट के भीतर गिरी होती है,केवल इसी भान्त भेजा कपाल के खानों में होता है, और जिस प्रकार गिरी मुड़ी हुई गुञ्जल सी होती है, इसी भान्त मस्तिष्क भी मुड़ा हुआ, और अपने ऊपर आप कई वल खाये होता है, परन्तु इस के बलों का वर्णन करना वड़ा कठिन है, इस लिये ठीक है, कि तुम इस का चित्र २१ नं० के चित्र में देख लो,उस में यह तुमें स्पष्ट प्रतीत हो जायेंगे।

बड़ा मस्तिष्क श्वेत और अंडे के रूप का होता है, और इस के तीर सूक्ष्म रेखाओं के कारण,कुछ २ गंधले वर्ण के होते हैं। छोटा मस्तिष्क श्याम वर्ण होता है, और उस का रूप अण्डाकृति होता है, और बड़े मस्तिष्क के नीचे लगा होता

है, इस से मिला हुआ जात्यायत मस्तिष्क है, क्योंकि यह लंबाई में अधिक, और चौड़ाई में कम होता है, इस लिये जात्यायत मस्तिष्क कहते हैं; सच पूछो तो यह भाग हराममगज़ का ही भाग है, इस को कपाल के भीतर आया हुआ हराममगज़ ही कहते हैं, और यह तो तुम जानती ही हो, कि हराममगज़ रस्सी की भान्त गोल होता है; वक्र उभरे हुए भाग, जो चित्र में दिखाई देते हैं, यह मस्तिष्क की सलवटों वा पेचों के बल हैं। मस्तिष्क का और हाल वर्णन करने से पहिले हम तुमें यह बता दें, कि पहिले ही पहिले इस का चित्र कैसे

चित्र नम्बर २१

(ब म) बड़ा मस्तिष्क

(छ म) छोटा मस्तिष्क

(ह म) हराममगज़

(म स भ) जात्यायत ब्रह्माण्ड
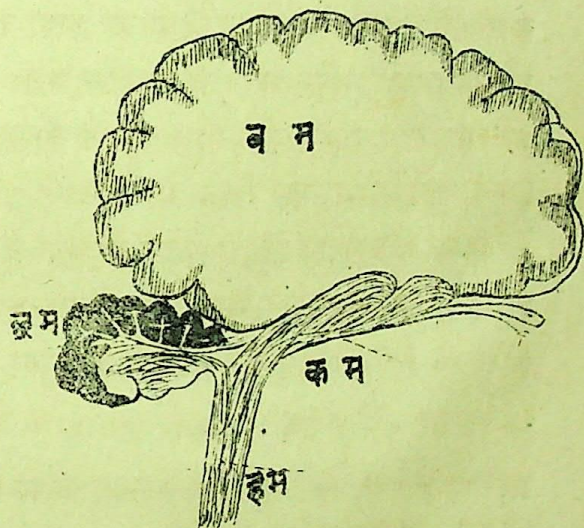
चित्र नम्बर् २१ पृष्ठ २६४

खिंचा गया था, कि तुमें प्रतीत हो जाय, कि मनुष्य की समग्र देह की वातें जानने में अंगरेज़ी डाक्टर कितना ध्यान और निपुणता से काम करते हैं, और इन का सारा यत्न केवल इस आशा पर होता है, कि ज्ञान प्राप्त हो जाने से रोगों की चिकित्सा कर सकेंगे, और संसार में दुःख पीड़ा कम हो जायगी।

यह मूर्ति इस भान्त वनाई गई थी, कि पहिले मनुष्य के मस्तिष्क का एक ऐसा टुकड़ा चीरा गया था, कि उस के आरपार प्रकाश आ जा सकता था, फिर बड़ी सावधानता से यह टुकड़ा शीशे पर जमा कर मैजिक लेंटर्न (Majic Lantern) में रक्खा गया था, क्या जाने तुम में से कई स्त्रियों ने इस लेंटर्न (Lantern) का वृत्तान्त सुना होगा, अंग्रेजों के बच्चों का तो यह बड़ा खेल है, परन्तु कदाचित् तुम ने इस का वृत्तान्त न सुना हो; इस लिये हम वर्णन करते हैं, यह एक कृष्ण लालटैन होती

है, पुलिस के सिपाहियों की लालटैन की भान्त इस का शीशा गोल होता है, और भेद केवल इतना होता है, कि यह शीशा दोनों ओर से बाहर को उभरा हुआ होता है। दृष्टि के विषय में तुम पढ़ चुकी हो, कि शीशे के ऐसे टुकड़े में जो दोनों ओर उभरा हुआ हो, यह सामर्थ्य होती है, कि उन किरणों का प्रकाश जो इन में से आता जाता है, सामने के पर्दे अथवा भीत पर डाल देता है, इस लिये दीपक और लैन्स (Lens) के बीच में चित्र का शीशा रक्खा जाता है, जिस में से प्रकाश निकलता है, जब किरणें चित्र में से होकर बाहर आती हैं, लैन्स (Lens) उन को इकट्ठा कर लेता है, और पर्दे पर डाल देता है, इस प्रकार सब प्रकार के सुन्दर चित्र दिखाए जा सकते हैं, और जब हंसाने वाले चित्रों का समय आता है, तो बालक भले ही टह २ कर हंसते हैं; इस सारे कौतुक के लिये केवल एक दीपक जादू का दर्पण

और शीशे का लैन्स आवश्यक है, अब तुम समझ सकती हो, कि किस भान्त वह दर्पण जिस पर मस्तिष्क की एक सूक्ष्म कटी हुई तह जमी हुई थी, एक मैजिक लेण्टर्न (Majic Lantern) में रक्खा गया था, और इस ठीक २ चित्र असल से कई गुणा बड़ा था, पर्दे पर ऐसे सौन्दर्य्य से डाला गया था, कि सहस्र मनुष्य के लगभग जो मस्तिष्क की व्याख्या सुन रहे थे, उन्हों ने मस्तिष्क का सारा व्यौरा स्वयं निज आंखों से इस भान्त देख लिया, कि मानो उन की दृष्टि कपाल के भीतर जा रही थी। शोक की बात है, कि हम तुमें ऐसा चित्र दिखा नहीं सकते, और एक स्वाभाविक रङ्गीन चित्र के पलटे केवल एक छोटा सा चित्र स्याही और लेखनी का खिंचा हुआ दिखा सकते हैं, इस सारे वृत्तान्त के सुनाने से हमारा प्रयोजन यह था, कि तुम समझ जाओ, कि यह सारी बातें जो तुम सीख रही हो; यूं ही गपशप नहीं, वरञ्च वास्तव और सच्ची बातें

हैं; मस्तिष्क के वर्णन में असंख्य सूक्ष्म बातें हैं, यदि हम वह सब वर्णन करें, तो तुम सुनती २ घबरा जाओगी, इस लिये केवल इतना ही बहुत है; कि बड़े मस्तिष्क और छोटे मस्तिष्क और जाल्यायत मस्तिष्क से तुमें कुछ ज्ञान हो जाय।

अब हम तुमें बड़े मस्तिष्क की मनोहर बातें सुनाते हैं; पहिली बात यह है, कि यह सिद्ध हो चुका है, कि जितना कोई निपुण और मंझा हुआ होता है, उतने ही उसके मस्तिष्क के बल अधिक गहरे और उलझे हुए होते हैं, इस का कारण यह है, कि चित्र में देखो, कि इन पेचों के चारों ओर अत्यन्त सूक्ष्म काली रेखा हैं, यह रेखा एक भूरे रङ्ग की तह के स्थान खेंची गई हैं, जो आधे इंच के लगभग चौड़ी हैं, और सारे मस्तिष्क की छोरों पर होती हैं, और जहां२ सलवटें हैं, वहां से यह तह नीचे को धस गई है। सो जितने बल अथवा सिलवटें अधिक होंगी,

उतना ही यह भूरा तीर अधिक होगा, यही मस्तिष्क का काम करने वाला भाग है, इस भूरे माद्दे में लाखों छोटे २ पट्ठों के परमाणु होते हैं; जो केवल आंख से दिखाई नहीं देते; अणुवीक्षण से दिखाई देते हैं, इन का स्वरूप गोल है, इन के भीतर कड़ा गूदा होता है, और इसके भीतर और एक बीज सा होता है। इन्हीं नन्हें २ पट्ठों के परमाणुओं के द्वारा हम देखते हैं, स्वाद चखते हैं, सुनते हैं, संूघते हैं; और वस्तुओं को छूकर जान जाते हैं, परन्तु यह नहीं बता सकते, कि किस भांत यह सब कुछ होता है, इस लिये जितने अधिक बल मस्तिष्क में होंगे, उतना ही यह भूरा माद्दा अधिक होगा, और उतना ही मस्तिष्क अधिक बातें प्रतीत कर सकेगा, क्योंकि उस में मस्तिष्क के परमाणु अधिक होंगे, कभी तुम ने यह भी विचारा है, कि तनिक वस्तु के विषय गोचर होने से मस्तिष्क में कितना काम आपड़ता है, हम इस

का एक बड़ा सीधा सा दृष्टान्त देते हैं, जब एक बालक अपनी उंगली में सूई चुभो लेता है, तो चाहे उसका व्रण बहुत ही छोटा हो, परन्तु फिर भी सूई किसी न किसी नाड़ी में अवश्य चुभ जाती है, क्योंकि हमारी देह में करोड़ों नाड़ियें हैं, बिजली की भान्त वरञ्च उस से भी अधिक स्फुर्ति से यह छोटासा धागा; जो आंख से दिखाई नहीं देता, मस्तिष्क में संदेश पहुंचाता है, और बालक को प्रतीत होता है, कि सूई चुभ गई है, फिर मस्तिष्क ऐसी शीघ्रता से सैंकड़ों नाड़ियों के द्वारा पट्ठों की नाडियों को आज्ञा पहुंचाता है, कि घायल उंगलियों को मुंह तक ले जाये, जिव्हा की नाड़ियें उसे चूसें, इसी भान्त आंख देखें आंसू बहें, और फेफड़े चीखें; फिर उन में से से प्रत्येक नाड़ी मस्तिष्क की ओर संदेश उलटा भेजती है, कि हुक्मों का बर्ताओ होगया है, क्योंकि बच्चा अपनी चीखें सुनाता है, अपने आंसू देखता है,

और प्रतीत करता है, कि मेरी जिव्हा उंगलियों को चूस रही है। तनिक विचार तो करो, कि एक छोटे से अंग के द्वारा मस्तिष्क में कष्ट का संदेश पहुंचते ही कितनी हलचल मच गई। अब मान लो, कि बच्चे ने आप अपनी उङ्गली में सूई नहीं चुभोई, वरञ्च उसके किसी साथी ने चुभो दी, फिर तो और भी बड़ा जोश खरोश होगा, क्रोध ईर्षा मुक्कों का तानना और शत्रुता के विचार उत्पन्न होंगे, और यहां तक नौबत पहुंचेगी, कि युद्ध रोकने के लिये हम को कहना पड़ेगा, कि बस २ तनिक सूई चुभ जाने से इतना क्रोध नहीं चाहिये।

परन्तु क्रोध के उत्पन्न होने में कुछ संशय नहीं, और तनिक कोई वस्तु चुभने से जो कुछ हल-चली मस्तिष्क में मच जाती है, उस के विषय में यह उदाहरण बहुत ही लघु है, वरञ्च तनिक ध्यान से भी ऐसा ही मच जाया करता है। यथा जब तुम चुभना पड़ती हो, तो उस से भी तुमारे म-

स्तिष्क में एक वारगी कितने ही प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं, यद्यपि तुम चार अक्षरों का एक शब्द देखती हो, परन्तु उस से उङ्गली सूई और बहते हुए रुधिर का विचार आजाता है, और साथ ही पीड़ा का भी विचार आजाता है, और यदि कभी सूई तुमारे चुभ चुकी है, तो इस की पीड़ा स्मरण होजाती है, और ऐसा प्रतीत होने लगता है, कि मानो तुम किसी घर में हो, और उन्हीं मनुष्यों को देख रही हो, जो उस समय विद्यमान थे, क्या जाने उन में तुमारी मां भी थी, और तुम को स्मरण होजाता है, कि उस ने किस प्रेम से तुमारी उंगली को बांधा था, और उस को मरे हुए चाहे कई वर्ष हो गये हों, परन्तु उस का स्वरूप तुमारी आंखों के सामने फिर जाता है, और जब तुम को उसका प्रेम और चिकित्सा का विचार आता है, तो तुम्हारी आंखों से आंसू निकल पड़ते हैं। यह सारी बातें केवल इसलिए

हुई, कि तुम्हारी आंख के क्रोध ने तुमारे मस्तिष्क को बताया, कि इस स्थान चार अक्षर सु, भ, न, अ लिखे हुए हैं। ऊपर के दृष्टान्त से चाहे तुमने यह समझा होगा, कि इस से केवल हमारे ही पक्ष में विचार उत्पन्न होते हैं, और पिछला वृत्तान्त स्मरण आजाता है। अच्छा अब मानलो, कि तुम ने किसी पुस्तक में जैसा इसी पुस्तक में पढ़ा है, कि सूई के चुभने से पीड़ा क्यों होती है, सो इन चार अक्षरों से तुम्हारे मन के आगे पट्ठे हराम मग़ज़ और भेजे की मूर्ति खिंच जायगी, बहते रुधिर से वह सब बातें जो रुधिर के विषय में तुम ने पढ़ी हैं, स्मृत हो जांयगी, इसी प्रकार और कितनी बातों का विचार भी आ जायगा। अब तुमें स्पष्ट प्रतीत होगया होगा; कि जो मनुष्य अपना अथवा और लोगों का वा वस्तुओं का जितना अधिक वृत्तान्त जानता होगा, उस के विचार उतने ही अधिक विस्तृत होंगे, अथवा यूं कहो कि

नेत्र की नाड़ी के चार अक्षर चु, भ, न, अ देखने के तुल्य यत्किञ्चित् और साधारण सी बात से इसके मस्तिष्क में बड़ी हल चल मच जायगी।

भला क्या तुम समझ गई हो, कि बुद्धिमान् पढ़े लिखे और उत्तम विद्वान् लोगों में, कम विद्वानों की अपेक्षा भूरा किनारा क्यों अधिक होता है, और इस के कारण मस्तिष्क के परमाणु क्यों अधिक होते हैं ? सुनो ! इस का कारण यह है, कि इन को उस की आवश्यकता अधिक होती है, और नियम है, कि जितना अधिक काम करना हो, उस के लिये उतने ही अधिक काम करने वाले चाहियें। चाहे मस्तिष्क का व्योरा, उस के साथ विचार का सम्बन्ध ऐसा कठिन और गूढ़ विषय है, कि उस में दृढ़तर कोई बात कहनी सम्भव नहीं। परन्तु बहुधा ऐसा प्रतीत होता है, कि जितनी हम नयी बातें सीखते हैं, उतने ही अपने वर्तने के लिये मस्तिष्क के नये अणु भी बना लेते हैं।

यह अनुमान बड़ा आश्चर्य है, और आगे चल कर हम फिर प्रसंग करेंगे, इस समय हम छोटे मस्तिष्क का वर्णन आरम्भ करते हैं। यह भी मुड़ा हुआ होता है, और एक पीत छोर उस के चारों ओर होता है, इस के बहुत गुच्छे नहीं होते, वरंच पुस्तक के पृष्ठों की भान्त तहें होती हैं। इस की अधिकतर आश्चर्य बात यह है, कि इस के बीच के श्वेत भाग का स्वरूप, जैसा तुम चित्र में देखती हो, सर्वतः एक ऐसे पेड़ का सा है, कि जिस में बहुत सी टहनियां लगी हों। अभी तक यह बात ठीक २ तौर पर प्रतीत नहीं, कि छोटे मस्तिष्क के ऊपर क्या बात निर्भर करती है, यह कौनसे कर्तव्य पूरे करता है; परन्तु, इतना विदित है, कि नाड़ियों से नियमाऽनुसार ठीक२ काम कराने में इस को बहुत कुछ सामर्थ्य है, क्योंकि यदि इसे किसी प्रकार का विघ्न पहुंचे, तो पट्ठे मनुष्य के अधीन नहीं रहते।

अब जात्यायत मस्तिष्क का वृत्तान्त सुनो; यह तो तुमें बता चुके हैं, कि यह हराममग़ज़ का बढ़ा हुआ भाग होता है, इस में भी कुछ संदेह नहीं, वह सब पट्ठे जो श्वास लेने में नाड़ियों को शिक्षा देते हैं, मस्तिष्क के इसी भाग के अधीन हैं, श्वास दिन रात चलता रहता है, चाहे हम जागते हों, चाहे सोते हो, और हमें इस का तनिक समाचार नहीं मिलता। जात्यायत मस्तिष्क हमारे लिये यह सब प्रबन्ध करता है, परन्तु हमें विदित नहीं, कि किस भान्त करता है, और यदि मस्तिष्क का यह छोटा सा टुकड़ा व्यर्थ जाय, तो उसी समय मनुष्य मर जाय, दिल का धड़कना बन्द हो जाता है, और फेफड़े काम नहीं करते। यह भी विचार है, कि बोल चाल और २ असंख्य चेष्टा जो निकलने छींकने आदि के लिये होती हैं, जात्यायत मस्तिष्क के ही द्वारा होती हैं।

मनुष्य की देह में जो काम मस्तिष्क करता है, यहां तक तो वह तुमारी समझ के योग्य था, यद्यपि शोक है, कि यह बहुत ही थोड़ा है, परन्तु इस से आगे बढ़ाना व्यर्थ है, क्योंकि वह तुमारी समझ से बाहिर है। यह समझ रखना बहुत है, कि पट्ठे मस्तिष्क और स्मृति के विषय में अभी तक विद्वानों की एक सम्मति नहीं, किसी नास्तिक का कुछ विचार है, और उसी के सामने दूसरे का कुछ और; परन्तु इस बात को सब मानते हैं, कि छोटी २ बातों से अधिक जीवन का भेद किसी को प्रतीत नहीं।

मस्तिष्क के क़द और नींद के साधनों की कुछ मनोहर बातें वर्णन करने से पहिले हम चाहते हैं, कि तुमें प्रतीत हो जाय, कि जिस प्रकार हरामग़ज़ के प्राय दो भाग हैं, और प्रत्येक भाग में से देह की उसी ओर के आधे भाग की ओर नाड़ियें जाती हैं, उसी प्रकार मस्तिष्क से ले कर

सिर के पीछे तक एक गहरा छिद्र है, जो मस्तिष्क के दो भाग करता है, सो बड़े मस्तिष्क के दो भाग हैं, दायां और बायां। इसी भान्त छोटे मस्तिष्क और जात्यायत मस्तिष्क के भी।

यह एक आश्चर्य बात है, कि स्त्रियों का मस्तिष्क पुरुषों के मस्तिष्क की अपेक्षा बहुधा छोटा होता है, यथा पुरुष के मस्तिष्क का भार प्राय डेढ़ सेर अथवा एक सौ बीस तोले होता है, और स्त्री का मस्तिष्क केवल १०८ तोले; निसंदेह इस का कारण कुछ न कुछ तो यह भी है, कि हर देश में स्त्रियें मनुष्यों की अपेक्षा छोटी होती हैं, परन्तु इस का कारण कुछ २ यह भी है, कि सहस्रों वर्ष से स्त्रियों को मनुष्यों की अपेक्षा बहुत कम विद्या सिखायी जाती है, क्योंकि देखा गया है, कि असभ्य जातियां में मनुष्य और स्त्रियों के मस्तिष्क प्राय तुल्य २ होते हैं,इस का कारण यही है, कि उन लोगों में पुरुषों को स्त्रियों की अपेक्षा

कुछ अच्छी शिक्षा नहीं होती, और दोनों मूर्ख होते हैं, और स्त्रियें पुरुषों का बहुत काम करती हैं,।

यह परीक्षा हम को क्या सिखाती है ? निश्चय यह सिखाती है, कि यदि हमारे लड़के और भाई, जहां तक उन से हो सकता है, शीघ्र २ परीक्षोत्तीर्ण हो रहे हैं, और नयी २ विद्या सीख रहे हैं, परन्तु हम जो उन की मांएं और बहनें हैं, अपने लिये नवीन मस्तिष्क के अवयव बनाने के लिये कुछ कष्ट नहीं उठातीं,इस लिये पुरुष विद्या में कहीं आगे बढ़ जायेंगे, हम उन से कहीं पीछे रह जायेंगी ; और उन के योग्यता के सामने हम सर्वतः मूर्ख प्रतीत होंगी, यह विचार निस्सन्देह बड़ा ही भयानक है, क्योंकि इस से एक बुद्धिमान् परमविद्वान् पुरुष एक मूर्ख स्त्री को अपने घर का पूरा २ अधिकार जैसा कि स्त्री को होना चाहिये किस भान्त दे देगा ।

यदि तुम्हारी इस वर्तमान अवस्था को सुधारना सम्भव न होता, तो तुमें इस ओर लगाना हीं असम्भव था, परन्तु नहीं, यह वात असम्भव नहीं, तुम में से प्रत्येक में यह शक्ति है, कि अपने लिये नये मस्तिष्क के अवयव बनाओ, और इसी भान्त मस्तिष्क की उन्नति के साथ ही अपने जीवन को उन्नति और विस्तार दो।

जब हम हिंदुस्तान की लड़कियों और स्त्रियों को मस्तिष्क से अधिक काम लेने को कह रहे हैं, यह आवश्यक है, कि सुघड़ स्त्री को एक बात की ओर ध्यान दिलावें। जो इस के लड़कों के साथ सम्बन्धित है, कई लोग मस्तिष्क से इतना काम लेते हैं, कि मस्तिष्क थक जाता है, और बुद्धिमान् समझ वाले बच्चे विशेष करके ऐसी भूल में पड़ जाते हैं। यद्यपि मस्तिष्क के सिवा देह में कोई ऐसा अङ्ग नहीं, जिस को हम स्वयं उन्नति कर सकते हैं, परन्तु हमें स्मरण रखना चाहिये, कि

हम इस को इतना ही बिगाड़ भी सकते हैं, फेफड़ों और दूसरे अवयवों में यह शक्ति है, कि जब आप बहुत काम करने से निकम्मे हो जाते हैं, तो और अवयवों से अपना काम निकालते हैं, परन्तु मस्तिष्क में यह सामर्थ्य नहीं, क्योंकि फेफड़े जिस मलिनता को आप नहीं निकाल सकते, उसे त्वचा और गुरदों से निकलवाते हैं, परन्तु मस्तिष्क किसी के सहारे नहीं, और यद्यपि इसका हमारी सारी देह पर अधिकार है, परन्तु यदि इसे तनिक चोट लग जाय, तो देह का प्रत्येक भाग बिगड़ जाता है। हम कितने ही हिंदुस्तानी लड़कों को देखते हैं, कि पतली २ टांगें हैं, छोटी २ छाती पीले २ मुख, और झुकी हुई पीठ, इस का कारण क्या है? यही है कि मस्तिष्क अपने कामों में अतिशय कर के उपस्थित रहा है, और देह को ठीक रखने का उसे अवकाश नहीं मिला, टांगों की मछलियों को कभी फिरने चलने की आज्ञा नहीं हुई, पीठ

कुबड़ी इस लिये होगई, कि मस्तिष्क को पुस्तकें बहुत ध्यान से पढ़नी पड़ीं, और मुख इस लिये पीला पड़ गया, कि मस्तिष्क थका मांदा था, कि आमाशय को भोजन के लिये प्रेरणा न कर सका, निस्सन्देह सावधान रहना बड़ी अच्छी बात है, परन्तु ऐसी सावधानी चूल्हे में जाय, जिस से समय से पहिले मरना पड़े, इस से एक और बात भी निकलती है, और वह यह है, कि मनुष्य को नींद की आवश्यकता क्यों होती है।

तुम को तो नींद एक बड़ी सामान्य सी बात दिखाई देती होगी, जैसा कि पहिले हम कई वार वर्णन कर चुके हैं, परन्तु इस प्रकट में सामान्य सी बात में एक बड़ा भेद है, नींद क्या वस्तु है, एक प्रश्न है, जिसे बुद्धिमान् लोग वर्षों से सोच रहे हैं, परन्तु तुम सैंकड़ों वरंच सहस्रों वार सोई होगी, परन्तु तुमें यह विचार कभी न आया होगा, कि नींद में भी कोई ध्यान के योग्य बात है।

जैसा—इस का क्या कारण है, कि नींद में हम कुछ नहीं सुनते, चाहे कि शब्द के तरंग हमारे कानों में निरन्तर जाते हैं ? रकाब की सी छोटी हड्डी, शब्द को सुनने वाले इन्द्रिय तक पहुंचाती है, और वह इस का समाचार मस्तिष्क को देता है, फिर न सुनने का क्या कारण है ? ज्ञाल्यायत और छोटा और बड़ा मस्तिष्क परमाणुओं से भरे हुए विद्यमान हैं; परन्तु समाचार को कोई नहीं सुनता, सहस्रों परीक्षाओं से यह भी विदित होगया है, कि इस में श्रवणेन्द्रिय के अंग का कुछ दोष नहीं, इस बालक की ओर देखो, जो तुमारे सामने सोया पड़ा है, इस को पुकारो, यह तो नहीं उठता, परन्तु यदि कहीं इसके गाल पर मक्खी बैठी है, तो यह अपना नन्हां सा हाथ उठा कर उसे उड़ा देता है, इस का हृदय भी वैसा ही धड़कता है, इस के फेफड़े श्वास ले रहे हैं, और भोजन जो इसने अभी खाया है, इस के

आमाशय में पच रहा है, इन सब कामों के लिये आवश्यक है,कि सब इन्द्रिय अपना २ काम करते हों, इस के कान में ऊंचे बोलो, ऐलो ! अब तो यह चौंक कर उठ बैठा, इस से सिद्ध होता है, कि श्रवणेन्द्रिय का दोष कुछ नहीं, समाचार पहुं-चाने वाली तार बर्क़ी में तो कुछ दोष नहीं,परन्तु समाचार को पुस्तक पर चढ़ाने के लिये कोई नहीं, तुम में से बहुतेरी स्त्रियों ने ऐसे मनुष्यों के विषय में सुना होगा, जो नींद में चलते हैं, उठ खड़े होते हैं, वस्त्र पहिर कर बाहर चले जाते हैं,और २ बहुत से काम करते हैं, परन्तु बे ध्यान रहते हैं, यदि शीघ्र ही उन्हें फिर लिटा दिया जाता है, तो प्रात जब उठते हैं, तो उन्हें तनिक चेत नहीं होती, कि रात को क्या हुआ था, चाहे वह बहुत काल तक बातें करते रहे हों, अब तुम ने देखा कि नींद जिसे तुम ने सामान्य सी बात समझी हुई थी, कैसी कठिन बात है।

अब तनिक स्वप्न की ओर ध्यान करो, कि वह क्या वस्तु है ? हम को तो स्वप्न में ऐसा प्रतीत होता है, कि मानो हम सचमुच देख रहे हैं, सुन रहे हैं, बोल रहे हैं,चल रहे हैं, खा रहे हैं, परन्तु सचमुच अपनी शय्या पर चुपचाप लेटे हुए होते हैं, कई वार यह भी होता है, कि हम ऐसा स्वप्न देखते हैं, कि हम स्वप्न देख रहे हैं, अर्थात् स्वप्न में स्वप्न देखते हैं, भला यदि यह भेद नहीं, तो क्या है ? निस्सन्देह इस में बुद्धि चकित है, यदि हम इस का कारण साफ २ समझ सकते, तो बहुत सी बातें हमारी समझ में आजातीं।

हम केवल इतनी बात पक्की रीति से जानते हैं, कि नींद इस समय आती है, जब मस्तिष्क में रुधिर पहिले की अपेक्षा कुछ कम होजाता है, और बिना निद्रा के सारी देह घिस जाती है, क्योंकि जब मस्तिष्क को विश्राम न मिले, तो यह देह को वश में नहीं रख सकता, चाहे हम अपने

थके हुए अवयवों को बिछौने पर डाल दें अपनी थकी हुई आंखों को बन्द करलें, और अपने कानों में कोई शब्द न आने दें। परन्तु यदि मस्तिष्क जागता रहेगा, तो जब हम सवेरे उठेंगे, वैसे ही थके हुए होंगे। हम इस साधारण नींद की इन मनोहर बातों से जो कहने में साधारण सी वस्तु दिखाई देती हैं,पृष्टों के पृष्ट भर सकते हैं, परन्तु जो कुछ इस के विषय में वर्णन कर चुके हैं, वही इस बात के प्रकट करने के लिये यथेष्ट है, यद्यपि नींद सामान्य वस्तु है,परन्तु यह साधारण सी वस्तु नहीं, और इसके सामान्य होने का हम को ईश्वर का धन्यवाद करना चाहिये।

यदि नींद ऐसे समय पर आती है, जब मस्तिष्क में रुधिर न्यून होजाता है,तो इस से यह परिणाम निकलता है, जो कि वस्तु रुधिर के संचार को अधिक करती हैं, और विशेष करके मस्तिष्क में अधिक रुधिर पहुंचाती हैं, वह हम

को सोने न देंगी, इसी भान्त मस्तिष्क का कड़ा काम जिस के लिये आवश्यक है, कि मस्तिष्क में रुधिर पहुंचे, हम को जागता रक्खेगा, क्योंकि काम करने में रुधिर के दानें व्यय होते हैं, दुःख सुख राग द्वेष में भी जो हमारे हृदय में भर जाते हैं, और जिसे हम भूल नहीं सकते, वा दिल पर से उठा नहीं सकते, ऐसा ही फल होता है।

इस बात के समाप्त करने से पहिले हम एक और बात संक्षेप रीति से वर्णन करते हैं, और वह यह है, कि देह को पीड़ा किस भान्त प्रतीत होती है, भला पीड़ा क्या वस्तु है ? यह बड़ा कठिन प्रश्न है, परन्तु हम इतनी बात अच्छे प्रकार से जानते हैं, कि यदि किसी इन्द्रिय को कुछ चोट पहुंचती है, तो वह मस्तिष्क को समाचार भेजता है, और हम को पीड़ा प्रतीत होती है।

परन्तु इन्द्रिय इस भान्त काटा जाय, कि मस्तिष्क से उस का कुछ सम्बन्ध न रहे, तो चाहे

हम इस को किसी प्रकार का आघात पहुंचायें, पीड़ा किंचित् नहीं प्रतीत होती। जैसा माथे में एक पट्ठा है, जिस से भवों को बड़ी ही पीड़ा प्रतीत होती है; निपुण वैद्य इस पट्ठे को इस प्रकार काट देते हैं, कि इस का सम्बन्ध मस्तिष्क से तनिक नहीं रहता, और उसी समय पीड़ा जाती रहती है, और कभी नहीं हो सकती; इसी भान्त यदि तड़ित्यन्त्र को स्टेशन से पहुंचने के पहिले काट डाला जाय, तो कोई समाचार अपने स्थान पर नहीं पहुंच सकता, अब तुम यह प्रश्न करोगी, कि यदि यही बात है, तो डाक्टरों को उचित है, कि अंग काट कर प्रत्येक स्थान की पीड़ा रोक दिया करें; इस का कारण यह है, कि स्वयं पीड़ा कोई बड़ी वस्तु नहीं, यह तो केवल मस्तिष्क को इस बात का समाचार मिलता है, कि कहीं बिगाड़ हुआ है; यदि तुमारे आमाशय में बड़ी पीड़ा है, तो वास्तव में इस का अर्थ यह

है, कि आमाशय इस बात के विरुद्ध है, कि तुम इसे कच्ची दाल से न भरो, जिसे वह पचा नहीं सकता ; यदि यह पीड़ा न होती, तो हम कभी न जानते, कि देह के कौन से भाग बिगड़े हुए हैं, और जब तक रोग असाध्य न हो जाता, कोई युक्ति न कर सकते, इस से हमें यह शिक्षा मिलती है, कि हमें पीड़ा की ओर से उपेक्षा न करनी चाहिये। इस में ९ वार तो अवश्य पीड़ा इसी लिये होती है, कि हम ने कोई मूर्खता का काम किया हं।

हम तुमें देह के भिन्न २ काम करने की रीतियें केवल इस अभिप्राय से सिखा रहे हं, कि तुम पर यह प्रकट कर दें, कि मूर्खता के कामों से हमें किस भान्त बचना चाहिये, और बचने के लिये किस भान्त यत्न करना चाहिये ; क्योंकि यदि तुमें विदित हो जायगा, कि देह को क्या कुछ करना पड़ता है, तो तुमें यह उचित नहीं, कि उन पांच निधियों को जिन का प्रसंग तुम पहिले भाग में

पढ़ चुकी हो, बर्ताओ में न लाकर प्राकृतिक कामों को आवश्यकता से बढ़ कर कठिन बना दो। ... परमेश्वर का प्रसाद है, यदि इस के बनाये हुए देह को तुम उस से कुछ लाभ उठाने न दोगी, तो उस में तुमारा अपना ही दोष है; तुमारी देह को बहुत सा पवन, बहुत सा प्रकाश, स्वास्थ्यकर भोजन, और शुद्ध जल चाहिये, नहीं तो इसे हानि आयगी, और हानि पहुंचने से तुम को भी कष्ट होगा।

इतिश्री सुशिक्षितास्त्री समाप्त हुई॥